तृतीय संस्करण हेतु लेखकीय उद्‌बोधन–

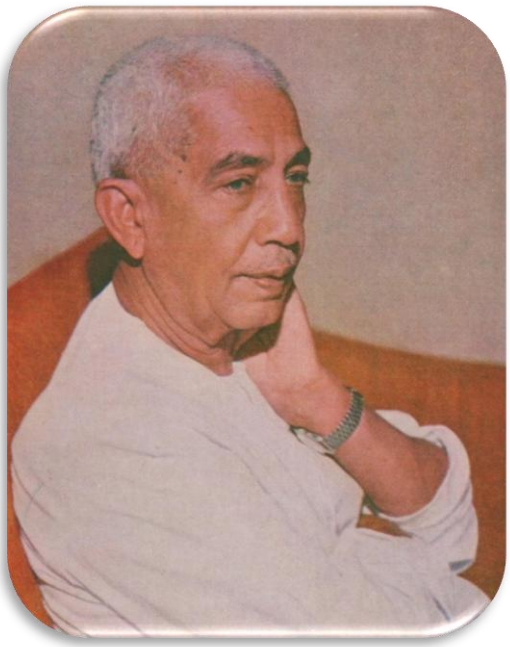

गांव से गांधी तक

वह सामाजिक रूप से पिछड़े, पद–दलितों, एवं किसान मजदूरों का मसीहा हमारे बीच नहीं है। 29 मई 1987 को उनके महाप्रयाण करने के बाद उनके राजनैतिक उत्तराधिकार को लेकर अनेक अनर्गल समाचार आते रहे हैं, लोग अपने दावे–प्रतिदावे करते रहे हैं। उनके जीवन काल की सच्चाइयों को न समझकर उन्हें राजनीति के दल–दल में अपने साथ दिखाने को और उनकी विरासत को समेट कर अपना कद बढ़ाने का प्रयास तमाम राजनेता करते रहे हैं। इन सभी घटनाक्रमों ने मेरी आत्मा और मानसिकता को झकझोरा कि मैं अपनी लेखनी को पुनः आगे बढ़ाऊँ। इसी श्रृंखला में मैंने **द्वितीय संस्करण में** कुछ भ्रंतियों को दूर करते हुए अपनी बात को आगे बढाया था। मैं आज पुनः इस – **तृतीय संस्करण (दिसम्बर, 2015) को आपके बीच समर्पित कर रहा हूँ,** जिसमें स्मृतियों के झरोखे से कुछ नई पाठ्न सामग्री को समाहित किया गया है।

अपने प्रेरणास्रोत सभी महानुभावों के प्रति पुनः कृतज्ञता व्यक्त करते हुए मैं अपेक्षा करता हूँ कि भविष्य में भी यदि उनकी प्रेरणा के प्रकाशपुंज ने मेरे मनोमस्तिष्क को आलोकित किया तो इस आज़ाद भारत में गाँधी जी के सपनों को साकार करने का व्रत लेने वाले उनके एकमात्र प्रवर्तक चौ0 चरण सिंह की विचारधारा को गाँव के गलियारे और शहर की हर झोंपड़ी तक पहुँचाने का कार्य अपनी लेखनी से आगे बढ़ाता रहूँगा।

दिनांक : 23 दिसम्बर 2015

डॉ. कृष्ण शेखर राना

चेयरमैन / प्र.निदेशक

कृष्ण ग्रुप ऑफ कॉलेज्ज, उ.प्र., राजस्थान

सत्यपाल मलिक
पू. केन्द्रीय मंत्री
राष्ट्रीय उपाध्यक्ष, भाजपा

भारतीय जनता पार्टी
Bharatiya Janata Party

...गांव से गांधी तक

चौ0 चरण सिंह ने भारतीय राजनीति में एक नया दौर शुरू किया, वह था–किसानों, कामगारों, पिछड़ों एवं समाज के सभी कमजोर तबकों को जोड़कर सियासत के शिखर पर पहुंचाने का। इसके लिए उन्होंने कोई हिंसक क्रांति का शंखनाद नहीं किया वरन् गांधीवादी तरीके से मूक क्रांति का तरीका अपनाया। वह गाजियाबाद के छोटे से गांव नूरपुर से चलकर लखनऊ की सियासत पर पहुंचे फिर शनैः शनैः दिल्ली की सियासत के अगुआ बन गए। उन्होंने पिछड़ों को न्याय दिलाने के लिए गृहमंत्री के रूप में मंडल आयोग का गठन किया। लेकिन वह चाहते थे कि इसपर गंभीर मंथन करते हुए लागू किया जाय ताकि समाज के पिछड़े तबकों को बराबरी की हिस्सेदारी मिल सके। अतः चौधरी साहब का व्यक्तित्व अनूठा था जिसको लेखनीबद्ध करने का पहला प्रयास डॉ0 के. एस. राना ने 1984 में किया था। तब मेरी उपस्थिति में ही एक समारोह में डॉ0 राना की पुस्तक 'चौ0 चरण सिंह : व्यक्तित्व एवं कृतित्व' का विमोचन मा0 अटल बिहारी वाजपेयी एवं श्री चन्द्रशेखर जी की उपस्थिति में चौ0 चरण सिंह जी ने दिनांक 23 दिसम्बर 1984 को मावलेकर हॉल, नई दिल्ली में किया था।

अब पुनः डॉ0 के. एस. राना की नयी पुस्तक नये कलेवर में 'चौ0 चरण सिंह : गांव से गांधी तक' आपके हाथों में है। डॉ0 राना ने चौ0 साहब के सानिध्य में रह कर राजनीति की है और वह अनेक घटनाओं के प्रत्यक्षदर्शी भी रहे हैं इसलिए आगामी पुस्तक बहुत प्रमाणिक होगी। डॉ0 राना के पास भाषा तथा तर्क दोनों की शक्ति है, इसलिए हर प्रकार से यह पुस्तक उपयोगी भी सिद्ध होगी। यह जरूरी है कि किसानों को अपने मसीहा के जीवन की जानकारी पीढ़ी दर पीढ़ी मिलती रहे।

डॉ0 राना इस प्रयास के लिए धन्यवाद के पात्र हैं। मेरी तमाम शुभकामनाऐं!

सत्यपाल मलिक

(सत्यपाल मलिक)

16/11/2015

11, अशोक रोड, नई दिल्ली–110 001, दूरभाष : 23005700 फैक्स : 23005787
11, Ashok Road, New Delhi-110 001, Phone : 23005700 Fax : 23005787

प्रथम संस्करण में –

अपनी बात

चौधरी चरण सिंह का जीवन और कार्य मनुष्यमात्र की निःस्वार्थ सेवा का उज्ज्वल आदर्श है। वह अपनी 84 वर्ष की लम्बी जीवन डगर को तय करने में एक ही ऊँचे, उदात्त लक्ष्य को आगे लेकर चलते रहे और वह लक्ष्य था किसानों को हर प्रकार के दमन और शोषण से उन्मुक्त कर उनकी हर प्रकार की आज़ादी व स्वावलम्बन की ख़ातिर तथा ग्रामीण विकास के गाँधीजी के 'अधूरे सपने' को पूरा करने की खातिर संघर्ष करना।

महान चिंतक एवं विद्वान, जनता पार्टी के सच्चे जन्मदाता, गाँधीवाद के प्रवर्तक और इतिहास में किसान सत्ता के एक मात्र पक्षधर, ग्रामीण भारत के प्राण और उच्चकोटि के प्रखर नेता–**लौहपुरुष चौ. चरण सिंह,** ने जिन विशिष्ट परिस्थितियों में अपना राजनैतिक जीवन बिताया और स्वाभिमान को ठेस न पहुँचने दी उसका विशद् विवेचन इस पुस्तक में संजोया गया है। साथ ही अपने राजनैतिक व आर्थिक अनुभवों व अध्ययन के द्वारा भारत के गाँवों की गोधूलि के उखड़ते वनफूलों के जीवन को पुनःस्थापित करने में जिस महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया, उनकी इस आर्थिक नीति का भी संक्षिप्त विवेचन किया गया है तथा चौ.चरण सिंह के व्यक्तित्व/कृतित्व एवं विचारधारा से सम्बद्ध सामग्री प्रस्तुत की गई थी।

इस पुस्तक को पढ़कर पाठक इस अजेय व्यक्तित्व को करीब से परख सकेंगे, जो गाँव की गोधूलि से निकलकर अपने राजनैतिक जीवनपथ की लम्बी यात्रा कर आज भी भारत के दिल का दीदार कराता है– और विश्व के राजनैतिक रंगमंच पर अपना महत्वपूर्ण दखल रखता है। यदि इस कार्य में सफलता मिली तो आगे चौधरी साहब की विचारधारा के विभिन्न पहलुओं पर पृथक से पुस्तक लिखने का साहस जुटा सकूँगा, मात्र यही मेरी जिज्ञासा है।

पूर्व प्रकाशित पुस्तक के लिखने और पूरा करने में जो महानुभाव मेरे लिए प्रेरणा–स्रोत एवं सहयोगी बने रहे, उनको बधाई का टुकड़ा देकर मैं अपने से अलग नहीं कर सका क्योंकि वह मेरे अपने थे और आज भी वह मेरे अपने ही हैं, किन्तु उनके नाम का एक बार स्मरण कर अपने प्रिय पाठकों से उन्हें परिचित कराना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

इस पुनीत कार्य को मेरे हाथ में लेने के बाद बार–बार प्रोत्साहित, करने और आगे बढ़ने के लिए मार्ग–दर्शन का रूप जो कार्य, भाई उदयन शर्मा, प्र. सम्पादक रविवार, बडे भाई श्री सत्यपाल मलिक–सांसद, श्री राजेन्द्र चौधरी, श्री अजय सिंह प्रधान सम्पादक 'असली भारत' एवं सेतु माधवन सचिव–किसान ट्रस्ट नई दिल्ली ने किया उस कृतज्ञता का बोझ मैं अपने सिर से जीवन भर नहीं उतार सकूँगा। अपनी भाव–भंगिमा से मुझे समय–समय पर यथेष्ट दिशा–निर्देशन करते हुए पुस्तक को पाठकों के बीच रहे– प्रस्तुत करने में मुझे जो आत्म सन्तुष्टि प्राप्त हुई है उसके सुफल फलदाता, सर्वश्री डॉ. यशवीर सिंह, दिल्ली, विश्वविद्यालय, डॉ. आर. के. शर्मा, डी. लिट., अध्यक्ष हिन्दी विभाग, कश्मीर

विश्वविद्यालय, श्रीनगर; डॉ. एम. एल. शर्मा, दिल्ली विश्वविद्यालय; डॉ. डी. डी. कौशिक, (एल–एल. डी), मेरठ विश्वविद्यालय; डॉ. ए. पी. माथुर, आगरा विश्वविद्यालय; प्रो. एन. पी. सिंह, प्रवक्ता, विधि संकाय, बरेली कॉलेज, बरेली।

इसके अतिरिक्त जिन राजनैतिक लोगों ने मुझे यथेष्ट सहयोग दिया– सर्वश्री मुलायम सिंह यादव, नेता विरोधी दल, विधान परिषद, उ.प्र.; श्री शरद यादव सांसद, अध्यक्ष, राष्ट्रीय युवा लोकदल, श्री के.सी. त्यागी (उपाध्यक्ष), मा. ओमपाल सिंह, (राष्ट्रीय सचिव–किसान कामगार संगठन), श्री मोहन प्रकाश (प्रदेश अध्यक्ष, राजस्थान)।

–डॉ. कृष्ण शेखर राना
आगरा कॉलेज, आगरा विश्वविद्यालय,
आगरा।

चरण सिंह
अध्यक्ष
लोक दल

दूरभाष : 376344
374644
12, तुगलक रोड,
नई दिल्ली–110011

श्री वीरेन्द्र पाल सिंह
मुद्रक एवं प्रकाशक
नीरज प्रकाशन, कचहरी रोड,
मेरठ (उ0प्र0)

आपका पत्र दिनांक 18 अक्टूबर 1984 प्राप्त हुआ, धन्यवाद आपने डॉ0 के0एस0 राना द्वारा लिखित पुस्तक "चौ0 चरण सिंह: व्यक्तित्व एवं कृतित्व" के प्रकाशन हेतु मेरी सहमति माँगी है। उक्त पुस्तक की मूललिपि डॉ0 राना ने मुझे दिखाई थी। इसमें अधिकांश तथ्यों का जो समावेश उन्होंने किया है, वह मेरे व्यक्तिगत संवादों परही आधारित है। अत: मुझे इस पुस्तक के प्रकाशन पर कोई आपत्ति नही है।

मुझे प्रसन्नता है कि एक युवा शिक्षाविद ने चिंतन एवं मनन के धरातल पर उतरकर पूज्य बापू के मिशन के लिये समर्पित राजनेताओं के विचारों को तर्क संगत एवं रचनात्मक तरीके से आवाम तक पहुँचाने हेतु अग्रणीय भूमिका निभाने का संकल्प लिया है। डॉ0 राना के इस प्रयास एवं मेहनत के लिये मैं उनको बधाई देता हूँ।

सस्नेह,

चरण सिंह

दिनांक- 30·10·1984

-- चरण सिंह

चौ॰ चरण सिंह पूर्व प्रधानमंत्री पुस्तक के विमोचन समारोह में बोलते हुए मंचासीन दायें से श्री चन्द्रशेखर, श्री अटल बिहारी वाजपेयी, श्री सतपाल मलिक एवं लेखक डा॰ के॰ एस॰ राना

प्रथम संस्करण की भूमिका

गाँधीवाद के प्रणेता

हमारे देश की 70 करोड़ आबादी का पाँचवाँ भाग बेरोज़गारी के भयानक दानव से जूझ रहा है। इस तीस वर्ष की आज़ादी में जहाँ बेरोज़गारी ने गाँवों के सामाजिक जीवन को उजाड़ा है, वहीं गरीब हरिजन–गिरिजन वर्गों को न खेत मयस्सर होने दिया है न फूँस की झोंपड़ी, इसके विपरीत समाज का एक विशिष्ट वर्ग बना दिया है जहाँ एयरकंडीशण्ड प्रासाद बन गये हैं। कुल मिलाकर ऐसा लगता है कि भारत राष्ट्र अब विस्तृत और अवाह गरीबी में कराहते हमारे करोड़ों लोगों की इंसान की तरह जिंदा रहने की अतृप्त कामना पर, मुट्ठी भर हमारी कुल आबादी के केवल दो फीसदी लोगों की खुशहाली और ऐशो–आराम की अट्टहासपूर्ण ज़िन्दगी का उपसर्ग बनकर रह गया है। करोड़ों वाट लट्टुओं की बिजली की जगमगाहट, इस विशिष्ट वर्ग के घर आँगन, दुकान और कल–कारखानों द्वारा उत्पीड़ित हैं। आज देश के 92 प्रतिशत लोगों की कुल सम्पत्ति दो–ढाई सौ रुपया से भी कम है, जबकि औद्योगिक क्षेत्र के चोटी के पैंतीस घरानों की कुल सम्पत्ति तीन सौ से चार सौ के गुणांक में बढ़ गई है। सरकारी आँकड़ों के अनुरूप ही देश में 14 अरब रुपयों का काला धन है तथा इससे भी कहीं अधिक धन विदेशी बैंकों में जमा है। बड़े–बड़े अधिकारियों के गगनचुम्बी सुसज्जित बंगले, होटल और कारें उनके जीवन भर की कमाई से हज़ारों गुना अधिक हो गए हैं।

आज़ादी के बाद राष्ट्र के कर्णधारों और देश की दिशा निर्धारण के ठेकेदारों ने विकसित मानव की आवश्यकताओं को **बापू के 'आखिरी आदमी'** की पहुँच और पकड़ से इतना दूर कर दिया है कि वह घास–फूँस की टूटी झोंपड़ी में रहने, कंदमूल फल खाने और वल्कल धारण करने की आदिवासी सभ्यता की ओर मुड़कर ही गुज़ारा कर सकेगा। फिर भी गाँधी के नाम की दुहाई देकर वोट–बटोरने और अपनी राजनीति का धन्धा चलाने वाले इन ढोंगी राजनेताओं को कभी इस ओर सोचने को मजबूर नहीं होना पड़ा। उन्हें योरोप व अमेरिका से आयातित अर्थ–व्यवस्था ही प्रभावित कर पायी जिसको पं० नेहरु देश के लिए छोड़ गए थे और इसने देश को बद् से बद्तर स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है, वही भारी औद्योगीकरण का भूत हमारे राजनेताओं के मस्तिष्क पर छाया रहा है। जो कि पूज्य महात्माजी के मार्ग का पूर्णतः परित्याग है। **आज के इस अन्धकार में कोई प्रकाश की किरण दिखाई देती है तो वह चौधरी चरण सिंह का आर्थिक दर्शन ही है, जो सही अर्थों में गाँधीवाद की वापसी का एक निर्भीक क़दम है।**

चौधरी साहब की लम्बी जीवन–डगर के अनुभवों ने आज देश को कुछ दिया है तो वह है पूज्य महात्मा गाँधी के सपनों का भारत बनाने का संकल्प क्योंकि नेहरु परिवार के शासन ने उस महान आत्मा के महत्त्व को नेस्तनाबूत करने में कोई कसर नहीं उठा छोड़ी। अतः उस महा–मानव की विचारधारा को पुनःस्थापित कराने के लिए चौधरी साहब ने जो जोखिम उठाये हैं और प्रयास जुटाये हैं वह संघर्षों की एक लम्बी कहानी है, इसी के कारण आज चौधरी साहब गाँधीजी के एकमात्र प्रवक्ता के

रूप में देश के मानचित्र पर छाये हुए हैं। किन्तु चन्द स्वार्थी राजनैतिक दलालों और पूँजीपतियों के रहनुमाओं द्वारा आपके व्यक्तित्व और विचारधारा को लेकर जो विकृतियाँ और भ्रांतियाँ पैदा की गई हैं उन्हें दूर करते हुए चौधरी साहब की सच्ची तस्वीर आवाम एवं शिक्षित वर्ग के बीच उतारने का कार्य हमारे बुद्धिजीवी वर्ग को करना चाहिए था वह अब तक लगभग नगण्य है। इसी भावना के तहत् मेरे अनुज डॉ. के. एस. राना ने चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व और विचारधारा से जुड़े तमाम पहलुओं को इस पुस्तक में समाहित करने का अनूठा प्रयास किया है, अस्तु यह एक सफल प्रस्तुति है। यदि पाठकों ने उत्साहवर्धन किया और समय तथा परिस्थितियों ने सहयोग किया तो इस शृंखला को आगे बढ़ाते हुए, इस 'अभिनव गाँधी' के जन–संघर्ष की मुहिम में हम जैसे कलम के अनेक पुरोधा, युवा शिक्षाविद् मेरे अनुज डॉ. राना के सहयोगी बनकर सामाजिक क्रांति के महायुद्ध में एक मजबूत हथियार की भूमिका निभा सकेंगे।

दिनांक – 02 अक्टुबर 1984

उदयन शर्मा

प्रधान सम्पादक, 'रविवार'

कलकत्ता

1. व्यक्तित्व समीक्षा

गाँधीवादी झरोखों से चौधरी चरण सिंह एक दर्शन :

उत्तर प्रदेश की वीरानी मिट्टी में जन्मा चरण सिंह, देश के पिछड़े मज़दूर किसानों का चौधरी बन गया, अंग्रेज़ों की फौज में लड़ने वाले बहादुर जावानों को पैदा करने वाले परिवार का एक सदस्य, अंग्रेज़ों को चुनौती देकर स्वाधीन भारत का मंत्री बन गया और कांग्रेस, जिसके लिए खून–पसीना बहाया, उसी की जड़ खोदने वालों का नेता बन गया। आज़ादी के प्रवर्तक, महात्मा गाँधी के उत्तराधिकारियों द्वारा जब अलग नीतियाँ चलाने का प्रयास किया गया तो उनको नागपुर में चुनौती देने वाला एक प्रदेश का अदना सा मन्त्री, राष्ट्रनेता बन गया। अनेक कष्ट उठाकर जनता पार्टी का निर्माण करने वाला उत्तर भारत का नेता उसी के पतन का कारण बन गया, इन सवालों का जवाब क्या है? इनके पीछे रहस्य क्या है? यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से हमारे मस्तिष्क में उठता है। इसका उत्तर उन व्यावहारिक कर्त्तव्यों के साथ सीधा जुड़ता है जिन्हें आज देश की सभी जनतांत्रिक, धर्म निरपेक्षता एवं गाँधीवादी शक्तियों को पूरा करना है। अतः चौ. चरण सिंह के व्यक्तित्व को परखने के लिए गाँधीजी के व्यक्तित्व की ओर नज़र दौड़ानी होगी।

भारत के साम्यवादी गाँधीजी पर सीधे प्रहार करते रहे हैं किन्तु फिर भी कुछ सुलझे हुए बुद्धिजीवी कम्युनिस्टों ने महात्मा के महत्व को स्वीकारा है, केरल के भू. पू. मुख्यमन्त्री एवं सी. पी. एम. नेता नम्बूदरीपाद ने लिखा है– ''गाँधीजी की भूमिका का जबरदस्त महत्व इस बात से भी आँका जा सकता है कि काँग्रेस के सभी गुट और सभी धारायें तथा कम्यूनिस्ट पार्टी को छोड़कर लगभग सभी राजनैतिक पार्टियाँ अपनी नीतियों का समर्थन करने के लिए गाँधीजी के नाम का उपयोग करती हैं। दूसरे, गाँधीजी एवं उनकी शिक्षा की भूमिका का महत्व आँकने की कोशिश करना जनवादी आन्दोलन को और भी विकसित करने में बहुत बड़ा व्यावहारिक महत्व रखता है''[1]।

यद्यपि श्री नम्बूदरीपाद ने कम्यूनिस्ट पार्टी को गाँधीजी के घेरे से बचाने का प्रयास किया है किन्तु वस्तुस्थिति ठीक इसके विपरीत है।

महात्मा गाँधी एक समूचे ऐतिहासिक युग पर पूरी भव्यता से छाये रहे और अन्ततः उग्र राजनैतिक विवादों की स्थिति में भी भारत के साम्यवादी पाँचवे दशक के अन्त में उन्हें राष्ट्रपिता मान बैठे। ठीक इसी प्रकार चौ० चरण सिंह का राजनैतिक महत्व आँका जा सकता है कि कांग्रेस के विपक्षी दलों में चरण सिंह के बिना राजनीति चला पाना सम्भव नहीं है, अतः कभी साम्यवादी उनके निकट आकर उन्हें किसान मज़दूरों का हितैषी स्वीकार करते हैं तो कभी भारत में घोर प्रतिक्रियावादी माने जाने वाले जनसंघ एवं स्वतंत्र पार्टी के लोग उनके निकट आने के बहुमुखी प्रयास जुटाते हैं, जबकि स्वयं चौधरी चरण सिंह इन दोनों खेमों के बीच में हैं और बापू की दिशा देश को देने का प्रयास कर रहे हैं।

इससे यह बात जाहिर होती है कि बुनियादी मतभेदों के बावजूद भी भारतीय राजनीतिज्ञ उनका आलोचनात्मक दृष्टि से किन्तु श्रद्धापूर्वक नाम लेते हैं और जहाँ उनके तथा उनकी उपलब्धि के बारे में अक्सर जो वाह–वाही की जाती है, चाहे उसमें से काफी कुछ उन्हें स्वीकार न हो किन्तु सभी उनका ऐसे व्यक्ति के रूप में सम्मान करते हैं जिसने स्वयं को अन्य हर किसी से बढ़कर आम जनता के जीवन से मूल बद्ध किया और भारतीय राजनीति के वातावरण को इतना बदला जितना किसी एक व्यक्ति द्वारा सम्भव नहीं हो सकता। यह काम आसान नहीं है, इतिहास के अन्य विशिष्ट व्यक्तियों की भाँति चौधरी जी का व्यक्तित्व भी बड़ा जटिल रहा है, उनके गाँधीवादी दर्शन को किन्हीं आसान सूत्रों द्वारा वर्णित करके सन्तोष नहीं किया जा सकता, जैसे यह कह दें कि 'चौधरी वह व्यक्तित्व है जिसने किसान आन्दोलन को प्रेरणा प्रदान की और जनता को शोषण के विरुद्ध संघर्ष के मैदान में उतरने को जागृत किया।' या यह कहकर कि 'चौधरी संघर्ष से कतराने वाला व्यक्ति था जिसने किसान मज़दूरों को क्रान्तिकारी धारा में बढ़ने से रोक कर बड़ा अनर्थ किया।' अथवा यह कह कर कि 'चरण सिंह, सत्ता के इर्द–गिर्द मँडराने वाले सुविधा–जीवी नेता थे जो किसानों की कीमत पर अपनी महत्वाकाँक्षा पूरी करते रहे।' या ऐसी ही अन्य कोई बात कहकर अध्याय समाप्त नहीं किया जा सकता।

चौधरी का जीवन विविध घटनाओं से भरपूर रहा है। उनके द्वारा लिखित गाँधीवादी दर्शन का परिमाण बहुत व्यापक और व्यावहारिक है उसमें देश के सामान्य जीवन के उत्थान के लिए एक ठोस आधार प्रस्तुत किया गया है, किन्तु दुर्भाग्यवश अभी तक इस प्रयास को गम्भीरता से पहचानने का यत्न नहीं किया गया है। अभी तक इस बात के सन्दर्भ में जो कुछ सुनने को या पढ़ने को मिला है उसमें या तो एकपक्षीय प्रशस्तियाँ हैं या अति सरल एकपक्षीय आलोचनायें हैं। अतः इन दोनों ही भटकावों से बचने का पूर्ण प्रयास किया जाना चाहिए और कुछेक सवालों पर दृष्टिपात कर चौधरी के व्यक्तित्व की समीक्षा की जानी चाहिए।

जीवन मूल्यों में आदर्शवाद की स्थापना चौधरी चरण सिंह के राजनैतिक जीवन की साधना है वह कठिनतम स्थिति में भी इस साधना से विचलित नहीं हुए। जिन आदर्शों की स्थापना के लिए उन्होंने आवाज़ उठाई, अपने स्वयं के जीवन में उन्होंने उन आदर्शों का कठोरता से पालन किया। सत्य–साधना, कर्त्तव्य–निष्ठा, आचार–विचार की शुद्धता और जीवन की सरलता से जन–जन की साधना का जो व्रत उन्होंने लिया उसका हर स्थिति में उन्होंने आद्योपान्त दृढ़ता के साथ पालन किया।

साधारण जीवन जीना और आडम्बरों तथा सुख सुविधाओं से बचकर चलना, जातिवाद के विरुद्ध लड़ाई हेतु पार्टीजनों को प्रोत्साहित करना, आदि कुछ निर्धारित मान्यताओं के आधार पर उनका जीवन चलता रहा। आपके इसी आदर्शवाद का प्रतिफल है कि आज गाँव के ग़रीब मज़दूर किसान सभी अपने अधिकारों की लड़ाई के लिए तत्पर हैं और चरणसिंह को किसान अपना चौधरी मानते हैं।

सामाजिक और आर्थिक मोर्चे पर आपके कुछ विचारों को प्रतिक्रियावादी मान लिया जाय, जैसा कि साम्यवादी गाँधीजी के लिए भी मानते हैं; तो भी हमें यह तथ्य स्वीकार करना होगा कि चौधरी ने अपने दृष्टिकोण से एक महान् क्रान्तिकारी घटना को जन्म दिया, देहातों के खामोश जनसमुदाय को

आपने राष्ट्रीय जनवादी आन्दोलन के निकट ला खड़ा किया और जिस कार्य को आज तक भारत के समाजवादी या साम्यवादी 30 वर्ष के दौरान नहीं कर पाये उसे चौधरी ने अपने पचास वर्ष के राजनैतिक जीवन के अन्दर काफ़ी सीमा तक पूरा करने का प्रयास किया है और भारतीय किसानों के जागरण को एक विशेष रूप प्रदान किया। यद्यपि डॉ. राम मनोहर लोहिया ने ग्रामीण ग़रीब जन समुदाय को आज़ादी के बाद आन्दोलन में उतारने में बड़ी प्राणवान भूमिका अदा की थी किन्तु आज़ादी की दूसरी लड़ाई के बाद प्रचंड जन–जागरण का श्रेय व्यक्तिगत रूप से किसानों के इस चौधरी को ही देना पड़ेगा। क्योंकि डॉ. लोहिया अथवा बाबू जय प्रकाश आम ग्रामीण जनता के बीच अपनी जड़ें उतनी गहरी नहीं बना पाये थे जितनी चौधरी ने अल्प समय में ही बना ली। उन्होंने राजनैतिक जनवादी आन्दोलन की दुर्बलताओं को पहचानकर दूर करने का भरपूर प्रयास किया और अभी तक असंगठित ग्रामीण ग़रीब जनता को आन्दोलित कर वस्तुतः राष्ट्रीय और सर्व–वर्गीय आन्दोलन का स्वरूप तैयार कर दिया। यह स्थिति यद्यपि ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अधिक प्रचारित हुई मगर उन्होंने समूचे मज़दूर वर्ग और मेहनतकशों के अन्य समुदायों के प्रति भी यही नीति अपनायी जिससे देश के मझोले और छोटे स्तर के लोगों की संगठित शक्ति बनाकर उसे सशक्त राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए खड़ा किया जा सके।

जनता पार्टी के शासनकाल में चरण सिंह गृहमन्त्री होकर भी किसानों के सवालों पर ही उलझे रहे, पार्टी की नीति निर्धारित कराने और योजना को अन्तिम रूप देने तथा बजट बनाने के समय हर किसान मज़दूर और ग्रामीण जीवन के सवाल पर चौधरी साहब ने विवाद खड़े किये और प्रतिफलस्वरूप जनतापार्टी में उनके तमाम वरिष्ठ नेताओं से टकराव हुये तथा ऐसे दौर से उन्हें गुज़रना पड़ा जब वह अकेले पड़ गये किन्तु उनकी आवाज़ बन्द न हुई, वरन् वह जनशक्ति लेकर कड़क होती गयी और सहयोगियों से उनके टकराव तेज़ होते गये। इन टकरावों का अध्ययन गहराई से करने पर ही चौधरी का उचित वस्तुगत तथा हर पहलू से मूल्यांकन किया जा सकता है। जनतापार्टी में घटित यह अन्तर्द्वन्द्व उस वस्तु–स्थिति की अभिव्यक्ति थी कि कतिपय मूल्य मान्यताओं के बारे में चौधरी कितने अडिग और सजग रहे।

लेकिन जनता पार्टी का नेतृत्व पूँजीपतियों के एजेण्ट मोरारजी और जगजीवन जैसे लोगों के हाथ में आ गया था अतः उसका प्रयोग उस वर्ग के हितों के लिए किया जाने लगा। इसीलिए इस वर्ग और उसके राजतन्त्र की सीधी टक्कर आम जनता के अगुआ चरण सिंह के साथ होने लगी। इस सत्ता में एक दुःखद अनुभव और हुआ कि पूँजीपति वर्ग के सत्तारूढ़ व्यक्तिगत प्रतिनिधि (मन्त्री, विधायक, सांसद आदि) राज्य एवं जनता के मत्थे अपने मित्रों, रिश्तेदारों और लगुओं, भगुओं के घर भरने लगे। अतः शासन में भ्रष्टाचार पनप गया। चरण सिंह ने स्वयं को ऐसी स्थिति में ला खड़ा किया कि मन्त्रिमण्डल से पृथक किये गये, जिससे उनकी राह का रोड़ा कुछ समय के लिए तो हट गया। किन्तु दिल्ली में उमड़ी 35 लाख की भीड़ रूपी जनशक्ति ने 23 दिसम्बर 1978 को चरण सिंह का वर्चस्व कायम कर दिया और जनशक्ति से घबड़ाकर एवं राज्य सत्ता फिसलती देखकर मोरारजी ने पुनः चरण सिंह को उप–प्रधानमन्त्री एवं वित्त–मन्त्री बनाकर मन्त्रिमण्डल में शामिल किया।

इस मोड़ पर हम **चौधरी की दो भूलों** पर दृष्टिपात करते हैं **प्रथम** उन्होंने जिन सवालों को लेकर पार्टी में लड़ाई शुरू की थी उनका ख्याल किये बिना मात्र पार्टी एकता की बात सोचते हुए मंत्रिमण्डल में जाना स्वीकार कर लिया। **दूसरे** आम जनता के जिन सवालों को लेकर एक वर्ग चेतना द्वारा जो देश में किसान–मज़दूर शक्ति को खड़ा किया था उसे सीधे आन्दोलन में उतरने से रोकने का अप्रत्यक्ष प्रयास किया अर्थात् राष्ट्र–व्यापी एकता एवं शक्ति तैयार की किन्तु उसे जुझारू प्रवृत्ति का बनाकर राष्ट्र–व्यापी आन्दोलन के लिए सक्रिय भूमिका निभाने को प्रेरित नहीं किया। इन्हीं दो बातों के कारण समाजवादी और साम्यवादी समीक्षक चरण सिंह को प्रतिक्रियावादी और पूँजीवादी की संज्ञा देने लगे। यद्यपि इन प्रश्नों का उत्तर चौधरी का व्यावहारिकतावाद है, यह सत्य है कि चौधरी ने ग़लतियाँ की जिससे किसान शक्ति को संगठित रूप में आन्दोलन में न उतारा जा सका, किन्तु ग़लती तो महात्मा गाँधी से भी हुई थी, मसलन प्रथम विश्वयुद्ध में गाँधीजी ने फौजी रंगरूट भर्ती कराकर अंग्रेज़ों की ओर से लड़ाई लड़ी, पुनः दूसरे महायुद्ध में स्वयं को अलग कर लिया। अतः वहाँ भी प्रश्न उठ सकता था कि जो चीज़ें प्रथम विश्वयुद्ध में नैतिक थीं वह दूसरे में अनैतिक कैसे बन गईं? इसी प्रकार गाँधीजी ने पहले सरकारों का बहिष्कार कराया था किन्तु बाद में उनमें शामिल होने के लिए दबाव डाला। आखिर क्यों? चौरी–चौरा कांड में जनता से हिंसा हो गयी तो आन्दोलन रोक दिया गया किन्तु अंग्रेज़ों द्वारा अनेक बार गोलीबारी की गई तो उनका यदा–कदा समर्थन भी कर दिया। क्या इन सवालों का अध्ययन करने पर सामान्य बुद्धि–विवेक वाला व्यक्ति गाँधीजी से घृणा नहीं करने लगेगा? लेकिन वास्तविकता यह है कि गाँधीजी का व्यापक दृष्टिकोण था, शांतिपूर्ण अहिंसक उपायों से ब्रिटिश साम्राज्यवाद का खात्मा करना, अतः हर चीज़ को वह इसी के अनुरूप कसौटी पर कसते थे।

ठीक यही स्थिति चरण सिंह की भी रही है कि उनके समक्ष, मात्र एक लक्ष्य रहा है– ग्रामीण जन समुदाय का भला करना, अतः उसके लिए उन्हें न चाहते हुए भी सत्ता या विरोध के थपेड़ों से समय–समय पर टक्कर लेनी पड़ी तथा समझौते करने पड़े। उसी में उनकी व्यक्तिगत हानि भी हुई किन्तु फिर भी कुछ उसूलों को सदा बनाये रखा इसीलिए आज उनके प्रबलतम विरोधी भी उनकी कद्र करते हैं।

बहरहाल, चौधरी सपने सँजोने वाले या कल्पना के संसार में मँडराने वाले चिंतक मात्र ही नहीं हैं वरन् वह तो मानव और घटनाओं के सर्जक थे, एक विस्मयकारी व्यक्ति भारतीय धरती के, सांसारिक तथा शक्ति और चरित्र तथा आदर्शों से सम्पन्न असाधारण क्षमतावान मानव, फिर भी वह कभी समाज में वर्ग से ऊपर और वर्गहितों से उदासीन नहीं रह पाये, ईमानदारी की नैतिक अवधारणा के प्रतिपादक के रूप में भी वह सामाजिक शून्य में कार्यरत नहीं रहे। उनके अपने वर्गगत सम्पर्क थे और उससे जुड़ा एक व्यापक दृष्टिकोण, जो उन वर्गगत सीमाओं का अतिक्रमण नहीं कर पाता जिन्हें उन्होंने सहज ही ग्रहण कर लिया। अतः कम्यूनिस्टों का यह दावा कि चौधरी पूँजीपति वर्ग के अस्त्र हैं, सफेद झूठ और मूर्खतापूर्ण वक्तृता है वहीं यह भी कि चौधरी सत्ता के लिए समझौते की खूबसूरती पर ज़ोर देने वाले राजनीतिज्ञ थे। यह बात अधिकतर देखने में आयी है और पूँजीवादी तत्त्व भी समझ चुके हैं कि जनता

के कोलाहल और उथल–पुथल के जज़्बातों को नियंत्रित कर पाने में वह तथा उनके द्वारा समर्पित कोई भी राजनीतिज्ञ पूर्णतः असमर्थ है उस पर नियन्त्रण मात्र चौधरी ही पा सकते थे। इसीलिए पहले चौधरी साहब को खरीदने के अनेक प्रयास इस वर्ग द्वारा किये गये और यत्न में असफल होने पर राष्ट्रीय स्तर पर उनके दल तथा स्वयं के प्रति समाचार पत्रों के माध्यम से अनर्गल आरोप लगाये गये। वह भी क़ामयाब न हुए तो उनके प्रति उपेक्षापूर्ण रवैया अपनाया गया तथा राष्ट्रीय नेता तक मानने से इंकार किया गया। यद्यपि यह सारी कलई तब खुल गयी जब परीक्षा की घड़ियाँ आईं, जनशक्ति के प्रदर्शन या अन्य तरीक़ों से।

1967 से लेकर जब आपने कांग्रेस से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर सरकार का पतन किया और देश का प्रथम विरोधी मंत्रिमण्डल गठित किया और विपक्ष को महत्वपूर्ण स्थान राजनीति में दिलाया तथा तुरन्त चुनाव कराकर एक चौथाई स्थान सीमित साधन शक्ति के सम्बल पर जीत लिए, जनता सरकार के उत्थान से पतन तक जो देश व्यापी क्रान्ति और कांग्रेस की ऐतिहासिकता को दफ़नाने का प्रयास था यह सवाल अनवरत उठता था कि चौधरी अकेला ही आवाम के बीच अपनी अद्वितीय साख के कारण अपने पावन चरित्र की बहुचर्चित निःस्वार्थता एवं भव्यता जो राजनीतिज्ञों के वश से बाहर की बात है, क्रांति की धारा को उल्टी या सीधी किसी भी दिशा में मोड़ सकते हैं और आवाम से ग्राह्य शक्ति के आधार पर कोई भी निर्णय करा सकने की क्षमता रखते थे। इस प्रकार चौधरी का व्यक्तित्त्व गाँधीजी से काफी मेल खाता है, निम्न उद्धरण को देखिये–

"गाँधीजी एक साथ रूढ़िवादी और क्रांतिकारी दोनों ही थे। अनोखी सूझ के साथ लेनिन ने एक बार उनके बारे में कहा कि वह दो विरोधी संसारों के बीच मँडराने वाले ''तोलस्तोय के भारतीय शिष्य'' हैं। उनकी खूबी यह थी कि यदि उनका मिजाज़ ठीक हुआ और परिस्थितियों ने साथ दिया तो वह कोटि–कोटि जनता को आंदोलित कर सकते थे। उनकी खामी यह थी कि वह बीच में ही रूठ जाते थे जिससे संघर्ष को क्षति पहुँचती थी। क्योंकि उनके मन में कुछ विचित्र विरोधाभास थे या यह कहना अधिक समीचीन होगा कि वह साध्य और साधन के अनन्त प्रश्न तथा हिंसा से बचने की समस्या में सर्वाधिक उलझे रहे।"[2]

उक्त व्याख्या चौधरी साहब के व्यक्तित्त्व के अधिकांश लक्षणों को उजागर करती है। आज पाँचदशाब्दी के बाद मुझे उन पुराने शब्दों का स्मरण हो रहा है जो 1 अप्रेल 1928 को जवाहर लाल जी के लिए लिखे गये थे–

"मैं तुम्हारे इस मत का हूँ कि हमें एक न एक दिन धनी लोगों को मुखर, शिक्षित वर्ग को अलग छोड़कर सघन आन्दोलन चलाना पड़ेगा, परन्तु इसका अभी समय नहीं आया है।"[3]

दुर्भाग्य से समय की इन्तज़ारी में जिस प्रकार बापू उलझे रहे और आवश्यक होने पर भी ऐसा आन्दोलन नहीं चला सके ठीक उसी प्रकार चौधरी भी समय के इंतज़ार के शिकार रहे हैं, चाहते हुए भी

राष्ट्र–व्यापी आन्दोलन के लिए जोखिम उठाने का प्रयास नहीं किया जिससे देश में क्रांतिकारी परिवर्तन की उम्मीद जागृत होती।

पटेल के बाद दूसरा फौलादी मानव

सरदार पटेल भारत की एकता और अखण्डता के निर्माता थे, साढ़े चार वर्ष की वह अवधि जिसमें सरदार भारत के उपप्रधानमन्त्री व गृहमन्त्री रहे एक राजनीतिज्ञ के नाते उनकी अनेकानेक उपलब्धियों के लिए उल्लेखनीय है। भारत की राज्य व्यवस्था में उनका सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान देशी रियासतों का विलीनीकरण था। दो वर्ष की अवधि में पाँच सौ से अधिक लगभग अटपटे देशी राज्यों के स्थान पर भारत में एक राजनीतिक भव्य प्रासाद खड़ा करने में जो अद्वितीय सिद्धि प्राप्त की उसके चिरस्थायी स्वरूप ने देश की एकता और अखण्डता के निर्माता की पदवी उन्हें दिलाई। यह एक ऐसा महान् साहसिक कार्य है जिसके समरूप विश्व इतिहास में दूसरा कोई उदाहरण उपलब्ध नहीं है। बस इसी कारण लौहपुरुष और सरदार की ख्याति अर्जित कर गये।

यद्यपि बारदोली सत्याग्रह के दौरान साहसिक नेतृत्व देने के कारण उन्हें सरदार की उपाधि मिली थी जब गेबवालिया टैंक मैदान बम्बई, में अ. भा. कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन के दौरान अपनी रिहाई के तुरन्त बाद शरद बाबू ने खुले मंच से कहा था– ''अब पटेल साहब बारदोली के नहीं इस देश के सरदार हैं।'' किन्तु आश्चर्य इस बात का है कि जिसे इस देश का सरदार मान लिया गया उसे अपने से 14 वर्ष छोटे और प्रत्येक क्षेत्र में गौण योग्यता व कुशलता वाले व्यक्ति का नेतृत्व स्वीकार करना पड़ा। यह महात्मा गाँधी के एक पक्षीय निर्णय और नेहरु परिवार की भव्यता के सामने, पटेल की किसान परिवार के ऊपर थोपी गयी राय थी, यद्यपि उस मृत आत्मा को आज कुछ कहने में मुझे कुछ संकोच हो रहा है, यदि वह जीवित होते तो यह प्रश्न आज राष्ट्रीय स्तर पर एक जबरदस्त बहस का मुद्दा बनाया गया होता कि महात्मा जी ने अपने मस्तिष्क को संतुलित न बनाकर नेहरु के बड़प्पन के समक्ष स्वयं को समर्पित करते हुए एक सरदार जैसे कुशल व्यक्ति को नाजायज़ दबाकर नेहरु के हाथों अपनी विरासत सौंप दी, जिसका परिणाम आज देशवासी भोग रहे हैं। चौधरी चरण सिंह के साथ भी वही हुआ, चौधरी की सादगी, ईमानदारी और दृढ़ता के जो लोग कायल थे उन्होंने जयप्रकाश बाबू को दबाकर मोरारजी भाई का नाम उछाला और लोकतंत्र की दूसरी आज़ादी के बाद नेतृत्व एक पूँजीपतियों के रहनुमा के हाथों सौंप दिया गया, तब तीन वर्ष तक देश टकटकी लगाये उनकी ओर देखता रहा किन्तु कुछ न हो सका। आज़ादी की दूसरी लड़ाई के बाद की सरकार के नेता और प्रथम स्वतन्त्रता के नेताओं में अन्तर मात्र इंसानियत का था। नेहरु जी सत्य को अंततः सत्य मान लिया करते थे और प्रतिद्वन्द्वी को सम्मान दिया करते थे। किन्तु मोरारजी भाई क्रूर और जिद्दी साबित हुए, जिनको इंसानियत छू तक नहीं गयी थी, यही कारण था कि उन्हें बेइज़्ज़त होकर जल्द ही घर वापस जाना पड़ा। इसके बावजूद भी चौधरी ने इस व्यक्ति को सदैव सम्मान दिया और समझौता करके चलने का प्रयास किया। जब किसान दिवस 23 दिसम्बर 1978 के पूर्व चरण सिंह समर्थकों ने गृहमन्त्रालय से चौधरी को हटाने के विरोध में सरकार और नेताओं को अनियन्त्रित गालियाँ देना शुरू कर दिया था तब

उनकी एक ही मान्यता थी– ''मोरारजी मेरे और दल के नेता हैं, उनका अपमान बर्दाश्त के बाहर है।'' चौधरी साहब के अनन्य भक्त राजनारायण तो खुली बग़ावत पर आमादा थे मगर इतनी उपेक्षा और फूहड़ हरकतों के बाद भी चौधरी संतुलित बात करते थे। यह संक्रमण काल सरदार पटेल और नेहरु सम्बन्धों की याद दिलाता है। देखिये–

जब जयपुर में अ. भा. काँग्रेस कमेटी ने पं. नेहरु की आकांक्षाओं के प्रतिकूल प्रस्ताव पारित किया तो सरदार पटेल ही वह व्यक्ति थे जो उसका विरोध करने आगे आये थे और स्पष्ट शब्दों में कहा था कि मैं त्यागपत्र देना बेहतर समझूँगा, पंडितजी की उपेक्षा नहीं।

इस प्रकार चौधरी साहब का यह लक्षण सरदार पटेल के अनुरूप है जो आज की भीषण परिस्थितियों में जीवन्त प्रतीत होता है। जब देश आर्थिक, राजनैतिक पुनरुत्थान के लिए ऐतिहासिक चौराहे पर खड़ा हो तो किसी भी राष्ट्रीय महत्व के प्रश्न पर या राष्ट्र के दलित और पीड़ित वर्ग के उत्थान के प्रश्न पर राजनेताओं को पारस्परिक बहस–मुबाहिस द्वारा प्रश्नों को तय करके किसी निर्णय पर पहुँचना चाहिये, भले ही मूलभूत प्रश्नों पर मतभेद दलगत राजनीति या समान दल में ही क्यों न रहे हों। इस प्रश्न पर चौधरी का मस्तिष्क जितना साफ है उतना भारतीय राजनीति में सरदार के अतिरिक्त किसी का नहीं माना जा सकता। आज बुद्धिजीवी दिल पर हाथ रख कर इस बात को कह सकता है कि चौधरी की यही महानता है, वह भारत और उसके भविष्य के लिए हर सम्भव समझौता करने को तत्पर रहे, चाहे जनता पार्टी के अध्यक्ष का प्रश्न रहा हो; चाहे मन्त्रिमण्डल में प्रतिनिधित्व का प्रश्न रहा हो या प्रधानमन्त्री पद का प्रश्न रहा हो, देश और समाज के हित में उसने सब कुछ त्याग करके दिखाया। किन्तु उन्होंने जिन प्रश्नों पर समझौता नहीं किया वह थे उनके आदर्श उसूल, राष्ट्रीय, ग्रामीण विकास और लोकतांत्रिक मूल्य। यही कारण है कि उन्होंने सिद्धान्तों से समझौता किया होता तो वह इन्दिरा गाँधी के साथ शासन चला सकते थे, जैसा जनता पार्टी ने बिहार और हरियाण में चलाया।

अपने चरित्र के बल पर ही वह वर्तमान व्यक्तित्व देखने के बाद महसूस होता है कि सरदार पटेल के बाद दूसरा लौह पुरुष यदि गृह मन्त्रालय में आया तो वह था– चौ. चरण सिंह। उनका व्यक्तित्व एक ऐसे लौह धातु से बना हुआ था जो अपनी अडिगता से टूट सकता था परन्तु झुकना पसन्द नहीं। फिर जिसमें अपने विचारों को रखने और उन पर अडिग रहने की क्षमता होगी मात्र वही कुशल प्रशासक हो सकता है। उनकी प्रशासनिक क्षमता पन्त जी से भी मेल खाती है। किन्तु गृह मन्त्रालय सँभालने के बाद ही सारे देश से जो चीत्कार सुनाई दिया वह मात्र यही था कि चौधरी साहब पटेल के बाद दूसरे आदमी हैं जो प्रशासनिक दूरदृष्टिता से उनसे मेल खाते हैं।

जहाँ कुछ इतिहासकार इस तथ्य को प्रस्तुत करते हैं कि यह देश का सौभाग्य था जो सरदार स्वतन्त्र भारत के प्रथम गृहमन्त्री बने, जिन्होंने विभाजन में फैली साम्प्रदायिकता की आग से देश को बचाया और कोने–कोने में बनी रियासतों को भारत में मिलाकर एकता का गम्भीर प्रयास किया, जिससे देश की एकता अखण्डता क़ायम रह सकी, जो दुनिया के लिए एक मिसाल है। वहीं इस बात के पक्षधर भी कम नहीं हैं जो इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि आपातकाल की लड़ाई के बाद चौधरी चरण सिंह

जैसा गृहमन्त्री न मिला होता तो स्थिति क्या होती, यह हमारी कल्पना से परे की बात है। चौधरी की प्रसिद्धि एक ऐसे शक्तिशाली और दृढ़ प्रशासक के रूप में हो गयी थी कि लोकतन्त्र के दुश्मन 30 वर्ष से सत्ता के अन्धकार में पले देश के शत्रु, पस्त हिम्मत हो गये। सारे विश्व की निगाहें भारत की ओर थीं। ईर्ष्यालु लोग आशंका व्यक्त कर रहे थे कि नेहरु परिवार के शासन के बाद वहाँ शासन दे पाना किसी के वश की बात नहीं है लेकिन चौधरी साहब ने वह आशंका निर्मूल कर दी।

देश में यह आम चर्चा मिलती है कि यदि समस्यायें न उठतीं तो भारत का अभ्युदय एक सशक्त राष्ट्र के रूप में हुआ होता। उनकी मान्यता है कि पं० नेहरु कुशल प्रशासक नहीं थे, चिंतक, विचारक और स्वप्नदृष्टा अधिक थे। यही बात चौधरी चरण सिंह के बारे में भी कही जाती है कि जनता सरकार के प्रथम प्रधान मन्त्री मोरारजी न होकर चरण सिंह रहे होते तो इन तीन वर्षों में ही देश की तस्वीर बदली नज़र आती या फिर मोरारजी जैसा तानाशाह प्रधान मन्त्री न होता और चरण सिंह को खुलकर काम करने दिया होता तो यह शिकायत का मौक़ा भी न मिलता। गृहमन्त्री के रूप में उन्होंने जिस दृढ़ता का परिचय देते हुए आपातकाल के कारनामों के लिए आयोगों की नियुक्ति की और इंदिरा गाँधी को जेल के सींखचों के दर्शन कराये, उसके बाद तो मानो उनका नाम शेर की भाँति भयानकता के साथ लिया जाने लगा और लोग उन्हें विनोद में 'कमीशन सिंह' के नाम से सम्बोधित करने लगे थे– इससे पूर्व प्रत्येक भारतीय घनघोर निराशा के वातायन में पड़ा सिसक रहा था। भय, आतंक और अनियमितता के जितने भी घिनौने रूप हो सकते थे वह सब श्रीमती इंदिरा गाँधी, सँजय गाँधी और उनकी चाण्डाल–चौकड़ी ने देश के समक्ष प्रस्तुत कर दिये थे। पुलिस के आतंक से आदमी की हैसियत या तो कठपुतली के समान हो गयी थी या वह मात्र सन्देश वाहक के रूप में सत्ता की खुशी और नाराज़गी का भोक्ता बन गया था। स्वार्थियों, आततायियों, लम्पटों की जो निरंकुश फ़ौज़ माँ–बेटे ने मिलकर खड़ी की थी वह जनता सरकार के समक्ष एक गम्भीर चुनौती थी।

इस भयाक्रांत स्थिति से देश को बाहर निकाल कर एक स्वतन्त्र रूप में क़ानून के आधार पर जिस भारत की प्रतिष्ठा चौधरी साहब ने की, वह मात्र इस देश के लिये नहीं वरन् जनतन्त्र प्रेमी किसी भी देश के लिए एक अनुकरणीय उदाहरण है। तुरन्त बाद नौ राज्यों में विधान सभा भंग कर नये चुनाव कराने के लिए उन्होंने दूसरा महत्वपूर्ण लाभकारी निर्णय लिया था जिसके सारे विरोध पार्टी के बाहर और अन्दर से होते रहे।

आज़ादी के तीन दशक बाद जिस नक्षत्र का अभ्युदय हुआ वह अपने कदमों की दृढ़ता, नीतियों की स्पष्टता, कार्य की दूर–दृष्टिता और देश की मिट्टी के विशुद्ध भारतीय चिन्तन से अपनी ओर सबका ध्यान केन्द्रित किये रहा और देशवासियों को सहज ही उनके कुछ कार्यों से सरदार पटेल का स्मरण हो आया और महसूस हुआ जैसे गृह मंत्रालय में सरदार पटेल के बाद टूटी हुई कड़ी फिर जुड़ गयी है। आज़ादी की दूसरी लड़ाई के बाद जयप्रकाश बाबू और आचार्य कृपलानी ने जनता सरकार के प्रथम प्रधान मन्त्री मोरारजी भाई घोषित किये थे। इसके बाद जनता सरकार और उसके नेता के व्यवहार से ऐसा लगा कि यह बहुत बड़ी भूल हो गयी, जे. पी. से। लेकिन देशवासी इतना कहकर शान्त

हो जाया करते थे कि यह तो अतीत की परम्परा रही है, स्वाधीनता के बाद बापू ने भी तो यह भूल की थी, पं.नेहरु को नेतृत्व सौपकर। इस प्रश्न पर देश का बुद्धिजीवी सहमत रहा है, जो देश के उत्थान के प्रति चिंतित रहा है, कुछ लोग जो जातीयता के आवरण में रहते हैं या बड़े घरानों में राजनीति को घसीटने के पक्षधर रहे हैं, मात्र वही पं.नेहरु के प्रधान मन्त्री पद से सहमत रहे हैं। चौ.चरण सिंह जी के गृहमन्त्री के रूप में देश के रंगमंच पर उतरते ही वही पुरानी चर्चा फिर गर्म हो गयी थी। यद्यपि चौधरी साहब व्यक्तिगत रूप से पं.नेहरु का सदैव सम्मान करते रहे किन्तु नीतिगत प्रश्नों पर वह सरदार पटेल के समर्थक रहे हैं, इसीलिए उन्हें एक जाति विशेष का विरोध संवरण करना पड़ा, किन्तु अविचलित रूप से वह इस प्रश्न को उठाते रहे हैं।

ष्ंक ँतकंत इममद हपअमद ंद वचचवतजनदपजल जीपदहे ूवनसक ींअम इममद कपमिितमदज जवकंलण जीम बवनदजतल ूवनसक ींअम `वसअमक उवेज व पिजे चतवइसमउे ंदक जीम चतवइसमउे जींज ूवनसक ींअम तमउंपदमक ूवनसक दवज ींअम ें नउमक जीम उवदेजतवने चतवचवतजपवद जीमल ींअमण ।सस जीम दमू चतवइसमउ जींज ूमतम बतमंजमक इल छमीतन पद जीपे जपउमए ूवनसक दवज ींअम इममद जीमतमण ॅम ूवनसक ींअम ं च्तपउम डपदपेजमतए ीव ीं बसवेम सवदो ूपजी जीम संदकए ीव ें चतंबजपबंस ंदक उवतमवअमत ींक बवदेपकमतंजपवद वित जीम चववत ंदक तिउमतेण ँतकंत च्ंजमस ।दमू जीम तमंस प्दकपंण [4]

इन दो लौहपुरुषों की व्यक्तित्व समीक्षा करते हुए संक्षेप में इतना कह सकते हैं कि सरदार के फौलादी व्यक्तित्व के पीछे महात्मा गाँधी जैसे व्यक्तित्व की नैतिक क्रान्ति और मानवीय उसलों की अटूट शक्ति थी इनका लौह चरित्र, निर्भीक व्यक्तित्व और कठोर किन्तु न्यायप्रिय आधार व्यवहार परम्परा की स्थापना के लिए था, जिसके साथ सत्याग्रह, मुक्ति आन्दोलन और नये भारत को नये सिरे से निर्मित करने का संकल्प था। विदेशी सत्ता से होड़ लेने में सरदार पटेल ने अपने व्यक्तित्व के इस्पाती अंश का जो प्रयोग किया वह एक स्वप्नशील व्यक्तित्व की क्रियाशीलता थी। चौधरी चरण सिंह का कार्यकाल एक स्वप्न–भंग से शुरू होकर अनवरत स्वप्न–भंग की वृत्ति में केन्द्र बिन्दु स्थापित करने की फौलादी तमन्ना के रूप में रहा। सरदार ने जिन परम्पराओं की नींव डाली थीं वह भी इंदिराजी ने ध्वस्त कर दीं और भारत के गृहमन्त्री का अस्तित्व ही निर्मूल बना दिया। सरदार को संविधान एक उपहार स्वरूप प्राप्त हुआ था किन्तु चौधरी को राष्ट्र का सर्वोच्च मर्यादित संविधान घायल, क्षतविक्षत रूप में मिला। सरदार को अवसर था कि वह संविधान की सम्पूर्ण गरिमा को प्रतिष्ठित करके देश को समुज्ज्वल बना सकें। चौधरी की नियति थी कि उन्होंने दो सौ वर्षों के संघर्ष के बाद स्वरत्न निर्मित संविधान की लाश को पुनर्जीवित करके खड़ा कर दिया, यह महान कार्य सरल नहीं है इसके लिए दृढ़ संकल्प चाहिए। चौधरी फौलादी परम्परा मिश्रित वह लोहा था जो तीस साल की अग्निवर्षा में तप कर सीझ गया है और प्रतिक्षण कन्धे पर टँगी लाश को पुनर्जीवित करने का मन्त्रघोष करता रहा।

टिप्पणियाँ

1. ई० एम० एस० नम्बूदरीपाद– गाँधीजी और उनका वाद, पृष्ठ बी–2
2. टी० के० उन्नियन– गाँधी एण्ड फ्री इण्डिया, बम्बई 1956
3. डी० जी० तेंदुलकर– महात्मा, खण्ड 8 पृष्ठ 351–52
4. होमर ए, जैक (सम्पादक) दि गाँधी रीडर पृष्ठ 128

2. जीवनवृत्त

जन्म एवं पारिवारिक जीवन :

आपके जन्म स्थल के बारे में 23 दिसम्बर 1978 को जो उनका 76 वाँ जन्मदिन था अनेक पत्र–पत्रिकाओं ने अलग–अलग विवरण प्रस्तुत किया था और प्रमुखतः दो गाँवों को उनकी जन्म–भूमि पृथक–पृथक लिखा गया था। अतः इसे स्थिर करने हेतु मैं यहाँ उनकी वंशावली का भी संक्षिप्त परिचय दे रहा हूँ।

चौधरी साहब मूलतः तेवतिया वंश के थे जो राजस्थान में अजमेर के आस–पास आज भी भारी संख्या में हैं, इन्हीं में से कुछ लोग बड़ी संख्या में हरियाणा के बल्लभगढ़ में आकर बस गये, चूँकि अजमेर के पास एक बड़ा तेवतगढ़ है उसी से निकास के कारण यह तेवतिया गोत्री कहलाने लगे, हरियाणा, राजस्थान, पंजाब में गोत्र गाँव से ही जाने जाते हैं। बल्लभगढ़ को इनके एक पितामह सरदार बलराम ने बसाया था जो भरतपुर के राजा सूरजमल के राज दरबार के साले थे। 1765 में राजा सूरजमल के पुत्र जवाहर सिंह ने दिल्ली विजय के उद्देश्य से वहाँ के दुर्ग पर आक्रमण किया तो उस समय सरदार बलराम भी उनके साथ तेवतिया लड़ाकू टोली लेकर अग्रिम मोर्चा सँभालने बढ़े और उस महत्वपूर्ण मोर्चे में दिल्ली दुर्ग के फाटक को तोड़ना एक महान् किन्तु अत्यन्त कठिन कार्य बन गया था; क्योंकि फाटक में गढ़ी हुई कीलों से हाथियों के सिर में चोट लगती थी इस प्रकार वह घायल होकर पीछे हट जाते थे और फाटक टूटने से बचा रहता था। तब इसी बहादुर रणबाँकुरे सरदार बलराम ने अपूर्व शौर्य व बलिदान का परिचय दिया। वह स्वयं फाटक के सामने खड़े हो गये और हाथियों ने उनके ऊपर ठोकर मारी तथा फाटक टूटकर पीछे गिर गया, सरदार शहीद हो गये किन्तु लालक़िला फतह कर लिया गया, यह एक ऐतिहासिक विजय थी। इसी वंश द्वारा बल्लभगढ़ में तैवत्य राज्य की स्थापना की गयी जिसके संस्थापक थे राजा नाहर सिंह, जिन्होंने 1857 के विद्रोह में प्रमुख भूमिका अदा करते हुए वीरगति पायी थी।

इन लोगों की बहादुरी से अत्यधिक प्रसन्न और प्रभावित होकर इनको गंगा–यमुना के दुआब और मुगल सल्तनत की रियासत आगरा में बसा दिया गया। इसके कुछ समय पश्चात् इनके पितामह आगरा छोड़कर वहाँ पहुँचे जहाँ आमों की अमराई में भ्रमरों का मधुर गुंजन और कोकिलों की मस्त किलकारियाँ सुनी जाती थीं। काश उस धरती को विदित होता कि यह भारत के भावी कर्णधार के पूर्व पितामह कहलायेंगे तो वह फूली न समाती और चहुँदिश प्रसन्नता का पारावार लहरा जाता। यह था बुलन्दशहर की बुलन्द मिट्टी में बसा गाँव 'भटौना' जहाँ के निवासी आज भी युद्ध–प्रिय, बलिदानी, सेनानियों में गुण सम्पन्न तथा राजनीतिक चेतना के रूप में अग्रणी माने जाते हैं। यह लोग अधिकांशतः फौज में रहकर सरहदों की रक्षा करते आये हैं या धनी–मानी किसान रहे हैं। स्वयं चौ. चरणसिंह जी के ताऊ रघुवीर सिंह, भाई श्याम सिंह और भान्जे गोविन्द सिंह फौज में रह चुके हैं तथा वर्तमान में उनके कई रिश्तेदार फौज में कार्यरत हैं।

अपने परिवार को वहीं छोड़कर चौधरी साहब के पिता चौ. मीर सिंह जो सम्पत्ति बँटवारे के कारण बुलन्दशहर के ही ग्राम नूरपुर में जा बसे थे। इसी नूरपुर की धरती पर दिनांक 23 दिसम्बर 1902 में एक ऐसे नूर का आविर्भाव हुआ जिसके प्रकाश–पुँज से भारत माता का कण–कण आलोकित है, जन जीवन में एक नूतन आशा, विश्वास तथा उत्साह का संचार हुआ है जो कि अपने में ही अभूतपूर्व तथा अद्वितीय है।

हिन्दू–धर्म में पवित्रता की पराकाष्ठा मानी जाने वाली पतित पावनी पुण्य सलिला मंदाकिनी की निर्मल एवं शान्त धारा, साथ ही श्याम वर्ण सरयू नदी के समागम का पवित्र स्थल भारतवर्ष का वृहत प्रखण्ड– 'उत्तर प्रदेश' जहाँ पुण्य भागीरथी गंगा लहराती है। इसी के उदर में प्रविष्ट हुआ वसुन्धरा का एक खण्ड बुलन्दशहर और उसका भी शस्य–श्यामल भूखण्ड जिसका नाम नूरपुर है, भारत के कर्णाधार चौधरी चरणसिंह का जन्म स्थल कहलाने के लिए सौभाग्यशाली है।

किन्तु चरणसिंह जी के जन्म के उपरान्त कुछ समय बाद ही पिताजी चौ. मीर सिंह को भूपगढ़ी, जिला मेरठ में आना पड़ा, जहाँ पर इनके दो भाई चौ. श्याम सिंह व मान सिंह जी तथा दो बहिन सुश्री राम देवी और रसाल कौर का जन्म हुआ। इनके जन्म के बाद ही चौ. मीर सिंह जी को पुनः स्थान बदलना पड़ा और वह मेरठ के ही ग्राम भदौला में आ बसे। यह यात्रा मीर सिंह जी की अन्तिम निवास यात्रा थी, इसी कारण कुछ लेखक भदौला को ही उनका मूल गाँव बताते हैं। चौ. मीर सिंह के पास मात्र 15 एकड़ जमीन (मेरठ की 120 बीघा) थी जिसमें से मात्र 5 एकड़ जमीन चौ. चरण सिंह के हिस्से में है। वह सामान्य किसान परिवार में पले अतः गरीबी को और ग्रामीण किसान जीवन को नज़दीक से परखा। बाल्यकाल से पिता के साथ खेती में कार्य किया अतः मिट्टी में लिपटे हाथ और पसीने की कीमतभली–भाँति पहचानते हैं।

चौधरी साहब की प्रारम्भिक शिक्षा चूँकि वह सामान्य कृषक परिवार से सम्बद्ध थे, अतः उसी प्रकार एक सामान्य बेसिक विद्यालय नूरपुर में हुई, यद्यपि इनके अन्य लघु भ्राताओं की शिक्षा भूपगढ़ी से दो मील दूरी पर स्थित कस्बा जानी में हुई।

बचपन से चरणसिंह जी अति मेधावी छात्र रहे हैं, फिर कृषि कार्यों में पिताजी के साथ हाथ बटाते रहते थे। बच्चों के खेलों में मिट्टी से बने किले जीत कर अन्य राजाओं के विरुद्ध बगावत करना, पुलिस अधिकारी बनकर चोरों को सज़ा देना या बागी दल का नेतृत्व करना इनकी रुचि के खेल रहे हैं। इस नेता पद के सांसारिक गुण इनमें आरम्भ से ही विद्यमान थे ऐसा इनके बचपन से परिचित सभी लोगों ने बताया।

इनके ताऊ चौ. रघुवीर सिंह शिक्षा क्षेत्र में अधिक रुचि लेते थे तथा परिवारीजनों की शिक्षा जगत की होड़ में पीछे न छोड़ देने की कसर से पीड़ित थे। अतः उनके आदेशानुसार ही चरणसिंह जी को गवर्नमेन्ट हाईस्कूल मेरठ में प्रवेश दिलाया गया जहाँ से आपने प्रथम श्रेणी में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की।

1921 में महात्मा गाँधी ने शिक्षण संस्थाओं के बहिष्कार हेतु एक जंगजू जुझारू आन्दोलन छेड़ दिया। चूँकि बालक जीवन से ही राष्ट्रीयता की भावना चरणसिंह जी में कूट–कूट कर भर गयी थी अतः अपने छात्र जीवन की परवाह न करते हुए वह अंग्रेजी स्कूल छोड़कर उसी समय स्थापित किये गये नेशनल स्कूल में दाखिल हो गये जहाँ से इण्टर की परीक्षा भी उत्तीर्ण की और साथ ही मेरठ नगर के अन्दर बोरहाना (बुढ़ाना) दरवाज़े में स्थित पंडित तेजराम के स्कूल में जाने लगे। पंडित जी इनसे अत्यधिक प्रभावित हुए अतः बालक चरणसिंह जो अपने अध्ययन को जारी रखना चाहते थे, ने पंडितजी से कहलवा कर अपने परिवारीजनों को इस बात के लिए तैयार कर लिया कि आगामी अध्ययन अर्थात् ग्रेजुएशन के लिए उन्हें आगरा भेजा जाए क्योंकि आगरा कॉलेज उस समय उत्तर भारत का सबसे बड़ा और प्रमुख कॉलेज था। चरणसिंह ने इसी में 1921 में बी. एस–सी. में प्रवेश लिया और 1923 में प्रथम श्रेणी में डिग्री प्राप्त की। आप अंग्रेज़ी के बहुत अच्छे वक्ता भी रहे। उनकी इस विद्वता से प्रभावित होकर ही तत्कालीन प्राचार्य सर जे. जे. थॉमसन ने इन्हें अंग्रेज़ी में एम. ए. करने की सलाह दी किन्तु राष्ट्रीयता की भावना से परे नहीं जा सके और आपने इतिहास में एम. ए. करने के उपरान्त क़ानून की प्रथम वर्ष की परीक्षा बहुत अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की, दूसरे वर्ष इन्होंने आगरा छोड़ दिया और अपने गृह नगर मेरठ में क़ानून की दूसरी वर्ष में प्रवेश ले लिया। उस समय मेरठ के कॉलेज भी इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सम्बद्ध थे अतः इलाहाबाद विश्वविद्यालय से 1925 में एम. ए. की डिग्री के बाद यह तीसरी डिग्री 'क़ानून स्नातक' 1927 में प्राप्त की, फिर अपना अध्ययन समाप्त करके ग़ाज़ियाबाद में वक़ालत करने चले गये। यहाँ उल्लेखनीय है कि लोग चौ. साहब को आगरा वि.वि. का छात्र समझते रहे हैं। जबकि आगरा वि.वि. 1927 में ही शुरू हुआ था।

आपके विद्यार्थी जीवन में आगरा कॉलेज के साथी श्याम सिंह जो जज़ होकर रिटायर हुए, बदन सिंह डी. आई. जी. मध्य प्रदेश तथा टीकम सिंह, डी. आई. जी. के अलावा पं. श्रीराम शर्मा साहित्यकार, श्री कृष्ण दत्त पालीवाल व जगन प्रसाद रावत, रफ़ी अहमद किदवई आदि राजनैतिक मित्र रहे। यही लोग साथ–साथ आर्य समाज व राष्ट्रीयता का पाठ पढ़कर अंग्रेज़ों के दुश्मन हो गये। उस समय आगरा अंग्रेज़ विरोधी राजनैतिक सरगर्मियों का बहुत बड़ा केन्द्र था। चौधरी चरण सिंह कॉलेज छात्रावास में रहते और क्रांतिकारियों तथा समाजसेवियों से सम्पर्क बनाये रखते थे। आपके दोनों छोटे भाई श्याम सिंह व मान सिंह जी ने क्रमशः बी.एस–सी.(एजी.), व बी.एस–सी.(एजी), एल–एल. बी. तक की शिक्षा प्राप्त की।

चरण सिंह जी आर्य समाज के इतने क़रीब आ चुके थे कि अपने जीवन साथी बनाने तक की बात को उन्होंने त्याग दिया था। किन्तु अनेक छात्र साथियों और परम् पूज्य ताऊजी रघुवीर सिंह के आग्रह के समक्ष झुकना पड़ा। वर्तमान हरियाणा के प्रसिद्ध नगर रोहतक के ग्राम कुन्दन गढ़ी में एक प्रतिष्ठित जठराना परिवार में चौधरी गंगाराम जी की पुत्री गायत्री देवी के साथ 4 जून 1925 को जब एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके थे, इनकी शादी कर दी गयी। श्रीमती गायत्री देवी जालन्धर महाविद्यालय की ग्रेजुएट और अत्यन्त मृदुभाषी, शील और चतुर महिला थीं, पढ़े–लिखेपन का कोई

बनावटीपन उनमें लेशमात्र भी नहीं। ग्रामीण किसानों की हर समस्या को सुनना और उनके उचित निराकरण का प्रयास करना उनके स्वभाव में निहित था। जब देश के कोने–कोने से आये दल के कार्यकर्त्ता चौधरी साहब से मुलाकात नहीं कर पाते या किसी कारण निराश हो जाते, तो मात्र माताजी ही उनकी आशा का केन्द्र होती थीं। वह कभी भी कार्यकर्त्ताओं के बीच घिरी देखी जा सकती थीं अनेकों की समस्याओं को सुलझाते हुए और अनेकों को धैर्य व साहस का पाठ पढ़ाते हुये। आप अपने जीवन में दो बार क्रमशः इगलास (ज़िला–अलीगढ़) और गोकुल (ज़िला–मथुरा) से विधान सभा सदस्य चुनी गयीं। पुनः कैराना (ज़िला–मुज़फ़्फरनगर) से लोक सभा की सदस्य भी रहीं।

आपने अपनी कोख से पाँच पुत्रियों और एक पुत्र को जन्म दिया। पुत्र श्री अजित सिंह अमेरिका में इंजीनियर रहे हैं, चरण सिंह जी ने अपने आर्य समाजी सिद्धान्तों को अपने पुत्र जीवन के प्रयोगिक क्षेत्र में उतारा, अपनी दो पुत्रियों कीअन्तर्जातीय शादी कराकर आर्यसमाजी कट्टरपंथ का परिचय दिया। स्वयं अपने को कभी जातिवाद के घेरे में क़ैद नहीं किया और न ही अपनी ईमानदारी व नेकनीयती के समक्ष जाति या धर्म को आड़े आने दिया। यद्यपि देश के कुछ कुत्सित मनोवृत्ति के लोग और निकृष्ट क़िस्म के राजनीतिज्ञ उनके ऊपर जातिवाद का आरोप थोपने का पूर्णतः निष्फल प्रयास करते रहे। उन्होंने अपने को यहाँ तक आर्य समाजी प्रमाणित किया कि ग़ाज़ियाबाद में जब वह वक़ालत कर रहे थे तो उनके घर का रसोइया एक सामान्य हरिजन था जिसके पीछे आपको अपने अनेक ग्रामीण प्रतिष्ठित परिचितजनों के कोप का भाजन भी बनना पड़ा किन्तु वह उसूलों पर क़ायम रहे। आपको जाट परिवारों से कहीं अधिक यादव, राजपूत, लोधे, कुर्मी, गुर्जर और पिछड़े वर्ग में अधिक सम्मान प्राप्त था। माताजी गायत्री देवी (धर्मपत्नी श्री चरणसिंह) को सदैव यादव महासभा के अखिल भारतीय सम्मेलनों में मुख्य अतिथि के रूप में बुलाया जाता था। क्योंकि चौ. साहब स्वयं किसी जातीय सम्मेलन में नहीं जाते थे। यही नहीं अनेक ब्राह्मण एवं वैश्य परिवारों में जहाँ जातीय कट्टरपन नहीं है चरणसिंह जी की मानो पूजा होती रहीं एक आदर्शवादी सिद्धान्तनिष्ठ नेता और विचारशील तथा संघर्षशील, राजनैतिक व्यक्ति के रूप में।

चौधरी चरणसिंह जी के सबसे बड़े दामाद श्री गुरुदत्त सिंह सोलंकी भरतपुर महारानी जया कॉलेज में प्रवक्ता रहे तथा बाद में प्राचार्य भी। वह अति सुलझे हुये, विचारक व साहित्यिक व्यक्ति थे, उनका अधिकांश समय साम्यवादी विचारधारा के चिन्तन और समाज सेवा में जाता था। आगरा के पास कस्बा कागारौल के मूल निवासी थे और उनकी योग्यता तथा विद्वता से प्रभावित होकर ही खेरागढ़ विधान सभा क्षेत्र की जनता ने पं. जगन प्रसाद रावत, भू. पू. मंत्री उत्तर प्रदेश सरकार, को चुनाव न लड़ने के लिए बाध्य कर श्री गुरुदत्त सिंह सोलंकी से क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने का आग्रह किया जिसे काफी जद्दो–जहद के बावजूद भी प्रो. सोलंकी टाल न सके और वहीं से विधायक चुने गये, उ. प्र. विधान परिषद के सदस्य के रूप में ही उनका मार्च माह 1984 ई. को हृदयगति रुकने से निधन हो गया।

राजनीति में पदार्पण–

चरणसिंह जी अपनी अल्पायु में ही जब वह मिडिल परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके थे और मैट्रिक के छात्र थे, तभी आर्य समाज के सम्पर्क में आये और राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ा। चौधरी साहब ने लेखक को स्वयं बताया था कि उनके ऊपर 'सत्यार्थ प्रकाश' की निम्न पंक्तियों का गहरा प्रभाव पड़ा– **''विदेशी राज्य चाहे माता–पिता के समतुल्य स्नेह क्यों न दे वह स्वदेशी राज्य से बुरा है, चाहे स्वदेशी राज्य पुत्रवत् व्यवहार क्यों न करे। ईश्वर ने जलवायु, अग्नि, जीवनदायिनी वस्तुओं का बटवारा तमाम् जीवों के कल्याण के वास्ते आवश्यकतानुसार किया है। जो राज्य पृथ्वी व इसमें होने वाले पदार्थों का बटवारा जनकल्याण के लिये नहीं करते उस शासन को बदल दो छल–कपट–बल से।''**

इस गुरु मंत्र के साथ छात्र जीवन से ही राजनीति में प्रवेश किया यदि हम भारतीय इतिहास का धुँधली दूरबीन उठाकर भूत की क्षीण पगडंडी पर भी दृष्टिपात करें तो विदित होगा कि आज़ादी में छात्रों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जिस समय प्रबुद्ध नेताओं ने गाँधी के नेतृत्व में ब्रिटिश साम्राज्य की फौलादी बाहों में जकड़े भारत को स्वाधीन कराने की आवाज़ बुलन्द की थी उस समय नेताओं के पीछे स्वतन्त्रता का नारा गुंजित करने वाले इस देश के छात्र ही थे, उन्होंने ही अंग्रेज़ों का कोप–भाजन बनकर अनेकों प्रकार की यातनाओं को सहन करके इस भारत में जागरण की ध्वनि बुलन्द की थी। छात्रों ने सरकारी विद्यालयों का बहिष्कार कर राष्ट्रीय विद्यापीठों को जन्म दिया। बहुत से छात्रों ने तो अपने भविष्य की लेशमात्र भी चिन्ता किये बिना राष्ट्रसेवा का कठोर संकल्प धारण किया था। हर्ष का विषय है कि स्वतन्त्रता के आराधक छात्रों में से चौ. चरणसिंह जी हमारे राष्ट्र की सेवा में संलग्न थे। वह महात्मा गाँधी द्वारा शिक्षा संस्थानों का 'बहिष्कार आन्दोलन' में सम्मिलित हुये। प्रतिफलस्वरूप उन्होंने गवर्नमेंण्ट स्कूल छोड़ दिया तथा नेशनल स्कूल जिसका नामकरण बाद में दयाननद आदर्श विद्यालय किया गया, में प्रवेश लिया। जब आगरा कॉलेज के छात्र थे तो हरिजनों द्वारा परोसे गये सहभोज में आर्यसमाज के आह्वान पर सम्मिलित हुए थे तथा अपनी पुस्तक ''सदाचार'' ''शिष्टाचार'' व ''अछूत'' लिखी।

एल. एल. बी. करने के बाद आप वक़ालत करने हेतु ग़ाज़ियाबाद पहुँचे और प्रसिद्ध शायर व कांग्रेसी नेता श्री गोपीनाथ 'अमन' के साथ 25 रुपया मासिक का मकान किराये पर लेकर रहने लगे। वकालत के साथ वे आर्यसमाज तथा कांग्रेस में भी सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। वह नियमित रूप से आर्यसमाज के सत्संग में जाते और हवन संध्या करते। समाज–सुधार के कार्यों में उनकी शुरू से ही रुचि रही है। आपके साथ ही बाबू बनारसी दास एडवोकेट ने भी आर्यसमाज का सन्देश एवं भारतीयता प्रचार करने के लिए बड़े–बड़े उत्सव आर्यसमाज के कार्यों में कराने शुरू कर दिये। अपने ग्राम भटौना में भी कई समारोह कराये जिनमें हज़ारों लोगों ने भाग लेकर सामाजिक सुधारों के लिए बीड़ा उठाया था। इस वक्त देश में आज़ादी की तीव्र लहर उठ खड़ी हुई। पंजाब, राजस्थान, बिहार, उत्तर प्रदेश आर्यसमाज के झण्डे के नीचे आज़ादी की लड़ाई लड़ने को उठ खड़े हुए। अस्तुयह कांग्रेस का प्रथम शिविर बन गया।

आज़ादी के दीवानों को गोली, डण्डे, धरपकड़ का शिकार तो होना ही पड़ता, साथ ही उनको कारावास की कठोर यन्त्रणाओं को भी सहन करना पड़ा। इन शहीद की कारागृह की यातनाओं तथा पीड़ाओं का स्मरण करते ही रोमांच हो आता है। साथ ही उनके साहस, शांति, धैर्य तथा कष्ट सहन करने की क्षमता पर आश्चर्य भी होता है। कल्पना कीजिए, अंग्रेज़ों के अत्याचारी शासन की, जिसमें भारतीयों का जीना तो अलग साँस लेना भी दूभर था। जिस प्रकार शलभ दीपक के मना करने पर भी पुनः–पुनः उसकी बत्ती की ज्वाला में जलकर अपने को भस्म कर डालता है उसी प्रकार देशप्रेमियों ने देश की बलिवेदी पर अपने प्राणों को हँसते–हँसते न्यौछावर कर दिया। शहीदों ने कारागार को तो गृह ही समझ लिया था। पं. राम प्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्र लाहिड़ी, अशफाक़ उल्ला, सरदार भगत सिंह व चन्द्रशेखर आर्यसमाज द्वारा ही प्रेरित थे जिन्हें फाँसी दे दी गई। एक के बाद एक आज़ादी के परवानों की लहर उठती जिसमें कुछ क्रांतिकारी रास्ते से भगत सिंह के नेतृत्व में न्यौछावर होने लगे।

चौधरी साहब ने अनुभव किया कि युवकों में स्वदेशी व स्वभाषा हिन्दी की भावना पैदा करना बहुत आवश्यक है। अतः कांग्रेस की सक्रिय सदस्यता ग्रहण की तथा सन् 1930 में गोपीनाथ 'अमन' के साथ नमक सत्याग्रह में शामिल हो गये और एक बड़े समुदाय का नेतृत्व करते हुए पकड़े गये। यह आपकी प्रथम जेलयात्रा थी जिसमें 6 माह की सज़ा हुई। जेल में रह कर ही आपने ''मंडी बिल'' व ''कर्ज़ा क़ानून'' पुस्तकें लिखीं। 'ज़मींदारी नाशक क़ानून' जो लागू हुये उन्हीं की देन हैं। उसी समय पंजाब के भारी–माल व कृषि मंत्री छोटूराम आपके सम्पर्क में आये जिन्होंने इन पुस्तकों का अध्ययन किया व चरणसिंह जी से विचार–मन्थन किया तथा अपने मंत्रित्व काल में ही कर्ज़ा व मंडी क़ानून लागू किया। शनैः–शनैः आप राजनीति में इतने लिप्त होते गये कि वक़ालत को तिलांजलि देनी पड़ी। आप 1931 में मेरठ जाकर ज़िला बोर्ड के चेयरमैन चुन लिये गये तथा 1940 से 1946 तक कांग्रेस कमेटी के कोषाध्यक्ष, महामंत्री व अध्यक्ष पदों पर रहकर कार्य किया। उस समय ज़िले की राजनीति पर आपकी धाक थी। अतः पं. गोविन्द वल्लभ पंत के सम्पर्क में आये और उनके काफी नज़दीकी हो गये। उसी समय पोलैण्ड से एक प्रतिनिधि मण्डल आया जिसने चरणसिंह जी के ज़मींदारी नाशक क़ानून का अध्ययन किया तथा सलाह दी कि सीरदारों को भी मालिकाना अधिकार मिलना चाहिए। यह संशोधन चरणसिंह जी ने स्वीकार कर लिया, जो नारायण दत्त तिवारी सरकार ने किसानों की सहानुभूति प्राप्त करने हेतु चौ. चरण सिंह के परामर्श पर लागू किया।

सन् 1936 में जब अंग्रेज़ों ने काउन्सिल के चुनाव कराये तो आप खेकड़े के एक बड़े ज़मींदार चौधरी दलेराम, जो अंग्रेज़ समर्थित था, के विरुद्ध छपरौली चुनाव क्षेत्र से मैदान में उतरे तथा उनकी जमानत भी ज़ब्त कराकर विजयी हुए। किन्तु अंग्रेज़ों के विरोध के फलस्वरूप तमाम् काँग्रेस सरकारों ने इस्तीफे दे दिये। 1939 में द्वितीय महायुद्ध आरम्भ हो चुका था और गाँधी जी सशर्त समर्थन की बात कर रहे थे अतः विरोध बना रहा। दूसरे उस समय पंजाब राज्य के रोहतक, करनाल, गुड़गाँव व राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश के कुछ ज़िलों में, जो अंग्रेज़ी फ़ौज़ों को भारी मात्रा में सिपाही देते थे चरणसिंह जी की गतिविधियाँ काफी तेज़ हो गयी थीं। अब इनकी उपस्थिति सरकार के लिए एक

ज़बरदस्त ख़तरा थी। उसी समय वह मेरठ सत्याग्रह समिति के मंत्री चुने गये थे जिनके कारण समस्त मण्डल के गाँवों के दौरे पर निकल पड़े और किसानों को स्वाधीनता आन्दोलन में भाग लेने की सलाह दी। 28 अक्टूबर 1940 को किसानों के एक जत्थे के साथ ज़िलाधीश निवास पर धरना दिया जिसमें आपको पुनः गिरफ़्तार कर लिया गया और मजिस्ट्रेट ने आपको डेढ़ वर्ष के कारावास की सज़ा दी तथा जुर्माना किया गया। सन् 1941 के अंत में आपको छोड़ा गया किन्तु आपकी राजनैतिक सरगर्मियाँ कम न होकर और बढ़ गयीं। इस प्रकार सरकार ने भयभीत होकर सन् 1942 में इनके गिरफ़्तारी वारंट जारी कर दिये। जनहित तथा आन्दोलन को तेज़ करने के दृष्टिकोण से उनके साथियों ने जेल न जाने का आग्रह किया तो चौधरी साहब को फ़रारी हालात करार देकर इनको पकड़ने के लिए ढाई हज़ार रुपया का पुरुस्कार घोषित किया गया। समस्त सम्पत्ति कुर्क कर ली गयी अंततः गुप्त बैठक जिसमें किसानों को बुलाया गया था पर्चे वितरित करने के बाद सरकार के विरुद्ध भाषण देते हुए नगर कोतवाल मेरठ श्री मासूम अली पठान ने आपको गिरफ़्तार कर लिया। किन्तु चौधरी चरणसिंह जी ने अपनी बातों और तर्कों से उसे इतना प्रभावित कर दिया कि वह चरणसिंह जी को छोड़कर उनके साथ आन्दोलन में शामिल होने को तैयार हो गया, किन्तु चरणसिंह जी ने इसे अनुशासन और क़ानून के विरुद्ध बताते हुए गिरफ़्तारी दी और उसे समझाया। इस गिरफ़्तारी के बाद अंग्रेज़ों ने इनको लम्बे समय तक जेल में रखकर अपने को सुरक्षित समझा अतः 1944 में ही छोड़ा गया। इस दौर में पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान एवं पंजाब के काफी क्षेत्रों में इनकी गिरफ़्तारी के विरोध में किसानों ने अपना व्यापक तौर पर विरोध व्यक्त किया और रेलगाड़ियों तथा बस व डाकखाने तक जलाए गये थे। सन् 1944 में जब चरणसिंह जी को छोड़ गया तो उनके भाई श्याम सिंह व भान्जे गोविन्द सिंह बम केस में गिरफ़्तार कर लिये गये। क्रांतिकारी हिंसक कार्यों में संलग्न रहने व शासन को पलटने के लिए षड्यंत्र रचने के जुर्म में स्पेशल जज़ डॉक्टर एल. डी. जोशी मेरठ की अदालत में मुक़दमा चलाया गया और गोविन्द सिंह रिहा हो गये क्योंकि उनके आरोपों के लिए प्रमाणउपलब्ध नहीं थे किन्तु भाई श्याम सिंह को पाँच वर्ष के कठोर कारावास की सज़ा सुनायी गयी।

बाबेल प्लान के अनुरूप 1946 में प्रान्तीय धारा–सभाओं के चुनाव में चौधरी साहब पुनः चुन लिये गये तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत के नेतृत्व में गठित सरकार में आपको लालबहादुर शास्त्री, चन्द्रभानु गुप्ता, श्री सुचेता कृपलानी के साथ पार्लियामेण्ट सेक्रेटरी बनाया गया इसी पाँच वर्ष के दौरान आपने समस्त प्रशासन पर पकड़ करने का रास्ता खोज लिया था।

सक्रिय राजनैतिक जीवन :

चौधरी साहब 1936 में विधानमण्डल के गैर सरकारी सदस्य के रूप में उत्तर प्रदेश के राजनैतिक मंच पर उतरे और केन्द्रीय गृहमन्त्री और प्रधानमन्त्री के रूप में सरदार पटेल के बाद दूसरे व्यक्ति हैं जो लौह पुरुष का सम्मान प्राप्त कर चुके हैं, उनका राजनैतिक जीवन संघर्षों की लम्बी कहानी है। विधान मण्डल के सदस्य के रूप में चरणसिंह जी द्वारा किये गये सराहनीय एवं अथक प्रयत्नों के फलस्वरूप न चाहते हुए भी पं. गोविन्द वल्लभ पंत ने 1946 में धारा–सभाओं के चुनाव के बाद चौधरी

साहब को सर्वश्री चन्द्रभानु गुप्ता, सुचेता कृपलानी, लाल बहादुर शास्त्री के साथ सचिव बनाया। 1948 से 1951 तक वह राज्य विधान मण्डलीय दल के सचिव रहे। चूँकि 1950 में चरणसिंह जी अपनी समस्त योग्यताओं तथा क्षमता के बावजूद भी केवल अपनी ईमानदारी व स्वाभिमान के कारण स्थापित नहीं हो पा रहे थे, उस समय प्रदेश की राजनीति श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन तथा उनके अनुयायियों चन्द्रभानु गुप्त तथा मोहन लाल गौतम के हाथ में थी, जिनके नाम को जनता ईमानदारी के साथ भूल से भी नहीं जोड़ सकती थी, अतः चौधरी की उनसे पटरी बैठने की उम्मीद करना भी ग़लत था।

1951 में चरणसिंह जी को प्रथम बार सूचना व न्यायमंत्री के रूप में मंत्रिमण्डल में आने का सुअवसर प्राप्त हुआ। जब 1952 में भारतीय गणराज्य के प्रथम चुनाव हुए और नया मंत्रिमण्डल बना तो श्री पंत केन्द्र में गृहमन्त्री होकर चले गये और डॉ. सम्पूर्णानन्द मुख्यमंत्री बनाये गये तो श्री सिंह को कृषि एवं राजस्व मंत्रालय दिया गया। किन्तु वह निर्भीक स्पष्टवादी व स्वाभिमानी होने के कारण डॉ. सम्पूर्णानन्द जैसे सबल अहमयुक्त व्यक्ति के कतिपय विचारों से सहमत न हो सके और कुछ समय में ही मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र दे दिया।

एक सामान्य किसान के घर में जन्म लेने और उसकी हर परिस्थिति से नज़दीकी सम्बन्ध रहने के कारण किसानों के लिए कुछ कर गुज़रने की कसक उनके और मात्र उन्हीं के दिल में रही। इसीलिये राज्य के कृषिमंत्री के रूप में उन्होंने सदैव किसानों की समस्याओं के निदान हेतु कुछ न कुछ किया। जब वह 1960 में चन्द्रभानु गुप्त मंत्रिमण्डल में गृह एवं कृषि मंत्री बनाये गये तो गन्ने के भावों का पुनः निर्धारण कराकर तथा गुड़ का उचित मूल्य दिलाकर किसानों को उजड़ने से बचाया था। इसके उपरान्त सुचेता कृपलानी मंत्रिमण्डल में कृषि तथा वन–मंत्री रहे। लेकिन इसी दौर में अपने व्यक्तित्व के कुछ गुणों के कारण 1959 में नागपुर में आयोजित काँग्रेस अधिवेशन में नेहरु जी से किसानों के हित में संघर्ष कर बैठे और वापस आकर त्यागपत्र दे दिया तथा लगभग डेढ़ वर्ष तक मंत्रिमण्डल से पृथक रहे। 1967 में जब सारे देश में काँग्रेस का बुरा हाल हो गया तब उत्तर प्रदेश में भी काँग्रेस मात्र बहुमत प्राप्त कर सकी थी। तभी उ.प्र. विधान मण्डल दल के नेता पद के चुनाव हेतु चन्द्रभानु गुप्त के विरोध में चौ. चरणसिंह मैदान में जम गये बाद में हाईकमान के अनुरोध पर अपना नाम वापिस ले लिया किन्तु कुछ चेहरों को मंत्रिमण्डल में शामिल न करने की शर्त रखी जो उस समय जनता की निगाह में भ्रष्ट तथा बेईमान साबित हो चुके थे किन्तु उनमें से अधिकांश मुख्यमंत्री श्री गुप्त के दायें–बायें हाथ थे, अतः बाद में उन्हें मंत्रिमण्डल में स्थान दे दिया गया और श्री सिंह की शर्त को महत्व नहीं दिया गया। बस यही उनके स्वाभिमान पर चोट करना था जिसके लिए कई बार पद त्याग कर अपने को अभ्यस्त कर लिया था।

वस्तुतः एक तो किसान, दूसरे क्षत्रिय वंशज और वह भी मेरठ भूमि के अतः अक्खड़ता उनके रक्त में समाई हुई थी। कुछ बुद्धिजीवी इस प्रकार भी कहते हैं कि ईमानदार व्यक्ति अधिकांशतः खरे और जिद्दी स्वाभाव के ही होते हैं। मैं भी इससे काफी हद तक सहमत हूँ। इस प्रकार सम्माननीय नेता ने जब यह अनुभव किया कि अब प्रदेश काँग्रेस भ्रष्टाचारियों, काला बाज़ारियों और चाटुकारों के हाथों

की कठपुतली बनती जा रही है, केन्द्रीय स्तर पर भी कोई ऐसा व्यक्तित्व नहीं जो सत्य को सत्य कहने का साहस करे अथवा सत्य व ईमान को संरक्षण दे सके, तो शिक्षण संस्था के दरबार से लेकर प्रदेश के कोने–कोने तक कॉंग्रेस के लिए खून–पसीना बहाने वाला यह सजग प्रहरी किसान के शोषण के विरुद्ध आवाज़ बुलन्द करने हेतु इस संस्था से अप्रेल 1967 में अपना नाता तोड़ बैठा। कॉंग्रेस से पृथक होने तक सारा प्रदेश चरणसिंह व श्री चन्द्रभानु के मतभेदों से भली–भॉंति परिचित था क्योंकि श्री सिंह जहॉं किसानों और अन्य ग्रामीणों के हित की बात कहने व उनके लिए लड़ने में अग्रणी थे वहीं श्री गुप्त बड़े–बड़े उद्योगपतियों, साहूकारों व अपने अनुयायियों को येन–केन–प्रकारेण लाभ पहुँचाने की बात ही सोचते थे। इस प्रकार दो विपरीत विचारों का संगम सम्भव न हुआ। श्री सिंह समझते थे कि अभी कॉंग्रेस का उच्च नेतृत्व उन्हें समर्थन नहीं दे सकता क्योंकि चुनावों के लिये तथा पार्टी के लिए पूँजीपतियों से धन एकत्र कर वह उनकी **यदि सच पूछा जाये तो आज तक के परिवर्तन का सूत्रपात करने का श्रेय मात्र भा. लो. द. और उसके नेता चौधरी चरण सिंह को ही प्राप्त था। क्योंकि यदि श्री सिंह, राजनारायण को सम्बल देकर राज्यसभा भेजकर राजनीति के आसन पर न बैठाते तो हाईकोर्ट में इंदिरा का पिटीशन भी न हो पाता और इंदिरा पिटीशन न हारती तो आपात स्थिति भी लागू न होती, वह लागू न होती तो 'जनता पार्टी' के गठन के लिये परिस्थितियाँ पैदा न होतीं, न ही सरकार बनाने की स्थिति पैदा होती। अतः चौधरी चरण सिंह का व्यक्तित्व और राजनारायण का कृतित्व आज तक हुए राजनैतिक ध्रुवीकरण एवं परिवर्तन के जनक हैं**, इसमें दो राय नहीं हो सकतीं। इसी प्रकार जनता पार्टी के गठन के लिये चौधरी चरण सिंह ने अपने दल का हर बलिदान स्वीकार करके तथा अपनी प्रतिष्ठा को दाव पर लगाकर के भी भूमिका तैयार की और उसे पूरा कराया। इस प्रकार उनका अन्तिम दिवा स्वप्न पूरा हुआ। इस ध्रुवीकरण के लिये जे. पी. के जसलोक अस्पताल से लखनऊ तक चौधरी साहब ने न जाने कितनी दौड़ नहीं लगाईं और कितनी ख़तोकि़ताबत नहीं कीं? काश! जय प्रकाश और चरण सिंह इन दो व्यक्तियों ने प्रयास न किया होता तो आज 'जनता पार्टी' नहीं बनती। चाहे उस जीत का सेहरा कोई भी बॉंध ले और लाभ कोई उठा ले पर यदि कोई इतिहासकार पक्षपात न करे तो इस कांग्रेस विरोधी लहर परिवर्तन तथा जनता पार्टी के जन्म का श्रेय मात्र बाबू जय प्रकाश व चौधरी चरण सिंह को ही देगा। यह दोनों ही इस सारे घटना चक्र में एक दूसरे के पूरक रहे। इसके बाद भी यदि श्रेय किसी को जाता है तो नानाजी देशमुख, मधुलिमये व पीलूमोदी व बीजूपटनायक के सहयोग को।

आपात्काल लागू होते ही चौधरी चरणसिंह 25 जून की काली रात से गिरफ़्तार कर लिये गये और दिल्ली स्थित तिहाड़ जेल में रखा गया। जेल में रहकर ही आपने भिन्न–भिन्न नेताओं को पत्र लिखकर ध्रुवीकरण को आगे बढ़ाने का प्रयास किया और प्रकाश सिंह बादल, करुणानिधि, जय प्रकाश, अशोक मेहता, मधु लिमये और लाल कृष्ण आडवाणी से वार्तालाप कर इस प्रक्रिया को तेज़ करने की पेशकश करते रहे। विदेशी पत्रकारों ने एक सम्मेलन दिल्ली में बुलाया जिसमें भारत में की गई राजनैतिक गिरफ्तारियों के बारे में अनेक प्रश्न श्रीमती गॉंधी से किये गये। इन प्रश्नो के घेरे में आकर विश्व मंच पर अपनी प्रतिष्ठा को धक्का लगता देख कर इस तानाशाह ने चौधरी चरण सिंह को बिना

शर्त रिहा कर दिया। आपात्काल में ही श्री नारायण दत्त तिवारी को उत्तर प्रदेश का मुख्य मंत्री बनाया गया था और उसी दौर में विधान सभा के बजट अधिवेशन में नेता विरोधी दल के रूप में पाँच घण्टे लगातार अपनी सिंह गर्जना से काँग्रेस की साँसों के तार हिला दिये। प्रतिफलस्वरूपखुशामद नहीं कर पायेंगे और गुप्त जी इसके अभ्यस्त हैं अतः अब क्यों न अपना पृथक अस्तित्व तैयार कर किसान के हित में संघर्ष किया जाये।

सौभाग्य से उसी समय में समस्त विरोधी दलों ने संगठित होकर चौधरी चरणसिंह से नेतृत्व करने का अनुरोध किया, तभी 16 अन्य वरिष्ठ काँग्रेसी विधायक भी काँग्रेस से त्यागपत्र देकर चौधरी साहब के साथ जुड़ गये और काँग्रेस के गुप्ता मंत्रिमण्डल का पतन हो गया। चौधरी साहब को प्रथम बार प्रदेश का मुख्यमंत्री 3 अप्रेल 1967 को बनाया गया किन्तु अपने स्वाभिमान के गुणों को वह छुपा न सके और दलों की आपसी खींचातानी से तंग आकर अपना व मंत्रिमण्डल का त्यागपत्र राज्यपाल को 17 फरवरी 1968 को प्रस्तुत करते हुए नये चुनाव कराये जाने की सिफ़ारिश की।

अप्रेल 1967 में काँग्रेस से त्यागपत्र देकर ही आपने एक नये दल 'जन काँग्रेस' की स्थापना की जिसमें 16 विधायक थे किन्तु आपकी सिफ़ारिश पर जब 1969 में मध्यावधि चुनाव कराये गये तो उसके पूर्व ही आपने 'जन काँग्रेस' से ''भारतीय क्रांतिदल' नामक संगठन को जन्म दिया और आपकी प्रतिभा के सम्बल पर ही इस दल को विधान सभा में 99 स्थान प्राप्त हुए यह उनकी बढ़ती हुई लोकप्रियता का ज्वलंत उदाहरण था। इस समय काँग्रेस दो धड़ों 'इंडीकेट' व 'सिंडीकेट' में बँट गयी। मौका परस्त तथा पूँजीपतियों के एजेण्ट, चन्द्रभानु गुप्ता के अनेक अनुरोधों तथा चालों के बावजूद चौधरी ने उनके साथ सरकार नहीं बनाई। उस समय चौधरी साहब का पत्रकारों को उत्तर था– ''चन्द्रभानु गुप्त का बिस्तर गन्दा है और कमलापति का बिस्तर उससे साफ़ है अतः उसी आधार पर मैं सरकार बनाने के लिए निर्णय लूँगा।'' अन्ततः आपने इंदिरा गुट के कमलापति त्रिपाठी के साथ मिलकर सरकार बनाई।

उस समय आपके पास गृह मन्त्रालय भी था अतः इन्दिरा गुट के प्रदेश के नेता कमलापति त्रिपाठी के सुपुत्र लोकपति द्वारा एक नाबालिग हरिजन कन्या रज़िया (12 वर्षीय) के साथ बलात्कार करने के बाद जब उसे क़त्ल करा दिया गया और उस केस को दबाने के लिये चौधरी साहब पर दबाव डाला गया तो वह स्वाभिमानी व्यक्तित्व मन्त्रिमण्डल को दुत्कार कर अलग हो गया, इस प्रकार 1970 में श्री सिंह के मुख्यमन्त्री पद से त्यागपत्र के साथ ही यह संयुक्त मन्त्रिमण्डल भी भंग हो गया।

तब वह अनुभव करने लगे कि जब तक काँग्रेस के भ्रष्ट शासन को देश से उखाड़ नहीं फेंका जायेगा तब तक देश का उत्थान सम्भव नहीं है। उसी उद्देश्य के तहत आपने राजनैतिक ध्रुवीकरण के चक्र को आगे बढ़ाया और इसीके प्रतिफल स्वरूप 29 अगस्त 1974 को आपका स्वप्न कुछ अंशों में पूरा हुआ जब 'भारतीय क्रांतिदल' में स्वतन्त्र पार्टी, संसोपा, उत्कल काँग्रेस, राष्ट्रीय लोकतान्त्रिक दल, किसान मज़दूर पार्टी तथा पंजाब खेतीबाड़ी यूनियन इन सात दलों को मिलाकर भारतीय 'लोकदल' नामक नये दल को जन्म दिया गया। चरण सिंह जी सर्वसम्मति से इस दल के अध्यक्ष बनाये गये तथा सर्वश्री पीलू मोदी, राजनारायण, बलराज–मधोक, बीजू पटनायक, चौधरी देवीलाल, प्रकाशवीर शास्त्री,

कुम्भाराम आर्य, चौधरी चाँदराम, रविराय और कर्पूरी ठाकुर जैसे जंगजू और जुझारू नेता इस दल के साथ जुड़ गये।

यहाँ उल्लेखनीय घटना यह थी कि राजनारायण जो 1967 में चौधरी मन्त्रिमण्डल को गिराये जाने में अग्रणी भूमिका निभा चुके थे, वही सोशलिस्ट पार्टी द्वारा निष्कासित किये जाने और राजनैतिक क्षितिज के समाप्त होने की स्थिति आने पर चौ. चरणसिंह के नज़दीक आये। राज्य सभा के लिये होने वाले चुनाव में जब उत्तर प्रदेश में चार स्थान भा. लो. द. को मिले तो आपने एक स्थान राजनारायण के लिये सुरक्षित कराया और इन्दिरा गाँधी ने 20 हज़ार रुपया प्रति विधायक के हिसाब से सेठ बिड़ला से दिलाकर उन्हें मात्र इसलिये चुनाव में उतारा कि वे राज्य सभा में न आने दें। पुनः चौधरी साहब को भी अनेक प्रलोभन दिये तथा अनुनय विनय की कि वह राजनारायण को समर्थन न दें किन्तु बात के धनी श्री सिंह यह गद्दारी कभी नहीं कर सकते थे। वही हुआ और राजनारायण को राज्य सभा सदस्य चुनवाकर चौ. साहब ने वायदा निभाया। इस प्रकार उन्हें नया राजनैतिक जीवन दिया।

कालांतर में इसी अहसान का बदला चुकाने के लिए श्री राजनारायण, चौ. चरणसिंह के हर क़दम पर मूक साथी बनकर सहयोग करते रहे लेकिन यह सहयोग भारत के भविष्य के हित में होते हुए भी, चिरस्थाई नहीं रह सका। उसके बाद चौधरी साहब नेता विरोधी दल के रूप में विधान सभा की गरिमा बढ़ाते रहे और आपकी लोकप्रियता उत्तर प्रदेश के कोने–कोने के बाद हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, बिहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, जम्मू–कश्मीर से लेकर समग्र भारत में फैलती गयी और देश के किसान आपके व्यक्तित्व से जुड़ते चले गये। मात्र चौधरी ही किसानों के सच्चे नेता के रूप में विश्वभर में अग्रणीय माने गये।

जब गुजरात से नौजवान विद्यार्थियों ने एक नवनिर्माण आन्दोलन को जन्म दिया और यह प्रलय की ज्वाला बिहार से होकर सारे देश में फैली तो भा. लो. द. ने अपनी अग्रणी भूमिका का निर्वाह किया। उत्तर भारत में बाबू जयप्रकाश नारायण के बाद दूसरा चौधरी चरण सिंह का ही नाम था जो इस आन्दोलन में हर व्यक्ति की जुबान पर था।

यदि सच पूछा जाये तो आज तक के परिवर्तन का सूत्रपात करने का श्रेय मात्र भा. लो. द. और उसके नेता चौधरी चरण सिंह को ही प्राप्त था। क्योंकि यदि श्री सिंह, राजनारायण को सम्बल देकर राज्यसभा भेजकर राजनीति के आसन पर न बैठाते तो हाईकोर्ट में इंदिरा का पिटीशन भी न हो पाता और इंदिरा पिटीशन न हारती तो आपात स्थिति भी लागू न होती, वह लागू न होती तो 'जनता पार्टी' के गठन के लिये परिस्थितियाँ पैदा न होतीं, न ही सरकार बनाने की स्थिति पैदा होती। अतः चौधरी चरण सिंह का व्यक्तित्व और राजनारायण का कृतित्व आज तक हुए राजनैतिक ध्रुवीकरण एवं परिवर्तन के जनक हैं, इसमें दो राय नहीं हो सकतीं। इसी प्रकार जनता पार्टी के गठन के लिये चौधरी चरण सिंह ने अपने दल का हर बलिदान स्वीकार करके तथा अपनी प्रतिष्ठा को दाव पर लगाकर के भी भूमिका तैयार की और उसे पूरा कराया। इस प्रकार उनका अन्तिम दिवा स्वप्न पूरा हुआ। इस ध्रुवीकरण के लिये जे. पी. के जसलोक अस्पताल से लखनऊ तक चौधरी साहब ने न जाने कितनी दौड़

नहीं लगाईं और कितनी ख़तोकि़ताबत नहीं कीं? काश! जय प्रकाश और चरण सिंह इन दो व्यक्तियों ने प्रयास न किया होता तो आज 'जनता पार्टी' नहीं बनती। चाहे उस जीत का सेहरा कोई भी बाँध ले और लाभ कोई उठा ले पर यदि कोई इतिहासकार पक्षपात न करे तो इस कांग्रेस विरोधी लहर परिवर्तन तथा जनता पार्टी के जन्म का श्रेय मात्र बाबू जय प्रकाश व चौधरी चरण सिंह को ही देगा। यह दोनों ही इस सारे घटना चक्र में एक दूसरे के पूरक रहे। इसके बाद भी यदि श्रेय किसी को जाता है तो नानाजी देशमुख, मधुलिमये व पीलूमोदी व बीजूपटनायक के सहयोग को।

आपात्काल लागू होते ही चौधरी चरणसिंह 25 जून की काली रात से गिरफ़्तार कर लिये गये और दिल्ली स्थित तिहाड़ जेल में रखा गया। जेल में रहकर ही आपने भिन्न–भिन्न नेताओं को पत्र लिखकर ध्रुवीकरण को आगे बढ़ाने का प्रयास किया और प्रकाश सिंह बादल, करुणानिधि, जय प्रकाश, अशोक मेहता, मधु लिमये और लाल कृष्ण आडवाणी से वार्तालाप कर इस प्रक्रिया को तेज़ करने की पेशकश करते रहे। विदेशी पत्रकारों ने एक सम्मेलन दिल्ली में बुलाया जिसमें भारत में की गई राजनैतिक गिरफ्तारियों के बारे में अनेक प्रश्न श्रीमती गाँधी से किये गये। इन प्रश्नो के घेरे में आकर विश्व मंच पर अपनी प्रतिष्ठा को धक्का लगता देख कर इस तानाशाह ने चौधरी चरण सिंह को बिना शर्त रिहा कर दिया। आपात्काल में ही श्री नारायण दत्त तिवारी को उत्तर प्रदेश का मुख्य मंत्री बनाया गया था और उसी दौर में विधान सभा के बजट अधिवेशन में नेता विरोधी दल के रूप में पाँच घण्टे लगातार अपनी सिंह गर्जना से काँग्रेस की साँसों के तार हिला दिये। प्रतिफलस्वरूप पुनः चौधरी साहब को गिरफ़्तार कराये जाने की योजना बनी, किन्तु साहस नहीं हुआ क्योंकि उस समय तक चौधरी साहब समूचे उत्तर भारत के प्रमुख नगरों का दौरा कर चुके थे और गुप्तचर विभाग की रिपोर्ट थी कि अगर पुनः चौधरी को गिरफ़्तार किया गया तो जबर्दस्त जनविरोध उठ खड़ा होगा, जिसे रोक पाना सम्भव नहीं क्योंकि जनता अब समझ चुकी है। अतः उनकी पुनः गिरफ़्तारी का इरादा सरकार को त्यागना पड़ा और आपसे केन्द्र में गृहमन्त्रालय, उप–प्रधानमन्त्री पद तथा दो प्रदेशों में मुख्यमन्त्री भा.लो.द. को दिये जाने का प्रस्ताव किया जिसे श्री सिंह ने ठुकरा दिया और इमर्जेंसी हटाये बिना कोई बात करने तक से इन्कार कर दिया। मार्च 1977 में जनता पार्टी के जन्म से गृह मन्त्री, वित्त मन्त्री एवं उप–प्रधान मन्त्री तथा प्रधान मन्त्री के सर्वोच्च पद तक को आपने अनेक संघर्ष और त्याग तपस्या के आधार पर प्राप्त किया। इसी बीच हर बार त्याग–पत्र देते हुए अपनी पुरानी संस्कृति एवं उसूलों को क़ायम रखा कि सिद्धान्त और आदर्शों का बलिदान सत्ता की कीमत पर कभी स्वीकार नहीं किया। यही आपके राजनैतिक जीवन की विशेषता रही है।

जेल में आपने अपनी पुस्तक 'भारतीय अर्थनीति' (प्दकपंश्े म्बवदवउपब च्वसपबल) लिखी जो 1978 में प्रकाशित हो सकी। उसका हिन्दी रूपांतर चौ. साहब के निर्देश पर 1982 में लेखक (डॉ. राना) ने किया।

3. राजकीय सेवायें

चौ. चरण सिंह 1937 में विधान सभा के लिये निर्वाचित हुए और 1967 तक काँग्रेस के साथ रहे, उसके बाद 1967 एवं 1969 में दो बार मुख्यमन्त्री बने। इस दौरान आपने उत्तर प्रदेश में शिक्षा, उद्योग, सहकारिता तथा सार्वजनिक निर्माण विभाग को छोड़कर शेष सभी विभागों में कार्य किया और जन सेवा को अपना प्रमुख लक्ष्य माना। हर विभाग के कर्मचारी व अधिकारी इनके आने के बाद भयभीत नज़र आते थे और पूर्ण कार्यकुशलता से कार्य करते थे। इसी प्रकार केन्द्रीय–मन्त्रिमण्डल में गृहमंत्री वित्त मंत्री और उपप्रधानमन्त्री, प्रधानमंत्री के रूप में भी आप देश में सर्वाधिक चर्चित नेताओं में माने जाने लगे थे। साथ ही उनकी ख्याति एक विचारक, किसान नेता और कुशल प्रशासक के रूप में सदैव बनी रही है यद्यपि राष्ट्रीय रंगमंच पर उतरने के बाद ही उनके यह गुण अधिक प्रखर हुए और सामान्य जन के समक्ष आये। आपकी विभिन्न विभागों में रहकर की गयी सेवाओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

गृह मन्त्रालयः में रहकर पुलिस विभाग के भ्रष्टाचार को कम करने, उसकी कार्यकुशलता को बढ़ाने, साथ ही पुलिस की आन्तरिक समस्याओं को सुलझाने में चौधरी का अपूर्णीय योगदान रहा। जब 15 मई की छोटी अवधि के लिए आपने कार्यभार सँभाला, तो तुरन्त आई. जी. को सेवामुक्त कर दिया जो विभागाध्यक्ष द्वारा 5 वर्ष तक ही पद पर कार्य करने सम्बन्धी नियम का उल्लंघन कर, कार्यरत थे; तथा एक अत्यधिक ईमानदार अधिकारी शरत चन्द्र मिश्रा को गुप्तचर विभाग में अतिरिक्त आई. जी. के पद पर नियुक्त किया।

पुलिस विभाग को यह खुला आश्वासन उन्होंने दिया कि सरकारी कार्य में किसी प्रकार का हस्तक्षेप स्वीकार नहीं करेंगें, जिसके फलस्वरूप पुलिस के मनोबल व कार्यक्षमता दोनों में वृद्धि हुई, राजनैतिक व प्रशासनिक अधिकारियों की अनाधिकृति दबाव की चेष्टा समाप्त हो गयी और प्रशासन में सुधार हुआ। इस सन्दर्भ में एक उदाहरण बहुत दिलचस्प है–

लखनऊ में हज़रत गंज चौराहे पर ट्रैफिक पुलिस ने कुछ छात्रों का चालान नियमों की अवज्ञा तथा सिपाही के साथ अशिष्टता के आरोप में कर दिया। उनमें से एक छात्र राजपत्रित सेवा के लिए चुना गया, जिसके चरित्र की पूर्व जाँच पुलिस कर रही थी तभी उस छात्र को माफ़ करने के लिए चौधरी साहब के सहयोगियों व कुछ अधिकारयों ने भी सिफ़ारिश की, कारण वह एक अनाथ विधवा का पुत्र था। चरण सिंह का विवेकपूर्ण उत्तर था– ''मैं, अपने उन सिपाहियों के पास इसे भेजता हूँ जिनके साथ इस छात्र ने हरक़त की है यदि वह सिपाही इसे माफ़ कर दें तो इसे माफ़ समझा जायेगा।''

दिसम्बर 1961 में पुलिस सप्ताह के सन्दर्भ में बुलायी गयी एक अधिकारियों की बैठक में उन्होंने घोषणा की कि वह भविष्य में ऐसा आदेश जारी कर रहे हैं जिससे कचहरियों में पुलिस को झूठी गवाही नहीं देनी होगी तथा पुलिस के सभी उच्च अधिकारियों को आदेश दिया है कि वह किसी थाने का

निरीक्षण करने जायें तो अपने खर्चे थानेदारों को वहन न करने दें साथ ही अपने घरों में सिपाहियों द्वारा काम कराने या नियम विरुद्ध कोई सेवा लेने पर भी कड़ी रोक लगा दी।

सभी महानगरों में रेडियो यंत्रयुक्त गश्ती पुलिस की व्यवस्था भी आपने ही करायी जो सर्वप्रथम लखनऊ व कानपुर से शुरू हुई जिसके प्रतिफल स्वरूप नागरिक सुरक्षा में वृद्धि हुई, वहीं पुलिस की कार्यक्षमता भी बढ़ी। सब इन्सपेक्टरों की नियुक्ति के नियमों में भी आपने इस प्रकार परिवर्तन किया कि योग्य व गरीब परिवार के युवकों को भी मौक़ा मिल सका। इसी सन्दर्भ में ट्रेनिंग कॉलेज मुरादाबाद में प्रशिक्षणार्थियों द्वारा जमा करने वाली राशि 1000/– रुपया को रद्द करके मासिक व्यय के लिए 80/ रुपया की व्यवस्था सरकारी स्तर पर कर दी गयी।

मार्च 1962 में पुलिस बज़ट प्रस्तुत करते हुए घोषणा की कि अराजपत्रित कर्मचारियों के मुठभेड़ में मारे जाने या अन्यत्र कार्यपालन में मृत्यु होने पर उनके उत्तरजीवियों को उसकी पूरी आय (मासिक वेतन वृद्धि सहित) दी जाती रहेगी तथा पेंशन भी दी जायेगी, जिससे परिवारीजनों को राहत मिले और अधिकारी कार्यक्षमता बढ़ा सकें साथ ही पुलिस आयोग के बहुत से सुझाव प्राप्त होते ही स्वीकार किये गये जो कि पहले रद्दी की टोकरी में पड़े रहते थे। क्योंकि चरण सिंह जी ने पुलिस के सिपाहियों के व्यक्तिगत जीवन, उनके सेवाकाल, थानों की व्यवस्था आदि समस्याओं का गहन अध्ययन किया था। पुलिस कर्मचारियों के हितों तथा कार्य क्षमता की ओर चौधरी की उत्सुकता ने उनके दिलों में इस भावना का विकास किया कि गृहमन्त्री जी अनुशासनबद्ध अधिकारी हैं किन्तु पुलिस विभाग के सशक्तसंरक्षक भी हैं। अतः पुलिस विभाग की कार्यकुशलता कई गुनी वृद्धि हुई।

आपने थानों में सही रिपोर्ट दर्ज़ कराने और रिपोर्ट के आधार पर थाने की कुशलता न आँकने की व्यवस्था की, जिससे अपराधों की सही स्थिति ज्ञात हो सकी। इसी प्रकार की ग़लतियों पर बड़े अधिकारियों को अधिक दण्ड देने का प्राविधान किया तथा तरक्की, नियुक्ति व तबादले के सन्दर्भ में किसी सिफ़ारिश को पूर्णतः नज़रअंदाज़ करने के लिए कहा, प्रतिफलस्वरूप 1961 में सब इंसपेक्टरों की नियुक्ति के सन्दर्भ में स्वयं आई. जी. पुलिस ने घोषणा की कि इस वर्ष एक भी सिफ़ारिश प्राप्त नहीं हुई।

वर्ष 1962 में मेरठ के एक काँग्रेसी पर मुक़दमा चलाने के आरोप में ज्येष्ठ पुलिस अधीक्षक (जो पूर्णतः उचित था), का स्थानान्तरण मुख्यमंत्री ने कर दिया बाद में गुप्तचर विभाग ने उस काँग्रेसी को दोषी ठहराया तो मुख्मंत्री के क़दम के विरोध में चौधरी चरण सिंह ने गृहमंत्रालय से त्यागपत्र दे दिया तथा कहा कि यदि कर्त्तव्य पालन में संलग्न किसी अधिकारी को मैं संरक्षण नहीं दे सकता तो इस पद पर रहने का मेरा कोई औचित्य नहीं है।

केन्द्रीय गृहमंत्री के रूप में आपकी तस्वीर लौह पुरुष के रूप में सामने आई, आपात्काल के जघन्य अत्याचारों के लिए दोषी संजय मण्डली और स्वयं इंदिरा गाँधी के विरुद्ध आयोगों का गठन कर उनके पापों को उजागर किया और अनेक नेताओं को जेल के सीखचों में पहुँचाकर जनता को भयमुक्त किया। प्रशासनिक स्तर पर भी व्यापक परिवर्तन किये, नौकरशाही तथा लालफीताशाही का ताण्डव नृत्य

प्रशासनिक सेवाओं में आज से नहीं, अंग्रेज़ी हुकूमत के समय से होता रहा है। इनका प्रमुख कारण है कि इनकी शिक्षा–दीक्षा देश सेवा के लिए नहीं वरन् ग़रीब देशवासियों पर हुकूमत करने के लिए और उन्हें संत्रस्त करने के उद्देश्य से दी जाती थी किन्तु आज तक स्थिति यथावत् है, उनके तौर तरीके नहीं बदले। इस दुनीति के कारण देश की प्रगति और विकास अवरुद्ध हुआ है तथा अंग्रेज़ों की गुलामी में पले और हिन्दुस्तानियों को काहिल, जाहिल और गुलाम मानने वाले, प्रशासनिक अधिकारियों ने देश की अवर्णनीय क्षति भी की है।

उच्छृंखलता तथा जन–प्रतिनिधियों के साथ इनकी अशिष्टता सदा सर्वदा बनी रही है तथा इनके शिकंजे में बड़े–बड़े राष्ट्रीय धुरन्धर नेता और मंत्रिगण भी फँसते रहे हैं। सरदार पटेल प्रथम गृहमंत्री थे, जो इसके अपवाद थे या फिर जनता सरकार के प्रथम गृहमन्त्री चौधरी चरण सिंह थे जो इस नौकरशाही को नियन्त्रित कर सके। इसका उदाहरण प्रस्तुत है–

जनता सरकार के निर्माण के बाद कुछ गम्भीर आरोपों में पेट्रोलियम मंत्रालय के सचिव वी. वी. वोहरा को गिरफ्तार किया गया और पद से निलम्बित कर दिया गया। इस पर भयभीत प्रशासनिक सेवा संघ की ओर से यूनियन बनाकर एक बैठक कर तीव्र रोष व्यक्त करते हुए सरकार को असफल करने की योजना बनाई, ताकि प्रशासन लड़खड़ाने पर मंत्रिमण्डल अधिकारियों के नियन्त्रण में रहे या किसी अन्य अधिकारी के विरुद्ध कोई कार्यवाही न कर सके। बैठक में निर्णय लिया गया कि हमारे संघ की ओर से इस प्रकरण को अदालत में ले जाकर सरकार व अधिकारियों के कार्य क्षेत्र का फैसला करा लिया जाना चाहिये। साथ ही अदालत में जाने से पूर्व सरकार के पास प्रतिवेदन पत्र भेजने के लिए मसविदा तैयार हुआ। इसी बीच सारी घटना की जानकारी, मंत्रिमण्डल के माध्यम से चौधरी चरण सिंह गृहमंत्री भारत सरकार को हुयी तो चौधरी साहब ने मंत्रिमण्डल सचिव से साफ कह दिया कि यदि यूनियनबाज़ी करने की कोशिश यहाँ की गयी तो फिर उनको भी आगामी प्रक्रिया का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिये। यह बात वरिष्ठ अधिकारी एवं उस बैठक के अध्यक्ष श्री आर. पी. नायक, आई.सी.एस. को बताई गयी और अंततः दूसरी बैठक बुलाकर जब सभी अधिकारियों की नज़र में गृहमंत्री चौधरी चरण सिंह का सन्देश आया तो उनके नीचे की ज़मीन खिसक गयी और फिर इस बैठक में उस पुराने विरोध पत्र का स्वरूप बदलकर एक पत्र गृहमंत्री के लिए भेजा गया जिसमें संकल्प व्यक्त किया गया कि अधिकारी संघ सरकार से कोई टकराव नहीं चाहता। वह सरकार के अनुयायी के रूप में ही कार्य करेगा, हमें कोई शिकायत सरकार से नहीं है, ग़लत व्यक्ति को सज़ा देना सरकार का कर्त्तव्य है। इस 6 घण्टे की लम्बी बैठक के बाद यह माफ़ीनामा चौधरी साहब के पास अधिकारी संघ की ओर से भेजा गया। इस प्रकार चौधरी चरण सिंह की प्रशासनिक क्षमता का एक नमूना हमारे सामने है।

कृषि एवं राजस्व मंत्रालयः

दिसम्बर 1939 में आपने ''भूमि उपयोग बिल'' तैयार किया जिसके अन्तर्गत प्रदेश से कृषि जोतों में स्वामित्व का अधिकार ऐसे काश्तकारों या किसानों को दिये जाने का प्रस्ताव रखा गया जो सरकारी कोष में वार्षिक लगान के दस गुने के बराबर की रकम अपने भूस्वामी के नाम जमा करने के लिए तैयार

थे बाद में यही प्रस्ताव भूमि सुधार कार्यक्रम का आधार बना। तदोपरान्त अप्रेल में कांग्रेस विधायक दल कार्यकारिणी में प्रस्तुत प्रस्ताव द्वारा कुल सरकारी नौकरियों में 50 प्रतिशत स्थान किसान कामगारों एवं उनके आश्रितों के लिए आरक्षित करने की माँग की किन्तु यह प्रस्ताव गिर गया।

भूमि सुधार के क्षेत्र में उत्तर प्रदेश ने सारे राष्ट्र को मार्ग दिखाया। इस सन्दर्भ में सभी उपलब्धि चौधरी साहब के द्वारा ही हासिल की गयीं, इसकी विस्तृतविवेचना करना सम्भव नहीं किन्तु संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है–

1 जुलाई 1952 को कानून संग्रह में शामिल ज़मींदारी उन्मूलन भूमि सुधार अधिनियम के अन्तर्गत, हालाँकि उत्तर प्रदेश के सभी मैदानी भागों की सब भूमि का स्वामित्व सरकार के हाथों चला गया, फिर भी सभी पुराने भू स्वामियों या ज़मीदारों को भूमिधर घोषित किया गया। तद्नुसार उन्हें स्वयं करने वाली खेती तथा उससे सम्बद्ध कुँआ, वृक्ष, मकान आदि पर उनका अधिकार हो गया। इसी प्रकार सभी काश्तकारों को उन जोतों का ''सीरदार'' घोषित किया जिन्हें वह जोत रहे थे। उन्हें कृषि कार्यों, बागवानी तथा पशुपालन के लिए भूमि उपयोग का पूरा अधिकार दिया गया, किन्तु हस्तान्तरण का अधिकार सीरदारों को नहीं मिला किन्तु जिन्होंने अपने लगान का दस गुना के बराबर की रकम सरकारी खाते में जमा कर दी थी उनको लगान में 50 प्रतिशत कटौती का हक़दार बनाया गया और उनकी तरक्की कर उन्हें ''भूमिधर'' का दर्ज़ा दिया गया। यह योजना राष्ट्रीय स्तर पर अपना ली गई।

पुनः अपनी गहन अध्ययनशीलता के आधार पर चरण सिंह जी को महसूस हुआ कि पुराने ज़मींदार पुनः ज़मीन खरीद कर या अन्य ग़लत तरीक़ों से अपने पास संग्रहीत कर लेंगे। अतः यह प्राविधान किया कि भविष्य में किसी भी परिवार पर (पति–पत्नी व नाबालिग बच्चे) 12 एकड़ से अधिक भूमि नहीं रह जायेगी तथा जब भी किसी विभाजन के मुक़दमे में कचहरी के समक्ष रखी गयी जोत का आकार 3–1/4 एकड़ से अधिक न होगा, कचहरी उसे विभाजित करने के बजाय उसे बेचकर उसकी आय का बँटवारा करने को निर्देशित करेगी।

कारखाने, स्कूल, अस्पताल या अन्य सार्वजनिक उद्देश्य के लिये भूमि अनिवार्य अधिग्रहण के सन्दर्भ में चौधरी ने उत्तर प्रदेश के भूमि अधिग्रहण का क़ानून पुस्तिका में इस आशय का नियम जोड़ा कि यदि उसके आधे मील की परिधि में कोई जोत के अयोग्य भूमि उपलब्ध है तो कृषि योग्य भूमि को अधिग्रहीत नहीं किया जा सकेगा। लगभग 15 वर्ष बाद भारत सरकार ने भी इस नियम का अनुसरण किया।

शहरी क्षेत्रों से जर–ए–चहरूम की प्रथा भी चौधरी साहब ने ही समाप्त की, तदनुसार भू–स्वामी या पट्टादाता क्रेता या विक्रेता से उसकी कीमत का चौथाई भाग वसूल करता था; समाप्त हो गया।

ज़मींदारी उन्मूलन तथा भू–स्वामी काश्तकार सम्बन्धों की समाप्ति और सारे राज्य में कृषि की समानता के लाये जाने से अब जोतों की चकबन्द का कार्य आसान हो गया था। अतः श्री सिंह ने अविलम्ब इसके लिये क़ानून बना दिया और कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था कर दी किन्तु कुछ समाजवादियों व काँग्रेसियों ने इसका डटकर विरोध किया तथा 1959 में श्री चरण सिंह के त्यागपत्र के

बाद मुख्यमन्त्री डॉ. सम्पूर्णानन्द ने इसे रद्द कर दिया। किन्तु एक माह के बाद ही राष्ट्रीय योजना आयोग ने इस योजना को स्वीकार किया और सारे देश में लागू कर दिया। 1948 के कृषि आयकर अधिनियम को चौधरी साहब ने रद्द कर दिया। इसके स्थान पर बड़ी कृषि जोतों के कराधान का अधिनियम बनाया जो कि किसानों के लिये वरदान सिद्ध हुआ क्योंकि भ्रष्टाचार व परेशानी से वह बच गये तथा बेईमान बड़े किसानों के लिये आयकर चोरी का रास्ता बन्द हो गया। इस प्रणाली में बागवानी आदि को मुक्त कर वृक्षारोपण का रास्ता खुला रखा गया।

एक ओर ज़मींदारी उन्मूलन व भूमि सुधार अधिनियम लागू किया जा रहा था, दूसरी तरफ प्रदेश के 28,000 पटवारी जो मालगुजारी प्रशासन की आवश्यक कड़ी थे, वेतनवृद्धि तथा अन्य सुविधाओं के लिये आन्दोलन कर रहे थे। श्री चरण सिंह ने उन्हें सलाह दी कि जनहित में कुछ समय के लिये आन्दोलन वापिस ले लें या त्यागपत्र दे दें। इस पर सभी पटवारियों ने सामूहिक रूप से त्यागपत्र दे दिया। चौधरी जी ने स्थिति से निपटने के लिये त्यागपत्र स्वीकार कर लिये और लेखपाल नाम से नयी नियुक्तियाँ कर दीं जिसके लिये उन्हें अनेकों विरोधों का सामना करना पड़ा किन्तु इसका परिणाम यह हुआ कि आगामी 13 वर्ष तक प्रदेश में कोई कर्मचारी हड़ताल पर नहीं गया।

भूमि सम्बन्धी नियमः

1954 में क़ानून संग्रह में 'भूमि संरक्षण अधिनियम' को शामिल किया तथा कानपुर के राजकीय कृषि महाविद्यालय के दो वर्ष के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में एक पृथक विषय के रूप में शामिल कर चौधरी पुनः देश के अगुआ बने। इसी प्रकार भूमि परीक्षण परियोजना तथा कृषि के लिये आवश्यक पदार्थ उपलब्ध कराने हेतु कृषि संरक्षण संगठन की स्थापना की। उत्तर प्रदेश में किये गये क्रान्तिकारी भूमि सुधारों की सफलता का मूल्यांकन विख्यात कृषि विशेषज्ञ श्री वुल्फ लेजेन्सकी, (फोर्ड फाउण्डेशन) ने भारत के गहन कृषि विकास कार्यक्रम वाले ज़िलों का अध्ययन करने भारत भेजा था, के इन शब्दों से किया जा सकता है–

''भूमि सम्बन्धी नियम केवल उत्तर प्रदेश में ही सुस्पष्ट और विस्तृत बनाये गये हैं और प्रभावकारी तरीके से इन्हें लागू किया गया है। वहाँ लाखों काश्तकारों और उप काश्तकारों को स्वामी बना दिया गया और सैकड़ों, हज़ारों ऐसे लोगों को जिन्हें बेदखल कर दिया गया था उनके अधिकार वापस दिलाये गये।'' (पृष्ठ 3 रिपोर्ट प्रेषित योजना आयोग 1963)।

प्रशासनिक समस्यायें इन सुधारों को लागू करने के रास्ते की बहुत बड़ी बाधा हैं, दूसरी ओर भारत के सबसे बड़े और सर्वाधिक जनसंख्या वाले राज्य उत्तर प्रदेश के अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि यदि सामना करने की इच्छा है तो कोई बाधा नहीं है जिसे दूर नहीं किया जा सके। अधिक प्रासंगिक (समस्या) कई क़ानूनों का दोषपूर्ण अन्तर्विषय है।'' (टाइम्स ऑफ इण्डिया, 9 सितम्बर 1964 में प्रकाशित लेख)

जनता सरकार के गठन के बाद केन्द्रीय गृहमंत्री होते हुये भी चौधरी चरण सिंह ने अपने को ग्रामीण विकास के प्रधान उद्देश्य से पृथक नहीं कर सके। अगली पंचवर्षीय योजना का प्रारूप तैयार

कराने में चौधरी साहब ने विशेष रुचि दिखायी और 33 प्रतिशत गाँवों के लिये बजट में व्यवस्था करायी, किसानों के लिये हर सम्भव लड़ाई मन्त्रिमण्डल में रहकर भी वह लड़ते रहे और मात्र इन्हीं सवालों पर मतभेद होने के कारण मन्त्रिमण्डल से पृथक होना पड़ा। वर्ष 1977 में जनता पार्टी के विधिवत् गठन के बाद जिसके अध्यक्ष श्री चन्द्रशेखर बनाये गये थे प्रथम बैठक में चौधरी चरण सिंह ने देश–विदेश की कृषि व्यवस्था का गहन अध्ययन कर एक 66 पेज़ का नोट तैयार कर, जनता कार्य समिति के समक्ष प्रस्तुत किया, जिसका संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार था–

1– भारत के लिये सहकारी खेती अनुपयोगी है। अधिक उपज लेने और अधिक रोज़गार देने के लिये स्वतन्त्र वैयक्तिक कृषि व्यवस्था को प्रोत्साहन देना चाहिये।

2– प्रति व्यक्ति आय बढ़ाने और प्रति एकड़ श्रमिकों की संख्या घटाने की आवश्यकता है, शेष लोगों को अन्य लघु उद्योगों में लगाया जाये।

3– हमारे यहाँ ज़मीन कम है अतः वैज्ञानिक उपकरणों से पैदावार बढ़ायी जाये।

4– खेती की चकबन्दी अनिवार्य है अतः मध्यम किस्म के फार्म बनाये जायें। एक व्यक्ति के पास 2.5 एकड़ से छोटी और 27 एकड़ से बड़ी जोत नहीं होनी चाहिये।

5– भूमि सुधार सख्ती से लागू किये जायें और बड़े भूपतियों को समाप्त किया जाये।

6– औद्यागिकीकरण के आइने में पहले कुटीर उद्योग, फिर लघु उद्योग और अंततः भारी उद्योग को स्थान मिलना चाहिये।

7– सम्पूर्ण बजट का 40 प्रतिशत कृषि पर व्यय किया जाये।

8– कुल बिजली का 50 प्रतिशत गाँवों में दिया जाये तथा बिजलीघर शहर व गाँव दोनों में समान रूप से बनाये जायें।

9– प्रति 10,000 की जनसंख्या पर गाँवों में अनाज गोदाम (वेयर हाउस) तैयार किये जायें तथा इन सुरक्षित अन्न भण्डारों के आधार पर 80 प्रतिशत तक ऋण दिया जाये, साथ ही बाज़ार में अन्न की कीमतें बढ़ने पर, अन्न निकाल कर बेचने की स्वतन्त्रता दी जाये।

इसी आधार पर चौधरी साहब ने गाँवों में बिजली, पेयजल, सड़क निर्माण आदि कार्यों के लिए मंत्रिमण्डल में रहकर प्रधानमन्त्री की इच्छा के विपरीत भी अनेक निर्णय कराये और ग्रामीण किसानों व मज़दूरों के हित में अनेक निर्णय कराये।

केन्द्रीय वित्त मंत्री के रूप में भी आपने ऐसा बजट प्रस्तुत किया कि बड़े उद्योगों पर बड़े–बड़े टैक्स लगाकर और कुटीर व लघु उद्योगों के टैक्स घटाकर सही किसानोन्मुखी समाजवादी दिशा में देश को बढ़ाने का मार्ग प्रशस्त कर दिया। वह एक ऐतिहासिक घटना थी जब केन्द्रीय वित्त मंत्री व उप–प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह पूँजीपतियों से टक्कर लेने के लिए सीधे मैदान में उतर आये। इसके पीछे उनकी ईमानदारी, आदर्शवादिता और बेबाक निर्णय लेने की अटूट क्षमता ही काम आयी, सारे देश के पूँजीपति अपने पर हुए इस हमले से तिलमिला गये और बजट को घोर प्रतिक्रियावादी, जनविरोधी आदि अनेक अलंकारों से अभिहित किया किन्तु उसके व्यापक प्रभाव हुए और गरीबों तथा किसानों को

राहत प्राप्त हुई क्योंकि उनके उपयोग की खेती एवं किसानों की वस्तुओं पर टैक्स घटा दिये गये थे। इस प्रकार केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल में रहकर भी चौधरी साहब ने देहात और गरीब की बात को आगे बढ़ाने का कार्य किया।

अन्य विविध विभागों में:

पशुपालन विभाग में रहकर आपने 1954 में मवेशी अतिक्रमण अधिनियम को संशोधित किया। प्रदेश में गौहत्या निवारण अधिनियम की तैयारी कर उसे 1955 में अधिनियम का रूप दिया। प्रदेश गौशाला अधिनियम तथा 1964 का मवेशी सुधार अधिनियम बनाना भी चौधरी साहब की उपलब्धि थी। 1953–54 में मवेशी मण्डियों के नियंत्रण के लिए एक विशेष विधेयक तैयार कराया, जो देश के स्तर पर पहला क़दम था, किन्तु पन्त जी दिल्ली चले गये, चौधरी साहब का विभाग बदल दिया गया फिर इसे अन्तिम रूप न मिल सका।

परिवहन विभाग में रहकर बसों तथा सार्वजनिक वाहनों के संचालन मेंवर्षों से पायी जाने वाली अनियमितताओं तथा भ्रष्टाचार पर रोक लगाने के अनेक कार्य किये। इस बात की व्यवस्था की गयी कि परमिट और पंजीकरण दोनों में से उसी एक नाम में इन्दराज़ किया जाये जो वास्तविक स्वामी है तथा एक से अधिक परमिट देने पर रोक लगा दी। नाबालिग, स्त्री, अपंग व विधवाओं को उपर्युक्त स्थितियों में छूट दी गयी।

1958 में एक वर्ष से भी कम अवधि के लिए वित्त विभाग सँभाला इस दौरान सार्वजनिक धन की बर्बादी को रोकने के कारगर उपाय किये। खाद्यान्न व्यापारियों पर लगाये जाने वाले विक्रय की पुरानी प्रणाली को पूर्णतः संशोधित किया।

1958–59 में चार माह के लिये सिंचाई व ऊर्जा विभाग देखा। जब इन क्षेत्रों में भ्रष्टाचार की जाँच शुरू की तो विभाग वापिस ले लिया गया। इसका कारण यह भी था कि चरण सिंह ने रिहन्द बाँध परियोजना से प्राप्त समस्त विद्युत शक्ति के आधे से अधिक बिजली, बिड़ला परिवारों को एल्यूमिनियम कारखाने के लिए देने का कड़ा विरोध किया, जो मुख्यमन्त्री डॉ. सम्पूर्णानन्द को अखर गया। जल मार्गों के निर्माण का कार्य भी, जिसके कारण करोड़ों रुपये के नलकूप कई वर्षों से बेकार खड़े थे, आपकी विशेष उपलब्धि हैं। फरवरी 1966 में स्थानीय स्वायत्त शासन विभाग सँभालते ही म्यूनिसपिल सेवाओं को केन्द्रित करने हेतु आवश्यक नियम बनाये जिससे सदस्यों की गुटबन्दी में कमी आयी। समितियों के संचालन में मितव्ययता लाने तथा उनके वित्त प्रबन्ध में सुधार लाने के लिए समिति का गठन किया, वेतन आयोग के बिना ही कर्मचारियों के वेतन सुधारे तथा कुछ समितियों का स्तर उठाया।

वन विभाग में रहकर भूमि पर अनाधिकृत कब्ज़े सख़्ती से रोके गये और बेदखली क़ानून सरल किया गया। निजी वन भूमि के असंख्य टुकड़े मालिकों को दे दिये तथा प्रशासन योग्य क्षेत्र ही अपने पास रखे। वन्य जीवन सुरक्षा विधेयक तैयार किया, लगभग 1600 वर्गमील जंगल जो कि ज़िला के प्रशासन से सम्बद्ध थे तथा बेकार हो गये थे, वन विभाग में शामिल कर दिए गये। यमुना, चम्बल की घाटियों को जंगल बनाने की योजना तैयार की, जिसने तमाम उपजाऊ भूमि के कटाव को रोकने तथा

अपार वन सम्पदा देने का कार्य किया। इसी कालान्तर में सरकारी पक्की सार्वजनिक निर्माण विभाग की सड़कों पर वृक्षारोपण का कार्य 1966 में वन विभाग ने स्वयं किया। ज़मींदारों के लिए वनों के विकास को द्रुतगामी गति प्रदान की तथा टेहरी क्षेत्र में प्राप्त वनों के संरक्षण का असाध्य प्रश्न जो 15 वर्ष से अनिर्णीत खड़ा था, एक अधिनियम द्वारा हल कर दिया गया। दूसरी ओर मंत्रियों के सादा जीवन के लिए आपने सदा आवाज़ उठायी, मंत्रियों का वेतन घटाकर 1000 रुपया प्रतिमास, प्रयोग के लिए छोटी एम्बेसडर कार, ट्रेन यात्रा में पी.ए.सी. गार्द की समाप्ति के निर्णय आपने ही कराये। प्रधान मंत्रित्व काल में श्री श्यामनन्दन मिश्र के संयोजकत्व में एक समिति गठित की, जो मंत्रियों के भारी व्यय पर प्रतिबन्ध लगाने के उद्देश्य से गठित की गयी थी। आपने मंत्रिपद को सदैव जनसेवा का अवसर मानकर कार्य किया और त्यागपत्र सदैव साथ लेकर चले और जब भी जनहित का प्रश्न उठा त्यागपत्र दे दिया। महत्वपूर्ण त्यागपत्र इस कालान्तर में क्रमशः मार्च 1947, जनवरी 1948, अगस्त 1948, मार्च 1950, जनवरी 1951, नवम्बर 1957, अप्रेल 1959 तथा अगस्त 1963 में दिये। इसी प्रकार केन्द्रीय मंत्रिमण्डल से 1977–78 में तीन बार त्यागपत्र दिये। प्रधानमंत्री के रूप में चौधरी चरण सिंह स्वयं एक छोटे से बंगले (12 तुगलक रोड) में रहे जो उनको सांसद के रूप में मिला था। प्रधानमंत्री की सभी शानोशौकत उन्हें छू तक नहीं गयी थीं। उनके जैसी सादगी देश के किसी दूसरे नेता में देखने को नहीं मिलती। यद्यपि वह अपने इतने लम्बे जीवन में काफी समय तक मंत्रिमण्डल में रहे हैं किन्तु सत्ता का नशा, भ्रष्टाचार, ऐशो आराम व ऐयाशी के वह प्रबल विरोधी रहे। यही कारण है कि वह सामान्य ग़रीब जनता के हित में सोचते और यथा–शक्ति उन पर निर्णय भी कराते रहे।

4. जनता पार्टी उद्‌भव एवं पराभव

डॉ. राममनोहर लोहिया का यह वाक्य कितना प्रमाणिक प्रतीत होता है कि ''लोग मेरी बात मानेंगे मेरे मरने के बाद।'' जनता पार्टी के प्रसवकाल की घटनायें घटीं उस समय सम्भवतः चौधरी चरण सिंह डॉ. लोहिया के वाक्यों से प्रभावित हुए थे।

लोहिया जी ने 1967 में कांग्रेस विरोधों मोर्चे का गठन कर आठ प्रदेशों से कॉंग्रेस को सत्ताच्युत कर दिया था। इसके पीछे उनकी मात्र धारणा यही थी कि देश का विरोधपक्ष टुकड़े–टुकड़े होकर विपक्ष में सम्मान नहीं प्राप्त कर पाता। यदि सभी विपक्षी दल संगठित होकर कांग्रेस का विकल्प प्रस्तुत करें तो एक क्षण भी कांग्रेस सत्ता में नहीं रह सकती। 1967 के गठबन्धन के बाद महत्त्वाकांक्षा की आग में विपक्षी एकता धू–धू कर जलती रही और दस वर्ष तक फिर कांग्रेस शासन पर बैठी अपने हाथ तापती रही। लेकिन चौधरी साहब जो समय की गति को ठीक तरह देखना जानते थे, मात्र वह व्यक्ति थे जो कांग्रेस त्यागने के बाद ही डॉ. लोहिया की आधारशिला पर महल खड़ा करने का सपना दिल में संजोये राजनैतिक डगर पर बढ़ते जा रहे थे। संविद सरकारों की हिलती नौकाओं से आगे बढ़ते–बढ़ते वह जब कांग्रेस से क्रान्तिदल और फिर भारतीय लोकदल के उद्‌भव तक राष्ट्रीय स्तर पर कांग्रेस के विकल्प का बीजारोपण करने में सफल हो गये। अब प्रश्न था इस अंकुर को सींचकर वृक्ष तैयार करने का कार्य, जिसके लिये उन्हें अपने सहयोगी राजनारायण, पीलू मोदी, बीजू पटनायक, कर्पूरी ठाकुर, चौधरी देवीलाल और रविराय जैसे माली मिल गये थे वहीं अकाली दल प्रकाश सिंह बादल के नेतृत्व में चौधरी साहब पर न्यौछावर था। जिसके कारण वृक्ष अपनी शाखाओं द्वारा उत्तरप्रदेश से हरियाणा, बिहार, गुजरात, उड़ीसा व राजस्थान पंजाब तक अपना सबल अस्तित्त्व बना गया था। तभी देशव्यापी असन्तोष, आसमान छूती हुई कीमतें, सिर तक डूबा भ्रष्टाचार, अभाव और अव्यवस्था के कारण प्रस्फुटित हुआ और गुजरात से आन्दोलन के रूप में छात्रों और नौजवानों ने शासन के विरूद्ध बगावत का झण्डा उठाया उनकी मांग विधान सभा भंग करना थी जो पूरी हुयी। इस प्रकार देश को एक नई दिशा मिली और शनैः–शनैः यह आन्दोलन बिहार से होकर सारे देश को हिलाने लगा। इस आन्दोलन की विशेषता यह रही कि आन्दोलन युवा पीढ़ी ने उठाया था और पूर्णतः गैर राजनैतिक सीमाओं में रखने का निर्णय लिया गया था किन्तु इतिहास की गति के अनुरूप वह पूर्णतः राजनैतिक बनता चला गया, लेकिन बाबू जयप्रकाश को नेतृत्व सौंपा गया था अतः बाह्यरूप गैर–राजनैतिक अवश्य रहा। जहाँ एक ओर बाबू जयप्रकाश आन्दोलन के राष्ट्रीय स्वरूप और दलविहीन लोकतंत्र के लिए चिंतित थे, वहीं दूसरी ओर चौधरी चरणसिंह आन्दोलन की अव्यवहारिकता बताते हुए विपक्षी राजनीति को एक मंच पर खड़ा करने को आतुर थे। इस प्रकार आपात्‌काल के एक वर्ष पूर्व की स्थिति में देश में दो विचार धाराओं का साथ–साथ प्रादुर्भाव हुआ और अतंतः दोनों विचारों में साम्य स्थापित किया गया तथा चौधरी साहब की धारणा से जे. पी. ने सहमति व्यक्त करते हुये आन्दोलन के साथ राजनैतिक एकीकरण के उद्‌देश्य के

लिये अपना विचार बना लिया क्योंकि जयप्रकाश जी पर कुछ राजनैतिक विचारकों की इन प्रतिक्रियाओं का प्रभाव पड़ा कि ''दल विहीन लोकतन्त्र खयालीपुलाव है और जे. पी. शून्य में भटक रहे हैं।''

जनता पार्टी के निर्माण की कहानीः

चौधरी चरणसिंह ने जे. पी. से अनुरोध किया कि वह संगठन कांग्रेस, (सिंडीकेट) जनसंघ एवं सोशलिस्ट पार्टी को मिलाकर हमारे भारतीय लोकदल का नेतृत्व करें ताकि कांग्रेस को शिकस्त दी जा सके किन्तु इस बात से जे. पी. सहमत नहीं थे उनका कहना था कि सभी प्रजातांत्रिक दलों के विधानसभा चुनावों में यह प्रयोग किया जाना चाहिए। किन्तु जब गुजरात के विधानसभा चुनावों में यह प्रयोग (संयुक्त मोर्चा का स्वरूप) असफल हो गया तो नए दल के गठन के पक्ष में वातावरण तैयार हुआ इससे यह बात सिद्ध हो जाती है कि कांग्रेस विकल्प के लिये नये दल के गठन के पक्ष में प्रारम्भ से यदि कोई प्रयत्नशील था तो वह भारतीय लोकदल के राष्ट्रीय अध्यक्ष चौधरी चरणसिंह का दूरदर्शी व्यक्तित्व था। तभी तो बीजू पटनायक कहते थेः–

''जितने पूर्वाग्रहों, संकोचों, हिचकिचाहटों तथा जानी–अनजानी भयंकर प्रसव पीड़ाओं को भोगने के बाद जनता पार्टी का जन्म सम्भव हुआ, विलय की उन समस्त प्रतिक्रियाओं की जब–जब याद आती है, तो अनायास ही मेरा मन चौधरी चरणसिंह जी के प्रति आदर, श्रद्धा एवं उपकार की भावना से जुड़ जाता है। यदि चौधरी साहब कांग्रेस के विकल्प की सिद्धि के प्रति इतना समर्पित, भावुक और प्रतिबद्ध नहीं होते तो क्या देश तानाशाही के शिकंजे से इतनी जल्दी मुक्ति पा सकता था?'' (रविवारसाप्ताहिक 15 अक्तूबर, 1978 कलकत्ता)

सभी दलों के एकीकरण सम्बन्धी चौधरी साहब के प्रस्ताव के लिये सभी दलों की बैठक बुलाई जाने वाली थी तभी 25 जून 1975 को आपात्काल की घोषणा कर श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने इस प्रयास को एक बार झकझोर दिया।

चौ. चरणसिंह तिहाड़ जेल में बन्द किए गए, जयप्रकाश, मोरारजी, राजनारायण आदि हरियाणा में। तभी नानाजी देशमुख तत्कालीन जनसंघ के संगठनमंत्री और श्री सत्यपाल मलिक तत्कालीन भालोद के संगठन मंत्री, लोक संघर्ष समिति के संयुक्त संयोजक के रूप में देशभर के विपक्षी दलों के कार्यकर्ताओं के नाम परिपत्र भेजकर गिरफ्तारी देने और जेल भरो आन्दोलन तथा भूमिगत आंदोलन को सक्रिय बनाने के लिये संलग्न हो गए। श्री मलिक एवं मा. ओमपाल सिंह जब उत्तरप्रदेश व जम्मू होकर आगरा से दिल्ली और उड़ीसा के दौरे पर जा रहे थे, लेखक डॉ. के.एस.राना के पास भगतसिंह छात्रावास में दो दिन रूके उन्होंने आगरा में बताया कि– ''नानाजी और बालासाहब देवरस आन्तरिक रूप से कुछ भयभीत हैं और संघ के कार्यकर्ताओं को युवक कांग्रेस में शामिल होकर इन्दिरा के 24 सूत्रीय कार्यक्रम के लिये कार्य करने का परिपत्र जारी करने जा रहे हैं'', आपात्काल के बाद यह परिपत्र पं. ब्रहमदत्त (कालांतर में कांग्रेस मंत्री) ने भालोद की बैठक में प्रस्तुत किया था और विलय का विरोध किया था किन्तु उस समय तक चौधरी साहब को जनसंघ वालों की देशभक्ति पर लेशमात्र भी संदेह नहीं था।

जब आन्दोलन अपने भूमिगत, जेलभरो तथा आन्तरिक सौदेबाजी के दौर से गुज़र रहा था तो चौधरी चरणसिंह जेल में प्रकाशसिंह बादल के साथ वार्ता कर विलय के प्रश्न को आगे बढ़ाने को उत्सुकता दिखाई तथा अपने मिलने वालों से इस व्याकुलता को उजागर किया। तभी नवम्बर 1975 में बाबू जयप्रकाश को मरणासन्न स्थिति में पैरोल दी गयी कि कहीं जेल में ही उनका जीवन समाप्त न हो जाये। जे. पी. सीधे अस्पताल गए और अपने इलाज में लग गए; अतः विशेष प्रगति इस दिशा में सम्भव न हुई। पुनः 1976 में चौधरी को जब रिहा कर दिया गया तब विलय के लिये उनके दिल में जो आग लगी थी उसको शांत करने की आशा से बम्बई में विपक्षी दलों के नेताओं की बैठक अपने निर्देशन में बुलाई, जिसमें एक समिति का गठन इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाने हेतु किया गया। जिसमें सर्वश्री एन. जी. गोरे संयोजक तथा एम. एम. पटेल, शांतिभूषण, सुरेन्द्र मोहन और ओ. पी. त्यागी सदस्य थे; इस समिति को जयप्रकाश जी का आशीर्वाद प्राप्त था। चौधरी साहब ने इसके तुरन्त बाद भालोद की राष्ट्रीय समिति की एक बैठक 4–5 अप्रेल 1976 को बुलाई जिसमें इस समिति के महत्व की समीक्षा करते हुए कांग्रेस का विकल्प तैयार करने हेतु भालोद द्वारा अपना सर्वस्व त्याग कर आगे आने की पेशकश की, इस निर्णय से संयोजक समन्वय समिति को अवगत करा दिया।

किन्तु सोशलिस्ट पार्टी, संगठन कांग्रेस व जनसंघ इस दिशा में अभी तक कोई पहल करने को आतुर नहीं थे प्रतिफलस्वरूप 22–23 मई को बम्बई में नेताओं द्वारा दूसरी बैठक में भी विलय के प्रस्ताव पर गम्भीरता से विचार नहीं किया गया। तब चौधरी ने जे. पी. से कोई युक्ति निकालने का आग्रह किया जिसके आधार पर जे. पी. ने 26 मई को ही चारों दलों के विलय की प्रस्तावना तैयार की और जून के अन्तिम सप्ताह में इनका संयुक्त सम्मेलन बुलाया। किन्तु कार्यकारिणी ने 30–31 मई को पुनः एक बैठक में प्रस्ताव पारित कर जे. पी. से अनुरोध किया कि अभी तक शेष तीनों दलों ने विलय के सन्दर्भ में अपना मस्तिष्क तैयार नहीं किया है, अतः आप उन पर दबाव डालें और सम्मेलन तभी बुलायें जब वह दल मोर्चे का विचार त्यागकर विलय करने का प्रस्ताव पारित कर दें। किन्तु कुछ समय में ही आकर्षक घटना सामने आयी कि संगठन की गुजरात शाखा ने बाबूभाई पटेल व पश्चिम बंगाल ने प्रताप चन्द्र चन्दर के निर्देशन में विलय के विरोध में प्रस्ताव पारित कर दिये, इसी प्रकार बिहार, उड़ीसा, आसाम की संगठन कांग्रेस भी विलय के विरोध में खुलकर सामने आ गयी।

8 जुलाई 1976 को दिल्ली में एक बैठक हुई जिसमें चौधरी चरण सिंह के अतिरिक्त एन. जी. गोरे, ओ. पी. त्यागी, अशोक मेहता, भानुप्रताप सिंह आदि ने भाग लिया किन्तु इसमें कोई निर्णय नहीं लिया जा सका। गतिरोध का मुख्य मुद्दा यह था कि काफी नेता जेल में थे अतः उनकी राय कैसे जानी जाये?

इस बैठक में उल्लेखनीय बात यह थी कि चौधरी चरणसिंह ने नेताओं की लिखित राय जानने की पेशकश की और यह बात स्पष्ट कर दी कि विलय केवल उन्हीं दलों में होगा जो अन्यथा सम्बद्ध नहीं होंगे, अथात् दोहरी सदस्यता मान्य नहीं होगी जिसको स्वीकार करते हुए ओ. पी. त्यागी ने कहा था कि संघ पर प्रतिबन्ध लगा है, अतः उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। इसी दिन बैठक के निर्णय की

विफलता से व्यथित होकर चौधरी चरण सिंह ने 8 जुलाई की शाम को ही एक पत्र दिशा निर्देशन समिति के संयोजक एन. जी. गोरे के नाम लिखा–

''मैं यह बात दोहराना चाहता हूँ कि समय का बहुत महत्व है। यद्यपि कुछ दलों के लोग मेरे इस दबाव का आशय मेरा व्यक्तिगत स्वार्थ समझते होंगे, आप उन्हें विश्वास दिलायें कि मैं किसी तरह नये दल का नेतृत्व स्वीकार नहीं करूँगा जैसे ही नये दल का गठन हो जायेगा, यदि मैं स्वयं को राजनैतिक नेता होने के अयोग्य पाऊँगा तो सदा के लिए राजनीति से संन्यास ले लूँगा। लेकिन प्रजातन्त्र की सफलता के लिए कांग्रेस का प्रजातान्त्रिक विकल्प बनाना अत्यावश्यक है।''

इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भालोद और उसके नेता चौधरी चरण सिंह के दिल में विलय द्वारा नये दल के उद्‌भव के लिए कितनी व्याकुलता थी। वहीं अन्य राजनैतिक दल अनिश्चितता की स्थिति से गुज़र रहे थे और नये दल की आवश्यकता को गम्भीर रूप से न लेकर अपनी–अपनी खिचड़ी पका रहे थे।

इसी स्थिति के चलते–चलते आखिर 16–17 दिसम्बर को एक महत्वपूर्ण बैठक नईदिल्ली में हुई जिसमें संगठन कांग्रेस जो विलय के लिए सबसे बड़ा सिरदर्द बनी हुई थी, ने कुछ शर्त रख दी कि वह अपनी जनरल बॉडी की बैठक बुलायेंगे, क्योंकि उनके ट्रस्ट आदि के मसले हैं अतः सभी दल अपने प्रस्ताव कर संगठन कांग्रेस में विलय कर दें और नाम (जनता कांग्रेस) रख दिया जाये। इस पर जनसंघ और समाजवादी क्रमशः अटलबिहारी वाजपेयी, ओ. पी. त्यागी, सुरेन्द्र मोहन आदि सहमत हो गये किन्तु जे. पी. व चौधरी ने ''कांग्रेस'' नाम से असहमति व्यक्त करते हुए उनके अड़ियल रवैये को भाँप लिया कि मोरारजी दल का अध्यक्ष बनना चाहते हैं। इस प्रश्न पर सहमति लेने का निर्णय इन नेताओं ने लिया किन्तु चन्द्रशेखर जो उस समय जेल में थे मोरारजी के नेतृत्व पर किसी प्रकार सहमत नहीं हो पा रहे थे। इसी दौरान 16 जनवरी 1977 को चौधरी ने जे. पी. को पुनः पत्र लिखा–

''नये दल का गठन हो सकेगा, यह विश्वास जनता को हम नहीं दे पा रहे हैं। संगठन कांग्रेस वाले रोड़े अटका रहे हैं। यदि वह सहमत भी हो जायें तो फरवरी गुज़र जायेगी, जबकि आम चुनाव सम्भावित हैं, अतः दल का गठन चुनाव से पूर्व हो जाना आवश्यक है क्योंकि चुनाव घोषणा के बाद बने दल का वह प्रभाव नहीं बन पायेगा जो चुनाव से पूर्व बनेगा।''

तभी अचानक दो दिन बाद 18 जनवरी को इंदिरा गाँधी ने चुनाव घोषणा कर विपक्ष को संकट में डाल दिया। 19 जनवरी को मोरारजी देसाई जेल से रिहा हुए तो पीलू मोदी उनसे मिलने गये। उस समय मोदी स्तब्ध रह गये जब देसाई ने तपाक से कहा ''अच्छा हुआ चुनाव घोषित हो गया, विलय के पाप से बच गये अब इसे मोर्चा बनाकर लड़ लिया जायेगा।''

जब यह बात चौधरी को बताई गयी तो वह क्रोध में आकर कहने लगे ''मर्जर (विलय) हमारा एकसूत्रीय कार्यक्रम है कोई मोचेबन्दी नहीं चलेगी।''

रात को मोरारजी के निवास पर सभी दलों के नेताओं की बैठक हुई जिसमें चरण सिंह, अटलबिहारी, सुरेन्द्र मोहन, पीलू मोदी, नानाजी देशमुख, एन. जी. गोरे व अशोक मेहता शामिल हुए और

देसाई ने अध्यक्षता की। बैठक में गतिरोध पैदा हो गया। पहले मोरारजी ने मोर्चे की पेशकश की जब चौधरी व गोरे ने इस पर उत्तेजित होकर कड़ा रुखा अपनाया तो वह अध्यक्ष पद के लिए अड़ गये, बात आगे बढ़ गयी।

इस बीच भालोद में आन्तरिक तनाव पैदा हो गया क्योंकि भालोद के अधिकांश नेता अध्यक्ष पद पर विलय के लिए सर्वाधिक कसरत करने के कारण चौधरी चरण सिंह को चाहते थे। स्वयं चौधरी साहब के अनुरोध को भी मानने के लिए तैयार न थे। जे. पी. को दिल्ली फिर बुलाया गया उन्होंने फैसला कर दिया– ''यदि विलय करके एक दल नहीं बनाया जाता तो मैं चुनाव प्रचार नहीं करूँगा।'' इस पर मोरारजी झुके किन्तु अध्यक्ष पद छोड़ने को तैयार न थे, अतः जे. पी. ने निर्णय दिया– ''मोरारजी अध्यक्ष, चौ. चरण सिंह एकमात्र उपाध्यक्ष होंगे और क्योंकि चौधरी का उत्तर भारत पर सर्वाधिक प्रभाव है अतः चुनाव प्रचार प्रत्याशियों का चयन और समस्त रणनीति वही तैयार करेंगे।'' भालोद और उसके नेता चौधरी चरण सिंह ने अपने एक सूत्रीय कार्यक्रम को पूरा होते देखा तो सब कुछ समर्पित कर जे. पी. से सहमति व्यक्त कर दी। 23 जनवरी 1977 को देसाई के 5 डूप्ले रोड स्थित निवास पर जनता पार्टी के गठन घोषणा के साथ, चौधरी के तीन साल पुराने भागरथी प्रयास सफल हो गये।

यह बात भी स्मरणीय है कि विलय से पूर्व भालोद को छोड़कर शेष सभी दल चुनाव के बहिष्कार के लिये सोच रहे थे किन्तु चौधरी और जे. पी. के प्रयत्नों के कारण ही यह भय और अनिश्चितता का वातावरण समाप्त हुआ। इस समय अपना सब कुछ समाप्त कर चौधरी ने कुछ कथित नेताओं की इस धारणा को भी निर्मूल कर दिया कि चरण सिंह पद के लिए उत्सुक रहते हैं। यह बात भी स्मरणीय है कि यह चुनाव भालोद के नामांकन पत्र व सदस्यता पर ही लड़ा गया क्योंकि चुनाव आयोग ने जनता पार्टी को मान्यता नहीं दी थी, साथ ही इस चुनाव का नेतृत्व मात्र चौधरी चरण सिंह ने किया और अभूतपूर्व सफलता दिलाई जिसके परिणाम स्वरूप 23 मार्च को जनता शासन की स्थापना हुयी और कांग्रेस का विकल्प देश के सामने आया।

जनता के पतन का सूत्रपातः

जनता सरकार के चलते उन सभी घटकों में 1 मई 1977 के विधिवत् विलय की प्रक्रिया पूरे होने के साथ ही संगठन पर आधिपत्य जमाने के लिए आपसी समझौतों की प्रक्रिया आरम्भ हुई। पहला प्रश्न तो अध्यक्ष पद का ही था जिस पर शुरू से चौधरी, पीलू मोदी और कर्पूरी ठाकुर के नामों का प्रस्ताव कर रहेथे। किन्तु शीघ्र ही कुछ अन्य साथियों के परामर्श के बाद अध्यक्ष का नाम तय करने को जो समिति बनी उसके एक सदस्य राजनारायण ने अपना निर्णय बदल कर चन्द्रशेखर को अपना अध्यक्ष बनाने की सलाह दी यद्यपि उस समय यह निर्णय कराने में मात्र चौधरी साहब का हाथ था किन्तु वही चन्द्रशेखर चौधरी के लिए सिरदर्द साबित हुए। इसी प्रकार मोरारजी देसाई के प्रधानमंत्री बनाने के समय अहम् भूमिका चौधरी और उनके सहयोगी राजनारायण की रही।

चन्द्रशेखर को जनसंघ पर नियंत्रण रखने के उद्देश्य से सभी दलों ने समर्थन दिया था, यह एक कटु सत्य है। जब उत्तर भारत के आठ राज्यों में जून में हुये विधान सभा चुनावों के बाद सरकार बनाने का प्रश्न आया तो सरकारों में स्थायित्व की भावना को आगे रखकर चौधरी ने जनसंघ से समझौता करके मुख्यमंत्रित्व पद निर्धारित कर दिये। लेकिन जब संगठन के चुनाव की बात की गयी तो जनसंघ ने अपने आर.एस.एस. द्वारा अधिक सदस्यता बनाकर तथा पूँजीपतियों से चंदा एकत्र कर सारे संगठन पर अपना शिकंजा कड़ा करने और नानाजी देशमुख को अध्यक्ष बना लेने की सारी योजना तैयार कर ली। इससे जहाँ एक ओर चरणसिंह को उनकी नेकनियती पर अविश्वास पैदा हुआ वहीं चन्द्रशेखर ने अपने को बचाये रखने का मौका देखकर चौधरी से जनसंघ के साथ पैदा होते तनाव का लाभ उठाया और जो चन्द्रशेखर एक वर्ष तक दोहरी सदस्यता के निपटारे के लिये चीख रहे थे वही जनसंघ की रहनुमाई करने पर उतारू हो गये और भारतीय लोकदल को अलग–थलग करने की योजनाओं पर विचार विनिमय राष्ट्रीय स्तर पर शुरू हो गया। जनसंघ ने परिस्थितियों से समझौता कर चन्द्रशेखर को अध्यक्ष स्वीकार कर लिया जबकि चौधरी गुट का तर्क यह था कि चन्द्रशेखर एक वर्ष के लिये अध्यक्ष बने थे, संगठन के चुनाव कराना सम्भव नहीं है अतः आम सहमति से नये अध्यक्ष का चयन कर नई कार्यसमिति गठित की जानी चाहिये। इस प्रश्न को लेकर गम्भीर विवाद पैदा हो गया और भालोद की ओर से राजनारायण ने इस प्रश्न को सार्वजनिक रूप से उठाते हुये संगठन पर प्रहार आरम्भ कर दिये और दूसरी ओर से चन्द्रशेखर समर्थक प्रत्युत्तर देते रहे, लड़ाई अन्दर से बाहर आ गई, समाचार–पत्रों की गर्मी इसको हवा देने का कार्य कर रही थी।

दूसरी ओर मोरारजी ने मंत्रिमण्डल के गठन में अपने सात केबिनट मंत्री लेकर तथा जनसंघ व भालोद को तीन–तीन स्थान देकर समानुपात के नियम को तोड़ दिया, फिर राज्यपालों और राजदूतों के चयन में घोर पक्षपात किया। इस प्रकार लोकदल घाटे में रह गया, सर्वाधिक लाभ संगठन कांग्रेस को मिला जबकि चौधरी ने उत्तर भारत में टिकट वितरण के समय अपने को घाटे में रखकर भी अन्य घटकों को सन्तुष्ट किया था। फिर विधान सभाओं के मध्यावधि चुनाव और इन्दिरा गाँधी की गिरफ्तारी को लेकर भी चौधरी–देसाई विवाद खुलकर सामने आ गये। और जब जून 1978 में चौधरी को पक्षाघात का दौरा पड़ा और स्थिति नाजुक बन गयी तो देसाई ने चन्द्रशेखर से साठ–गाँठ कर चौधरी व राजनारायण से त्यागपत्र माँग लिये, बस पार्टी के पतन का बीजारोपण आरम्भ हो गया।

इस सन्दर्भ में एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह भी थी कि चन्द्रशेखर का अध्यक्ष पद का कार्य पूर्णतः भालोद विरोधी बनता चला गया। किसी भी प्रदेश में (हरियाणा को छोड़कर) चरणसिंह गुट का व्यक्ति प्रदेश जनता अध्यक्ष नहीं बनाया गया, न ही चुनाव पैनल में भालोद को स्थान दिया गया। बंगाल, बिहार, राजस्थान, संगठन कांग्रेस, दिल्ली, पंजाब, मध्य–प्रदेश जनसंघ को तथा शेष राज्यों में समाजवादी प्रदेश अध्यक्ष बनाये गये। ज़िला तदर्थ समितियों में भी भालोद के पुराने कार्यकर्त्ताओं को जान–बूझ कर उपेक्षित किया गया। दूसरे प्रदेशों में जहाँ भालोद के मुख्यमंत्री थे जान–बूझ कर

अव्यवस्था और अनुशासनहीनता फैलाकर अस्थिरता का वातावरण तैयार किया गया। प्रति छः माह बाद मुख्यमन्त्रियों को विश्वास मत हासिल करने के निर्देश राष्ट्रीय पार्लियामेंटरी बोर्ड द्वारा दिये जा रहे थे।

इस प्रकार इन समस्त कारणों से भी चौधरी परेशान थे किन्तु वह अन्तिम दम तक पार्टी की एकता को बनाये रखने के पक्षधर थे, इसी कारण अपना सर्वस्व समर्पित करके भी पार्टी के हित में झुक कर उप–प्रधानमंत्री के रूप में मंत्रिमण्डल में आने को पुनः सहमत हुये। यद्यपि 23 दिसम्बर 1978 की किसान रैली की ऐतिहासिक सफलता ने चौधरी चरण सिंह को विश्व के रंगमंच पर सर्वाधिक जनबलधारी नेता और कृषक मसीहा के रूप में पेश कर दिया था। इस जनशक्ति से भयभीत होकर ही मोरारजी देसाई व चन्द्रशेखर ने चौधरी से मन्त्रिमण्डल में शामिल होने को बार–बार अनुरोध किया।

जब चौधरी चरणसिंह जी ने उप–प्रधानमंत्री एवं वित्तमन्त्री के रूप में शपथ ली तो इस बारे में दो विचार सामने आये– प्रथम तो चौधरी साहब को सुविधा की राजनीति का अभ्यस्त बताने वालों का, दूसरा समय की मांग को पूरा करने हेतु मंत्रिमण्डल में जाने का स्वागत करने वालों का।

वस्तुतः चौधरी साहब स्वयं मानसिक रूप से मंत्रिमण्डल में जाने को तैयार न थे किन्तु उनके ऊपर पार्टी की एकता को बनाये रखने हेतु अत्यधिक दबाव पड़ रहा था जिसके सामने झुकना पड़ा। इससे उन्हें घाटा उठाना पड़ा क्योंकि वह मंत्रिमण्डल में न जाकर बाहर से किसान मज़दूरों के लिये संघर्ष का मार्ग अपनाते तो शायद विश्व के पैमाने पर माओ–त्से–तुँग के बाद दूसरे महान किसान संघर्षो के नेता कहलाते। यह टिप्पणी बी.बी.सी. लंदन, रेडियो के सम्वाददाता की थी औरमैं स्वयं भी इस बात से सहमत हूँ।

चौधरी के उप–प्रधानमंत्री बनने के बाद संघर्ष का रूप बदल गया, वह मूक दर्शक बनकर बैठ गये और राजनारायण बाहर से साम्प्रदायिक दंगों में आर.एस.एस. की साजिश को बेनकाब करने खुले मंच पर आ गये। आदर्शों और समाजवादी सिद्धान्तों के लिये समर्पित मधुलिमये तो बहुत पहिले से ही इस प्रश्न को उठाते रहे थे अतः अब मौका देखकर राजनारायण के साथ हो लिये। उधर अपनी राजनैतिक पेंतरेबाजी में माहिर होने के कारण मधुजी, एच. एन. बहुगुणा, जार्ज फर्नांडीज आदि को भी चरणसिंह खेमे में ले आये आंतरिक ध्रुवीकरण तेजी से हो रहा था मधुलिमये साम्प्रदायिक तत्व आर.एस. एस. व जनसंघ को पार्टी से अलग करने पर आमादा थे अतः आंतरिक गोंटें बिठा रहे थे। राजनारायण बाह्य आक्रमण को प्रबल करते जा रहे थे तभी भालोद के तीन मुख्यमंत्री देवीलाल, रामनरेश यादव व कर्पूरी ठाकुर चन्द्रशेखर व मोरारजी की साँठ–गाँठ पूर्ण हरक़तों से हटाये गये थे। दूसरी ओर राजनारायण को अनुशासनात्मक कार्यवाही का ढोंग रचकर कार्य समिति से भी पृथक कर दिया गया। इतने प्रहारों के बाद भालोद घटक पूर्णतः आवेश और क्रोध में पागल था, चौ. चरणसिंह फिर भी पार्टी की एकता के लिये युक्तिपूर्ण मार्ग की तलाश में थे।

चौ. देवीलाल अधिक परेशान थे अपनी हरियाणा की पुरानी कलाबाज़ियों के अनुभवों का कुछ उपयोग करना चाहते थे अतः 9 जुलाई को पावस सत्र की पूर्व बेला में 6 बजे दिल्ली पहुँचे। चौधरी चरणसिंह के निवास पर बड़े नेताओं की गोपनीय बैठक बुलाई गयी और पावस सत्र को गरमाने का

निर्णय लिया गया। पुनः देवीलाल, कर्पूरी ठाकुर, श्यामनन्दन मिश्रा, मधुलिमये ने गोपनीय बैठक कर चौधरी साहब को पार्टी छोड़ने के लिये तैयार कर लियारर और समानान्तर जनता पार्टी का गठन कर मोरारजी सरकार का तख्ता पलटने की योजना बनाकर अगुआई करने के लिये राजनारायण को ज़िम्मेदारी सौंपी गयी। इस बैठक के बारे में किसी को नहीं बताया गया और 15 मंत्रियों के त्यागपत्र प्राप्त कर लिये गये। यह समस्त कार्य ऐसे योजनाबद्ध तरीके से किया गया था कि इन शीर्षस्थ पाँच–छः नेताओं तथा सम्बद्ध मन्त्रियों के अतिरिक्त किसी को कुछ भी ज्ञान नहीं था। इसी क्रम में 13 संसद सदस्यों ने राजनारायण के नेतृत्व में योजना को प्रथम चरण की अगुआई के रूप में जनता पार्टी से त्यागपत्र देकर पृथक दल के रूप में बैठने की घोषणा 9 जुलाई को कर दी 10 जुलाई को पुनः सदस्यों ने त्यागपत्र दिये और नेता विरोधी दल यशवन्त राव चव्हाण ने अविश्वास प्रस्ताव पेश कर दिया। इन त्यागपत्रों के समय तक मोरारजी, सरकार की स्थिरता के प्रति आशावान थे क्योंकि आठ अकाली सदस्यों का बहुमत भी साथ था दूसरे अभी तक 'त्यागपत्रों में मात्र राजनारायण के संसोपाई मित्र थे' चरणसिंह समर्थक कोई नहीं था और चौधरी राजनारायण मतभेद की कहानी गढ़ी ही जा चुकी थी। अतः सरकार को कोई खतरा देसाई तब तक नहीं महसूस करते थे जब तक चौधरी साथ हों किन्तु अविश्वास प्रस्ताव पेश होने के बाद सदन स्थगित नहीं हो सकता अतः 11 जुलाई को अन्य सांसदों से त्यागपत्र दिलाकर सरकार को अल्पमत में खड़ा कर दिया गया 15 जुलाई तक त्यागपत्रों का इतना वेग बढ़ा कि संख्या 100 पर पहुँच गयी और देसाई को त्यागपत्र देने पर बाध्य होना पड़ा। उनका अहम् भूसे की दीवार की तरह भरभरा कर नीचे आ गिरा। लेकिन चौधरी चरणसिंह अभी जनता पार्टी में ही थे जिसके पीछे दो कारण थे। प्रथम तो यह कि यदि मोरारजी मंत्रिमण्डल में लोक सभा भंग करने का निर्णय करायें तो वह हस्तक्षेप कर सर्वसम्मत निर्णय को रोक सकें। दूसरे पुनः जनता के एकीकरण का प्रयास हो तो उसे फलीभूत बनाने में अन्दर रहकर समर्थन दिला सकें किन्तु बात बहुत आगे बढ़ चुकी थी अतः दोनों के एकीकरण के लिये कोई रास्ता न देखकर वह भी बाहर आ गये और समानान्तर जनता पार्टी के सर्वसम्मत नेता चुन लिये गये तथा समर्थन बटोरने के बाद प्रधानमंत्री बनने में भी सफल हुये।

इस समस्त घटना चक्र से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि चौधरी अन्तिम क्षण तक पार्टी एकीकरण के पक्षधर बने रहे, परिस्थितियों की विवशतावश उन्हें यह विघटन अपने गले उतारना पड़ा।

प्रधानमंत्री के रूप में मंत्रिमण्डल का त्यागपत्रः

वर्तमान भारतीय राजनीति में जिस प्रकार सिद्धान्त, आदर्श और नैतिकता का जनाज़ा निकला है उसे देखते हुये कभी–कभी यह आभास होता है कि चौ. चरण सिंह ने प्रधानमंत्री पद पर रहकर अस्थिरता को स्वयं ही पैदा कर दिया अन्यथा तो इंदिरा गाँधी से समझौता कर सरकार चलायी जा सकती थी। वस्तुतः यदि लोकसभा में एक बार शक्ति परीक्षण के समय इंदिरा जी से मात्र टेलीफोन वार्ता भी करली गई होती या शिष्टाचारवश चौधरी साहब इंदिरा जी के घर जाकर बधाई दे आते तो लोक सभा में इंदिरा कांग्रेस का समर्थन मिल जाता और आगामी छः माह के लिये सरकार चलती

रहती। इस कालान्तर में इंदिराजी के सहयोग को तिरस्कृत करके समस्त वामपंथी दलों के समर्थन व पुनः कुछ जनता पार्टी से विद्रोही निकल आते और इतना बहुमत अकेले ही बन जाता कि अपने ही समर्थन पर सरकार कार्यकाल पूरा कर सकती थी। किन्तु चौधरी कुछ अधिक ही सिद्धान्तों के प्रति निष्ठावान् रहे। कहना यही उचित होगा कि वह राजनीति की चालबाज़ियों से दूर सीधी–सादी राजनीति के पक्षधर रहे अथवा तात्कालीन राजनीति के लिए अनुपयुक्त बन गये। अतः दोनों पक्षों (कांगेस (ई), लोकदल के वरिष्ठ नेताओं के अथक प्रयासों के बावजूद भी वह इन्दिरा जी से वार्ता करने को किसी भी कीमत पर तैयार न थे।

कमलापति त्रिपाठी, सी. एम. स्टीफन, बी. पी. मौर्य, राजनारायण, एस. एन. मिश्रा, देवीलाल, बनारसीदास आदि नेता कांग्रेस से समझौता प्रयासों में जुटे रहे किन्तु खाली हाथ वापिस आये। चौधरी का एक ही उत्तर था सिद्धान्तों से समझौता नहीं कर सकता, विश्वास मत से पूर्व वार्ता करना झुकना और आत्मसमर्पण करना है अतः मैं वार्ता नहीं करूँगा त्यागपत्र दे सकता हूँ।

इन्दिरा गाँधी भी वस्तुतः चौधरी से समझौते की आतुर थीं क्योंकि उनकी जनशक्ति का आभास उन्हें हो चुका था। इसी परिप्रेक्ष्य में अपनी ओर से पहल करके राष्ट्रपति के समक्ष बिना शर्त समर्थन दिया था और पुनः चौधरी साहब के टेलीफोन सम्पर्क की प्रतीक्षा में अन्तिम दिन तक अपना निर्णय रोके रखा और अन्तिम क्षणों में बाध्य होकर समर्थन वापस लिया जिसके प्रतिफल स्वरूप अल्पमत में समझकर चौधरी ने मंत्रिमण्डल की बैठक में लोकसभा भंग करने की सिफारिश करते हुये मंत्रिमण्डल का त्यागपत्र प्रस्तुत कर दिया। जिसे स्वीकार कर राष्ट्रपति ने बहुमत दलों के फैसले का आदर किया और पुनः राजनैतिक सौदेबाज़ी का बाज़ार समाप्त कर दिया तथा जनता की अदालत में सभी नेताओं व दलों को अपनी स्थिति स्पष्ट करने को निर्देशित किया। यद्यपि इसका निर्णय विपक्ष के लिये लाभकारी सिद्ध नहीं हुआ किन्तु दो तथ्य स्पष्ट हो गये, प्रथम तो यह कि चरणसिंह ने कुर्सी को न पकड़ते हुये ईमानदारी से अपनी शक्ति के सम्बल पर चुनाव में स्थान पाने का अवसर दे दिया दूसरे चुनाव परिणामों से यह बात उजागर हो गयी कि कांग्रेस के विकल्प प्रस्तुत कर पाने में जनता पार्टी अकेले सक्षम नहीं थी अर्थात् चौ. चरणसिंह की शक्ति जनता पार्टी का आधार थी क्योंकि लोकदल एवं जनता पार्टी के मतों का कुल प्रतिशत कांग्रेस से काफी अधिक था। साथ ही इन चुनावों में लोकदल उत्तर भारत की सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभर कर सामने आया जिसमें दल नहीं वरन् चौधरी के व्यक्तित्व का आकर्षण प्रधान था। इस चुनाव के बाद देश के समस्त समाचार–पत्र और पूंजीपतियों के दलाल अर्थात् बुद्धिजीवी हत्प्रभ से रह गये जो जनता पार्टी की विजय के सपने सँजोये बैठे थे और लोकदल के चौधरी की शक्ति का अहसास तक उन्हें न था लेकिन जनता पार्टी के विघटन का दोषी चौधरी साहब को ठहराया। यह बात तब निर्मूल साबित हुई जब 2 अक्टूबर 1981 को लोकदल की राष्ट्रीय समिति ने समस्त विरोधी दलों के एकीकरण का आह्वान चौधरी चरण सिंह जी की अध्यक्षता में आहूत बैठक में किया और स्वयं चौधरी साहब ने स्वयं को एकता के हित में नेतृत्व से भी हट जाने की घोषणा कर दी। इस अध्याय में जनता पार्टी के विघटन की तथा गठन की समस्त परिस्थितियों पर जो प्रकाश डाला

गया है उससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि पार्टी विघटन के लिये चरणसिंह नहीं वरन् मोरारजी देसाई चंद्रशेखर एवं उनकी कुटिल मण्डली एवं जनसंघ को दोहरा चरित्र दोषी था।

5. ऐतिहासिक गर्जना

(अ) उ0प्र0 विधान सभा में : आपात काल के विरूद्ध

माननीय चौधरी साहब आपात्काल में रिहा होने के बाद उ. प्र. विधान सभा में नेता विरोधी दल के रूप में 23 मार्च 1976 को 5 घण्टे तक बोले और जिन प्रश्नों के उठाने में उस समय लोग डरते थे, उनको अत्यन्त कठोर शब्दों में सदन के पटल पर रखा लेकिन समाचार–पत्रों ने उस वक्तव्य का एक अंश भी प्रकाशित नहीं किया। किन्तु चुनाव के समय जनता पार्टी के गठन के समय हमारे जनसंघ वाले मित्रों ने पृथक पुस्तिका प्रकाशित कराकर घर–घर वितरित करायी इस प्रकार उनकी विधान सभा में 'ऐतिहासिक गर्जना' देश के कोने–कोने में भेजी गयी किन्तु फिर भी अनेक लोग उसे पढ़ नही सके क्योंकि कांग्रेस ने पुस्तिका जब्त करा ली थी, अतः जनहित में इस ऐतिहासिक वक्तव्य के कुछ महत्वपूर्ण अंश यहाँ दिये जा रहे हैं–

इन्दिरा ने बनाया जनतन्त्र का मखौलः

''सभापति जी, पहले प्रधानमन्त्री जी कम्युनिस्टों की भाषा में जनतन्त्र को सोशल डेमोक्रेसी (सामाजिक लोकतन्त्र) कहा करती थीं कि संविधान में बड़े भारी संशोधन की ज़रूरत है, लेकिन अब केवल डेमोक्रेसी कह रही हैं और कह रही हैं कि हम डेमोक्रेसी के अन्दर कार्य कर रहे हैं और संविधान में अधिक संशोधन की जरूरत नहीं है। किन कारणों से उनके कथनों में तब्दीली आ गयी है, इस पर मैं कुछ कह नहीं सकता हूँ, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि आज डेमोक्रेसी का दम भरा जा रहा है। दूसरी ओर एक लाख से अधिक आदमी जेल में हैं। वे किस तरह जेल में डाले गये हैं। महीनों उनके परिवार को यह नहीं मालूम हो पाया कि वह कहाँ बन्द किए गए हैं। 26 जून को सुबह मुझे और मेरे साथियों को गिरफ्तार कर लिया गया। देश के बड़े–बड़े आदमियों की बात छोड़िये क्योंकि आज तो शायद प्रधानमन्त्री जी बड़ी है, चूंकि वह बहुत बड़े पद पर हैं, लेकिन ऐसे आदमी जिन पर देश गर्व कर सकता है, वे गिरफ़्तार हुए और उनके घर वालों को यह नहीं बताया गया कि वह कहाँ कैद किये गये हैं। तीन–चार मर्तबा मैं अंग्रेज़ों के ज़माने में जेल गया हूँ और उस ज़माने की सारी बातें मुझे याद हैं, कभी अंग्रेज़ों के ज़मानेमें ऐसा नहीं हुआ। यही नहीं कि दो महीने तक गिरफ़्तार शुदा लोगों के अजीज़ों, उनके बच्चों, उनके घर वालों से मुलाक़ात करने का मौक़ा नहीं दिया गया, न उनको यह ही बतलाया गया कि क्या जुर्म उनसे हुआ है?

''माननीय जयप्रकाश जी, मोरारजी भाई और लोक सभा डिबेट में माहिर राजनारायण का भी ज़िक्र आयेगा, किन्तु नहीं आया। उनका इतना ही पाप था कि इन्दिरा गाँधी से इस्तीफ़ा हम लोग माँग रहे थे। क्योंकि हाईकोर्ट से वह हार गयी थीं इसलिए इतनी बड़ी प्राइम मिनिस्टर को शोभा यह देता है कि वह इस्तीफ़ा दें। जून माह में दिये हुए मेरे बयान कुछ अखबारों में प्रकाशित हुये, शायद वही मेरा जुर्म था। लेकिन सैंकड़ों–हज़ारों ऐसे लोग हैं जिन बेचारों ने एक बयान भी नहीं दिया फिर भी उन्हें

जेल में डाल दिया गया। नज़रबन्दी के क्या कारण हैं यह उनको नहीं बताया गया। मीसा कानून में यह भी संशोधन कर दिया गया। मुमकिन है कि संविधान में भी किया गया हो, लेकिन हाईकोर्ट अगर स्वयं चाहे तब भी उसको यह अधिकार नहीं कि किसी व्यक्ति के गिरफ़्तार होने के कारण गवर्नमेन्ट की नज़रों में क्या अपराध है, मालूम कर सकें। इससे अधिक तानाशाही, स्वेच्छारिता और निरंकुशता इतिहास में कहीं मिलेगी?''

दूसरी बात जो हर आदमी को खटकेगी, यह है कि सारे मौलिक अधिकार जो कि एक नागरिक के होते हैं, सब निलम्बित हैं। मान लो मैं पंजाब जाना चाहूँ तो डिस्ट्रिक्ट मज़िस्ट्रेट रोक सकता है। इसी तरह बोलने का अधिकार, सभा करने का अधिकार, व्यापार करने का अधिकार जो कि एक व्यक्ति की स्वतन्त्रता है वह सभी ले ली गई हैं। यह भी छोड़िये यदि किसी व्यक्ति को दूसरा व्यक्ति गोली मार दे या बदले की भावना से सब–इंसपैक्टर शूट कर दे और गोली खाने वाला बच जाये तो उसे यह हक़ हासिल नहीं कि कचहरी जाकर मालूम कर सके कि उस पर गोली क्यों चलायी गयी और मर जाये तो उसके परिवार वालों को भी हक़ नहीं कि जानकारी पा सकें? आपके अटार्नी जनरल ने हैबियस कार्पस की बहस के समय सुप्रीम कोर्ट में यह स्वयं तसलीम किया है। मैं जानना चाहता हूँ कि इतिहास में और कोई मिसाल है?

तानाशाही का तांडव नृत्यः

अध्यक्ष महोदय! पुलिस को कितने अधिकार हैं– जो कर दें, ऐसे हक़ हैं। सारे अधिकार उनको दे दिये गये हैं। यदि आपको नागरिकता के सारे अधिकार लेने ही थे और व्यक्तिगत आज़ादी को ज़ब्त करना ही था, तो पॉवर अपने हाथ ही रखनी चाहिये थी लेकिन ऐसा नहीं किया गया। आप बड़े से बड़ा संगीन मामला होम मिनिस्टर, चीफ मिनिस्टर, प्राइम मिनिस्टर से कह लीजिए लेकिन कोई सुनवाई नहीं है। किसी भी सब–इन्सपेक्टर को या पुलिस वाले को सज़ा नहीं मिलेगी। सज़ा कैसे मिलेगी? आपकी गवर्नमेन्ट उन्हीं के बल पर चल रही है। उक्त सन्दर्भ में पीलीभीत, देवरिया, मथुरा, बरेली, आगरा, अलीगढ़ आदि ज़िलों की जेलों में जो अत्याचार, देवियों और अबोध बालकों पर किये गए उनकी दुःख भरी कहानी बड़े विस्तार से चौधरी साहब ने सुनायी और पूछा क्या कांग्रेस पार्टी हमेशा सत्ता में रहना चाहती है? अगर कोई कुछ कहने की हिम्मत करता है तो वह देशद्रोही कहलाता है। विरोधियों के साथ देशद्रोही जैसा व्यवहार डेमोक्रेसी में नहीं बल्कि डिक्टेट्रशिप में किया जाता है, वही इस देश में हो रहा है।

न्यायाधीशों की नियुक्ति, प्रमोशन, स्थानान्तरण आदि मसलों में सरकार के अनाधिकृत हस्तक्षेप को लोकतन्त्र के लिये गम्भीर चुनौती और सरकार के तानाशाही स्वरूप की तीखी भर्त्सना करते हुये चौधरी साहब ने कहा– ''जो जज़ सरकार के खिलाफ निर्णय लेता है उसके खिलाफ़ जुलूस निकाला जायेगा, नारायणदत्त जी की कोठी के सामने उसका पुतला जलाया जायेगा और कहा जायेगा कि वह सी. आई. ए. से मिला हुआ है। कितने लोग हैं जिनमें विरोध करने की हिम्मत है? ऐसे–ऐसे आरोपों के

बाद वह चुप बैठ जायेंगे। न्यायाधीशों की क्या हिम्मत है कि आपकी निगाह न देखकर आपके खिलाफ़ फ़ैसला दे दें। लेकिन खुशकिस्मती की बात है कि अभी कुछ लोग बचे हुये हैं।''

ऑल इण्डिया रेडियो और टेलीविजन तो केवल गर्वनमेंट प्रोपेगैण्डा के माध्यम हो गये हैं, और रेडियो तो सरकारी वाणी बन गया है। विपक्ष चाहता था कि रेडियो का एक निगम बना दिया जाय किन्तु यह नहीं हो सका। केवल गवर्नमेंट के मात्र प्रचार का यह साधन बन गया है। क्या यह उपयुक्त है? लोकतन्त्र की यह धारणा नहीं है, हाँ अधिनायकवादी लोकतन्त्र में यह हो सकता है। जितने आरोप गुजरात सरकार पर लगाए गए हैं वह सब रेडियो पर आये, लेकिन वहीं के मुख्यमन्त्री बाबूभाई पटेल का कुछ नहीं आया। हितेन्द्र देसाई ने जो आरोप लगाए वह आये किन्तु सरकारी प्रतिनिधि की हैसियत से मुख्यमंत्री ने जो जबाव दिया वह नहीं आया। इसी प्रकार विनोबा भावे ने जो कहा वह नहीं आया, सरकारी मतलब का प्रोपगेण्डा खूब छपा। हमारी बहिन इंदिराजी का युवराज सुपुत्र संजय गाँधी का रेडियो प्रोग्राम आ रहा है। मैं जानना चाहूँगा इसका क्या औचित्य है? किस नाम, किस उसूल से ऐसा किया जाता है। क्या कभी उन्होंने कांग्रेस में रहकर ही कोई जनसेवा का कार्य किया है? अब मैं आपसे पूछता हूँ कि इन तथ्यों से आपके अंतःकरण को चोट लगेगी या नहीं?

''अखबारों पर प्रतिबन्ध लगा हुआ है। सन् 1942 में 60–70 हज़ार आदमी जेल में थे। उसका असर आज तक हमारे दिमाग़ पर है कि कितना बड़ा आंदोलन था, आज दोगुने आदमी गिरफ़्तार हुए लेकिन लोगों को लगता है कि कोईआन्दोलन ही नहीं है क्योंकि कोई अख़बार कुछ छाप ही नहीं रहा है छाप भी नहीं सकता है। अंग्रेज़ों के ज़माने में भी ऐसा सैंसर नहीं था जैसा आज है।''

समाचार पत्रों पर सेंसरः

राजनारायण जी का मामला सर्वोच्च न्यायालय में पेश था। संजय गाँधी जाते हैं सुप्रीम कोर्ट में मामले को सुनने के लिए। इसलिये पुलिस वकीलों का एक जगह से दूसरी जगह जाना रोक देती है, क्योंकि संजय गाँधी आये हैं, उनको खतरा हो सकता है। सुप्रीम कोर्ट के बार एसोसियेशन की मीटिंग होती है, पुलिस की निन्दा की जाती है, क्योंकि जस्टिस महोदय के पास उनका एक डेपुटेशन जाता है कि पुलिस किस तरह वकीलों को रोकती है, इसलिये चीफ जस्टिस प्रधानमंत्री को लिखता है। क्या यह एक ऐसी चीज़ है, जिसमें लोगों को दिलचस्पी नहीं होनी चाहिए। लेकिन यह ख़बर अख़बार में नहीं छपी, क्योंकि सेंसर था। कौन से नार्म्स है? यह आपका लौह–पंजा क्या ज़ाहिर करता है? आपके ऐसे रवैये के सम्बन्ध में कुलदीप नैयर का जज़मेंट हुआ। एक–दो पेपर में आखिरी पृष्ठ पर अथवा कॉलम में कुछ छपा, लेकिन आमतौर पर नहीं छापा गया। इसी तरह से प्रेसीडेंसी जेल कलकत्ता टूट जाती है। लगभग 67 नक्सलाइट कैदी दिन के दो बजे जेल तोड़कर आज़ाद हो जाते हैं। पटना जेल इसी तरह टूट जाती है लेकिन यह सब अख़बारों में नहीं जाता। इसी तरह दिल्ली में तिहाड़ जेल टूट जाती है। राजनैतिक कैदी नहीं निकला था गैर राजनीतिक कैदी 10–12 निकल जाते हैं। एक भी क़ैदी अगर छूटने की तारीख से पहले जेल से भाग जाता तो बड़ी ख़बर बन जाती है, लेकिन इतनी जेलें टूटीं, उनकी ख़बर अख़बारों में नहीं आयी।

नारायणदत्त जी यहाँ यू. पी. में सेंसर है या नहीं? हिन्दुस्तान में है या नहीं? गाइड लाइन्स के नाम से आदेश दे दिये गये हैं। इनके खिलाफ़ अगर प्रेस वाले कुछ करें तो फौरन कार्यवाही, बिजली का कनेक्शन काट दिया जायेगा, अख़बार छपना बन्द हो जायेगा और कोई अपील नहीं होगी। यह है आप का हाल। कहीं भी गाइड लाइन्स ऐसी ही हैं। और सुना है कि आपको इस बीच कुछ और गाइड लाइन्स जारी हुई है मार्च 22 को। उसमें किसी के दस्तख़त नहीं हैं कि कहाँ से किसके हुक्म से जारी हुई है। अगर कोई प्रेस वाला न माने और यह कहे कि गाइड लाइन्स पर किसी के दस्तख़त नहीं थे तो सम्भव है वह इन्फ़ारमेशन (सूचना) डिपार्टमेंट, डी. एम. और हाईकोर्ट से तो बच जायेगा परन्तु आपके हाथ में इतनी शक्ति है कि उसकी रगड़ कर सुखा देंगे। आपने प्रेस को क्या बना दिया? आज मैंने सुबह पाईनियर देखा, उसमें कोई न्यूज़ (ख़बर) ही नहीं थी। ऐसे ही और पेपर्स (समाचार) हैं। ए. टू. जैड (एक से सौ तक) दो ही नाम उसमें हैं एक हमारी बहनजी हैं और दूसरा हमारा भान्जा है।

मैं अभी 19–20 तारीख को बम्बई गया था। चार–पाँच दलों के नुमाइन्दों ने इकट्ठा होकर यह तय किया कि एक जबर्दस्त विपक्षी पार्टी बनाई जाये, फैसला हो गया। 20 तारीख को दोपहर को मीटिंग में मैं मौजूद था। वह 22 मार्च को अखबारों में आना चाहिए था। वह 21 तारीख की बात थी। आज 23 तारीख है न कल आया न आज ही। रिलीज़ तो ज़रूर कर दिया होगा, लेकिन आज तक प्रेस में नहीं आया। उस पर आपकी गर्वनमेंट की कृपा दृष्टि हो गयी होगी, क्योंकि चार पार्टियों का एक होना उनके हिसाब से जनहित के खिलाफ़ है। वे चाहते हैं कि आपस में लड़ते रहें, ताकि उनकी गद्दी हमेशा के लिए सुरक्षित रहे, आपकी ही नहीं आपकी औलाद के लिए भी, क्योंकि दो पीढ़ी तो बीत गयी। तो यह है आपका सेंसरशिप।

पूँजीपतियों से सरकारी नज़दीकी का ज़िक्र करते हुये आपने कहाः– ''नारायणदत्त जी आप मेरे नौजवान दोस्त हैं, आपसे कहना चाहूँगा कि मालदार लोग आपके खिलाफ़ नहीं हैं और आप भी उनके खिलाफ़ नहीं हैं। अगर उनसे पूछा जाये तो उनके लिये आपसे बेहतर कोई और गवर्नमेंट नहीं होगी। सन् 1947 में बिड़ला जी की सम्पत्ति 30 करोड़ थी जो सन् 1951 में बढ़कर 65 करोड़ हो गयी और सन् 1965 में बढ़कर 400 करोड़ हो गयी। आज बहिनजी के शासन के 10 वर्षों के बाद वह 10 अरब हो गयी है। यही हाल सबका है इस तरह के 95 बड़े–बड़े पूँजीपति घराने हैं। जबसे आपका राज्य आया तब से उनकी सम्पत्ति दुगनी, चौगनी और दस गुनी और बीस गुनी हो गयी है। लेकिन आप दुनिया को यह ज़ाहिर करना चाहते हैं कि आप उनके खिलाफ हैं। फिर क्यों लोग आपके खिलाफ हो सकते हैं? नहीं जान–बूझ कर झूठ बोला जाता है, ऐसी नंगी और ग़लत बयानी की जाती है। इस तरह ग़लत बयानी करना आपकी ही हिम्मत का काम है और आपकी ही यह हिम्मत है कि ग़लत बयानी को सही सिद्ध करने की कोशिश करते हैं। यह उनकी हिम्मत है, यह कोई पुरुष नहीं कर सकता। कोई पुरुष 60 करोड़ आदमियों को इमरजेंसी के नाम पर इस तरह से नहीं हाँक सकता है, जैसे यह राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी कर सकती हैं या इंदिरा जी कर रही हैं। गाय बिगड़ जाये तो आदमी को छोड़ेगी नहीं, चाहे बैल किसी को छोड़ भी दे। बहनों में यह बात तो है ही। रोज़ाना की ग़लत बयानी मेरी समझ में

नहीं आती। सच्चाई का गला जितना आपने घोंटा है, इतिहास में किसी ने नहीं घोंटा होगा। जितनी न्यूज़ एजेन्सी थीं सब 'समाचार' के नाम से खतम कर दी गयी हैं। चायना की न्यू एजेंसी और मास्को की तरह ही आपकी 'समाचार' एजेंसी है। दिल्ली का 'समाचार' और मास्को का 'तास' बराबर है।मैं आपसे कह रहा था कि आज यह पोज़ीशन (स्थिति) है। जेल के अन्दर जिसको चाहो बन्द कर दो। जुडीशियरी (न्यायपालिका) की हालत खराब, मजिस्ट्रेसी की हिम्मत नहीं और रेडियो आपके हाथ में है ही। न्यूज़ एजेंसी आपके कब्जे में है और पब्लिक मीटिंग हम कर नहीं सकते। जो मैं तकरीर कर रहा हूँ वह अखबार में छप नहीं सकती क्यों? डरते हैं आप? अखबारों में क्यों नहीं छपने देते, कोई कारण? पब्लिक मीटिंग नहीं करने देंगे, अखबार में छपने नहीं देंगे, जिसको मन चाहे गिरफ़्तार कर लेंगे क्या यही लोकतन्त्र है? यह तरीका तो डिक्टेट्रशिप का है। राज्य आपका चल रहा है, बेशर्मी के साथ चल रहा है, महात्माजी के सपनों का भारत क्या ऐसा ही था? आवाज़ विरोधीपक्ष की कुचल दी गयी, उनका गला घोंट दिया गया। वे लिख नहीं सकते, बोल नहीं सकते। दो वर्ष हुए ब्रेझनेव आये थे। मधुलिमये से वह पूछ बैठे कि हिन्दुस्तान में दूसरी पार्टी की क्या ज़रूरत है? उन्होंने क्या जबाव दिया मुझे नहीं मालूम। आपकी धारणा है कि जब आप चुनकर आ गये और प्राइम मिनिस्टर बन गये, चीफ मिनिस्टर बन गये, तो अब कहाँ विपक्ष की ज़रूरत रह गयी। आपकी निगाह सोशल डेमोक्रेसी की तरफ है, यानी कम्युनिस्ट मॉडल के जनतंत्र की ओर। आप बराबर कहते आये हैं कि चुनाव करायेंगे। हमने आपके नेताओं के बयान पढ़े हैं उन्होंने कहा कि चुनाव समय पर होंगे। मैं जानना चाहता हूँ कि निश्चित समय यानी फरवरी–मार्च सन् 1976 में क्यों नहीं हुए? चण्डीगढ़ में तय किया गया कि चुनाव नहीं होंगे। बहिन राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी मुझे अफ़सोस होता है। सिद्धार्थ शंकर राय ने चुनाव की बावत कहा कि चुनाव बहुत छोटी चीज़ है, हमें मुल्क को मजबूत करना है। मैं पूछना चाहता हूँ कि मुल्क की मजबूती का चुनाव कराने या न कराने से क्या मतलब?

कुर्सी बचाने के हथकंडेः

1977 के लोक सभा चुनावों की जीत का विश्वास चौधरी साहब को था अस्तु उन्होंने कहा– ''मैं आपको चुनौती देता हूँ कि आप हार जायेंगे। गुजरात में आप हारे थे, यह सूरत तब थी जब विरोधी दलों ने केवल एक मोर्चा बनाया था। मोर्चे की जगह एक विकल्प दल होता तो और भी अच्छे परिणाम होते फिर भी आपके केवल 40 प्रतिशत वोट पड़े। गुजरात को आप छोड़िये। यदि आपकी पार्टी को जन समर्थन प्राप्त है तो सीधी सी बात है चुनाव क्यों मुल्तवी किया? क्योंकि आपकी हार निश्चित थी।

चुनाव पिटीशन में इन्दिरा जी ने सुप्रीमकोर्ट को प्रभावित किया और दबाव में निर्णय कराया, चौ. चरण सिंह ने कहा इन्दिरा जी के खिलाफ हाईकोर्ट ने 3 बातों पर अपना निर्णय किया था और तीनों ही संविधान और कानून का संशोधन करके रद्द कर दिये गये। किसी देश का प्रधानमंत्री अपने हित में हाईकोर्ट से फैसला खिलाफ़ हो जाने पर लोक सभा में अपने बहुमत के बल पर कानून में संशोधन करा ले और उनके बल पर चुनाव याचिका जीत जाय तो संसार में इस प्रकार की कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलेगी। अब सुप्रीम कोर्ट के सामने कोई चारा नहीं था। बहुमत के बल पर किसी प्राइममिनिस्टर के

लिये अपने हक़ में कानून बदलवाना कहाँ तक संविधान की भावना के अनुकूल है? लेकिन सुप्रीम कोर्ट से फैसला सुनाने के दिन जैसा भी क़ानून था उसको ध्यान में रखते हुए इन्दिरा जी की अपील को मंजूर कर लिया, जिसका कि हम लोगों को और हर न्यायप्रिय आदमी को अत्यन्त मानसिक कष्ट है। आप भले ही हमारी बहस में जीत जायें लेकिन सार्वजनिक जीवन में ऐसी मान्यतायें होती हैं जो हमेशा क़ायम रहनी चाहिए, जिनसे मुल्क बनते और बिगड़ते हैं। इन्दिरा जी के जज़मेंट के सिलसिले में जो कुछ हुआ वह देश के लिये शर्म की बात है।

शासक दल ने चुनाव याचिकाओं के सम्बन्ध में क़ानून बदल दिया। प्राइम मिनिस्टर, प्रेसीडेंट, वाइस प्रेसीडेन्ट, स्पीकर भी उसमें शामिल है। इनके विरूद्ध चाहे वह लोग चुनाव में कितनी बेइमानी क्यों न करे, विरोध का उम्मीदवार अदालत में न जा सकेगा, क्या बात हुई? जैसे कि मुगलों के ज़माने के उमराव होते थे, रईस होते थे, कोई बीस हज़ारी, कोई पचास हज़ारी होता था। ऐसे ही इन्दिरा जी ने कहा कि हम लोग उमरा हैं। प्रेसीडेंन्ट, वाइस प्रेसीडेंट, स्पीकर और मैं। इनके विरुद्ध इलेक्शन पिटीशन जो होगा, वह अदालत में नहीं जायेगा। क्यों नहीं जायेगा अदालत में? एक अलग से आर्गेनाइजेशन (संस्था) बनेगा, वगैरह–वगैरह क्यों? आप सब इसको डेमोक्रेसी क्यों कहते हैं? इन पर कोई सिविल केस नहीं चलेगा। कोई क्रिमिनल केस प्राइम मिनिस्टर पर चलेगा नहीं, न आज न कल। प्राइम मिनिस्टर न रहे तब भी नहीं चलेगा। मैं जानना चाहता हूँ कि क्यों? मैं जानना चाहता हूँ कि प्राइम मिनिस्टर एक आदमी के साथ ज़्यादती करता है, गुस्से में आकर शूट कर देता है। अगर मैं सामने जाऊँ तो मार ही डालेंगी।

अध्यक्ष महोदय! कहीं दुनिया में कोई ऐसी मिसाल है कि प्राइम मिनिस्टर ने ऐसा किया हो, मैं आपसे कहता हूँ दोस्तों, यह दिल्लगी और हँसी का अवसर नहीं है। ठण्डे दिमाग से सोचना चाहिए कि हमारे देश में हो क्या रहा है? यह देश किसी के बाप–दादों का नहीं है, किसी के परिवार का नहीं है। हमारा सबका है, 60 करोड़ लोगों का है। यह जो हो रहा है आप सबको क्यों नहीं अखरता है? आखिर क्या होगा? काशीनाथ मिश्र कहाँ हैं, रोज़ झगड़ते हैं भले काम के लिये। आज वह कहाँ गये? उनकी आवाज़ क्या हुई? इन्डीविजुअल फ्रीडम (व्यक्तिगत स्वतन्त्रता) के लिये गाँधी जी ने कितना कहा है, लेकिन आप लोग कोई आवाज़ ही नहीं उठा सकते। क्या चीज़ आड़े आ रही है? इसको मैं बाद में बताऊँगा।

अध्यक्ष महोदय! यह आपके संविधान का हाल है।

चुनावों में इन्दिरा कांग्रेस की खुली बेईमानी का मज़ाक बनाते हुए चौधरी साहब ने बेबाक शब्दों में कहा– ''चुनाव के सिलसिले में इन्दिरा जो देश के साथ एक मज़ाक कर रही हैं, कहती हैं कि चुनाव अवश्यमेव जीत जायेंगी, परन्तु चुनाव से देश का हित बड़ा है? इसलिए अभी चुनाव कराने की ज़रूरत नहीं है। यह एक लाल बुझक्कड़ वाली बात हो गयी। चुनाव से देशहित का क्या टकराव है, यह तो ऐसा ही हुआ जैसे कोई व्यक्ति किसी लड़के से यह सवाल पूछे कि एक किसान के पास 15 भैंसें हैं, उनमें 5 मर गयीं तो बताओ कितनी भैंसें बचीं? चुनाव में जब आप जीत जायेंगी, क्योंकि जीतना तो

आपको है ही, तो देश की सेवा और अधिक इत्मीनान के साथ कर सकेंगी। फिर चुनाव और देशहित में क्या ज़िद है। असल बात यह है कि वह जानती हैं कि बिना भारी बेईमानी किये कांग्रेस आज नहीं जीत सकती। बेईमानी की तरक़ीब निकालने के लिए इन्दिरा जी ने खुफिया विभाग में कोई सेल अर्थात् विशेषज्ञों की कमेटी बिठा रखी होगी कि बेईमानी करने के ऐसे रास्ते व तरक़ीबें ढूँढें, जिससे कांग्रेस की भारी जीत हो और विरोधियों को पता भी न लगे और लगे तो चुनाव के नतीज़े निकलने के बाद।

कांग्रेस अध्यक्ष बरुआ और अन्य संगठन के लोगों को फटकार लताते हुए आपने कहा–''जब आपके दल का अध्यक्ष कहता है इंदिरा इज़ इण्डिया (इन्दिरा भार है) इण्डिया इज़ इंदिरा (भारत ही इन्दिरा है) तो शर्म आनी चाहिए आपको। जो एक लोकतान्त्रिक देश है, जहाँ कभी ऐसा नहीं कहते। लेकिन वाह रे आपकी हिम्मत! यह आपकी कमज़ोरी है, आपकी ग़लती है। क्या आपने इसके विरुद्ध आवाज़ उठायी है? नहीं, उठानी चाहिए थी यह आवाज़। आज आपको 25 प्रतिशत से ज़्यादा जनता का समर्थन नहीं है। मान लीजिए 33 सही, 42 सही लेकिन 100 मिल जाये तो भी इन्दिरा जी को देश की बराबरी पर नहीं रखा जा सकता। लज्जा नहीं आती यह कहते हुए? यह सखा (श्री बरुआ) जो दूसरों को ठग कहता है, अपने स्वार्थ के लिए कहता फिरता है ''इंदिरा इज़ इण्डिया, इण्डिया इज़ इंदिरा।'' परन्तु पूरी कांग्रेस पार्टी उनको समर्थन करती है। आप महसूस नहीं करते कि देश के साथ आप कितना बड़ा द्रोह व घात कर रहे हैं। लीजिए, उससे ज़्यादा अफ़सोस और शर्म की बात किसी इण्डियन पैट्रियट (देशभक्त) के लिए और नहीं हो सकती। आपकी इस कायरता के कारण ही देश में इमरजेंसी की घोषणा हो गयी। नारायण दत्त जी।

राष्ट्रपति के रबर स्टाम्प होने का मज़ाक बनाते हुए बेबाक शब्दों में कहा राष्ट्रपति कैसे और क्यों सन्तुष्ट हो गये कि देश की एकता को खतरा है? यह चैलेंज नहीं हो सकता। सुप्रीम कोर्ट में भी नहीं बस उन्हीं की सन्तुष्टि है, यह कहना पर्याप्त है। प्रेसीडेंट तो हमारा (इंदिरा जी) बनवाया हुआ है। वह कुछ कह नहीं सकता है। एक अख़बार वाले ने एक मर्तबा एक कार्टून बना दिया कि राष्ट्रपति महोदय गुसलखाने में हैं। एक सन्देश वाहक पहुँचता है दस्तख़त करवाने के लिए, उन्होंने एक क़लम मंगवाकर वहीं पर दस्तख़त कर दिए।

भ्रष्टाचार में सराबोर इंदिरा शासन पर प्रहार करते हुए आपने कहा किसी विशेष सम्वाददाता ने इन्दिरा जी से पूछा कि लोग आपके साथियों के खिलाफ भ्रष्टाचार का आरोप लगाते हैं तो उन्होंने कहा कि हमारा कोई मन्त्री भ्रष्ट नहीं है। क्या इससे अधिक असत्य दुनिया में और कोई हो सकता है। हालत यह है किसी जगह के लिये अगर आपके दो उम्मीदवार हैं, एक कम भ्रष्ट है दूसरा अधिक तो मुक़ाबले ईमानदार या कम भ्रष्ट के उसको लिया जायेगा जो भ्रष्ट है या अधिक भ्रष्ट है। क्योंकि वह जानती हैं कि वह तीन पाँच नहीं करेगा। हम कहते हैं कि आप इन्क्वायरी क्यों नहीं कराते हैं? फिर आपकी हिम्मत की एक बात कहता हूँ, आप एल. एन. मिश्रा को शहीद बनाना चाहते हैं, क्यों? इसलिए न कि आप लोग उनके और अपने पापों को छिपाना चाहते हैं।

दमन होगा तो हिंसा होगीः

चौ0 चरणसिंह एक ऐसा धवल व्यक्तित्त्व है जो जे. पी. आन्दोलन के समय भी अपनी पार्टी (बी. एल.डी.) के नौजवान कार्यकर्ताओं से शान्ति, संयम, धैर्य और पूर्ण अहिंसावादी रहने का आह्वान करते रहे और यहाँ तक कि सत्याग्रह और धरना आदि क़दमों को भी ग़लत समझते थे किन्तु आपात्काल की घोषणा और उसमें जनता पर किये गये निर्मम अत्याचारों ने चौधरी साहब के दिल को इतनी बुरी तरह झकझोर दिया कि उन्हें सदन में हिंसा की भी वकालत करनी पड़ी–

हिंसा किन्हीं परिस्थितियों में भी नहीं होगी यह किसी ने नहीं कहा। ऐसी परिस्थितियाँ हो सकती हैं, मजबूरी और आवश्यकता हो सकती है जिनमें हिंसा करनी पड़ सकती है, ऐसा लगभग सभी का विश्वास था। यह श्रीकृष्ण ने कहा था, महात्मा गाँधी ने कहा था, पंडित नेहरु ने कहा था और यही मैं कह रहा हूँ। आप 60 करोड़ लोगों को गुलाम बनाकर रख दें, उनकी स्वतन्त्रता समाप्त कर दें और चाहते हैं कि यह सब कुछ मुल्क बर्दाश्त करता रहे। मैं लोगों से हिंसा करने के लिए कहूँ, यह मुमकिन नहीं है और चाहूँ भी तो कर नहीं सकता। लेकिन आप समझते हैं कि स्टीम एकत्र होती रहे बायलर में और कहीं कुछ नहीं होगा। होगा, अवश्य होगा, एक विस्फोट होगा एण्ड दी कण्ट्री विल बी इन फ्लेम्स (देश जल जायेगा), मैं आपके हित में कह रहा हूँ। आप किसी को ऐसा मौका न दें। हो सकता है कहीं कोई नौजवान या कोई पार्टी ऐसी हो जो बहुत दिनों तक इस प्रकार कादमन बर्दाश्त नहीं कर पाये। आप उनकी आज़ादी सदा के लिये छीनकर रख न लें। इमरजेन्सी किसी मुल्क में आयी है तो एक महीने से अधिक नहीं रही और अपने यहाँ 2 वर्ष तक चलने की उम्मीद है जैसा कि सुनते हैं कि प्रधानमन्त्री ने आचार्य जी को जवाब दिया कि यह नवम्बर–दिसम्बर तक रहने की उम्मीद है। आप एक बार पॉवर में आ गये तो सदैव के लिये देश के मालिक और सर्वे–सर्वा बन गये। आप ही सब कुछ नहीं हैं कि सबको मिटा के रख दें, गाँधीजी ने अहिंसा का सहारा लिया था लेकिन कायरता के कारण नहीं। अगर उनकी बात आती है तो भी हिंसा हो सकती है, उन्होंने कहा था कि अहिंसा के असफल हो जाने पर मैं लोगों से कहूँगा कि तलवार उठा लें स्वराज्य के लिये। मैं उनकी इस बात को उचित मानता हूँ। यदि यह गैर क़ानूनी है तो इसे बाहर पुनः कहने को तैयार हूँ और अपने अपराध के विरूद्ध कार्रवाई की माँग करूँगा। मेरी पार्टी के लोग नाराज थे मुझसे, जब मैं कहता था कि डैमोक्रेसी में सत्याग्रह के लिए स्थान नहीं है। मैं कांग्रेस में था तब भी मेरा ऐसा ही विचार था कि सत्याग्रह एक विद्रोह है। सत्याग्रह की राय गाँधीजी ने इसलिये दी थी कि हमारे पास उस समय हथियार नहीं थे। यदि डेमोक्रेसी ठीक तरह से चलती है तो सत्याग्रह की कोई आवश्यकता नहीं। यही हमारा घोषणा–पत्र कहता था। हिंसा की बात मैंने किस सन्दर्भ में कही है, आप सोचें। इलेक्शन में आप ईमानदारी न करें हिम्मत के साथ बेईमानी करें, उसकी शिकायत की जाये तो जवाब मिले इलैक्शन पिटीशन में जाओ, जहाँ निर्णय 5 वर्ष में होता है। हिम्मत होती तो तहकीक़ात करते, गाँव में घुस नहीं पाते थे और 215 की मैजॉरिटी (बहुमत) ले आये, कुछ अफ़सरों की कृपा से, तो दूसरे आदमी क्या करें? यदि आप येन–केन–प्रकारेण सत्ता में रहना ही चाहते हैं चाहे बेईमानी करके, चाहे करोड़ों रुपये इस्तेमाल करके हो, चाहे सरकारी साधनों का दुरुपयोग करके या फिर कम्बल और धोती बाँट करके हो या फिर कुछ न हो तो इमरजेंसी घोषित

करके हो, तो मैं कहता हूँ कि विपक्ष को एक हासिल है कि वह येन–केन–प्रकारेण आपको सत्ता से निकाल बाहर करें। यह मैं जानबूझ कर कहता हूँ।

अगर आप नाजायज़ बात करेंगे, डेमोक्रेसी को नहीं मानेंगे और हमेशा सत्ता में रहना चाहेंगे तो विपक्षी को भी अधिकार है कि वह हर तरह के हथकण्डे अपनाये। रोज़ ही कहती हैं इन्दिराजी कि विपक्ष वाले मिले हुये हैं अमेरिका से, देशद्रोही हैं यह भी कहती हैं। मैं तिवारी जी से जानना चाहता हूँ कि आप से राय अलग रखना क्या देशद्रोह है? यह कहना कि अमेरिका, यूरोप या रूस या चीन सबसे पारस्परिक हित में ताल्लुकात रखना उचित है, यह राष्ट्रद्रोह है? न कोई हमारा दुश्मन है न दोस्त है, हमारे सोशलिस्ट पार्टी के दोस्त हैं उनके बारे में कुछ और ही सुना होगा, मेरा कुछ और विचार हो सकता है लेकिन सवाल है कि हमने अमेरिका से साज़िश की है अपने देश के खिलाफ़ इसका कोई सबूत है? आपको यह नहीं कहना चाहिए अगर आपके पास सबूत नहीं। इंदिराजी रोज़ कहती हैं। बोलो कहाँ चले जायें? क्या करे, अपोज़ीशन? आपकी प्राइम मिनिस्टर की रोज़ तकरीर है कि हम लोग बाहर के देशों से मिले हुये हैं। अगर आपको यह बात अच्छी लगती है तो लगे। मैं जानना चाहता हूँ कि आप क्या कहना चाहते हैं?'

सरकार पक्ष की ओर सेः आज फर्नाडीज़ की चिट्ठी मिली वह इस आरोप का सबूत है।

चौधरी चरणसिंह– ''चिट्ठी की जो बात आप करते है तो गर्वनमेंट के बहुत से संगठन और उससे सम्बद्ध दूसरे देशों से बहुत सा धन पाते हैं, इससे नारायणदत्त जी इन्कार नहीं कर सकते। फिर यह आरोप इमरजेंसी में लगाया है। रेल कर्मचारियों की हड़ताल में नहीं लगाया जो 1974 में हुयी थी क्यों नहीं लगाया तब? पत्र फर्नाडीज़ का है तो आप उनके खिलाफ मुकद्मा दायर करो। सज़ा होगी तब तो हम निन्दा भी करेंगे। यह क़ानून है जिसके पास कोई जवाब नहीं होता वे ही कहते हैं कि हम सब दुश्मनों से मिले हुये हैं आप हम सब पर न्यायालय में मुक़द्मा क्यों नहीं चलाते? इससे बड़ा चार्ज तो राजनैतिक व्यक्ति के लिये हो ही नहीं सकता।''

इंदिरा जी के 20 सूत्रीय कार्यक्रम जिसको आपात्काल में गायत्री मन्त्र की भाँति जपा जा रहा था और कैसा भी निर्गुणी, पापी, मूर्ख या विरोधी इस महामंत्र का जाप करते ही आपात्काल की बैसाखी पर पार उतर जाता था, चौधरी साहब ने नहीं बख्शा और उसकी धज्जियाँ उड़ाते हुये कहा–

''यह कांग्रेस का प्रोग्राम नहीं है गर्वनमेंट का प्रोग्राम नहीं है। हर जगह यही पढ़ने को मिलता है कि इंदिरा जी के प्रोग्राम को पूरा करके उनके हाथ मजबूत करिये। अगर आपको उनके हाथ मजबूत करने ही थे तो लिखते कि कांग्रेस के हाथ मजबूत करो। अगर कहीं ब्लाक क्षेत्र में जाइये जहाँ कोई छोटी सड़क बनी हो, ट्यूबवैल बना हो तो लिखा होगा इंदिरा जी के 20 सूत्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत बनाया गया है। इंदिरा जी के 20 सूत्रीय कार्यक्रम के सिलसिले में तथा उनकी हुकूमत के 10 वर्ष पूरे होने पर एक उत्साव मनाया गया। किसी भी लोकतांत्रिक देश में ऐसा हुआ है? डिवेलरा 16 वर्ष तक आयरलैंड के प्रधानमन्त्री रहे, ग्लैडस्टन भी 10 साल तक लीडर रहे लेकिन कहीं भी इस तरह उत्सव नहीं हुआ। अगर प्रधानमन्त्री की अपनी निजी ओर से पार्टी की तरफ से वह दिन मनाया जाता तो इसमें

कोई हर्ज नहीं था। लेकिन आपने सार्वजनिक उद्योगों को, गवर्नमेंट को और प्राइममिनिस्टर को एक बना दिया, क्यों? आखिर आप किधर जा रहे हैं?

राजा की बरसी बनायी जाती है, रानियों की बरसी मनायी जाती है कि उन्होंने 10 साल तक राज्य किया। किसी भी डेमोक्रेटिक कण्ट्री में आज तक यह सुनने को नहीं मिला है कि इस तरह से कोई दिन मनाया गया हो। आपने स्टेट और पार्टी को एक बना दिया इंदिरा जी के साथ, इसको आप सोचें। जेल में मुझे पढ़ने को मिला ''मिल्क प्राइसेस कट ऑन ऑकेज़न ऑफ प्राइम मिनिस्टर इंदिरा गाँधीज बर्थ डे।'' इसका मतलब यह हुआ कि किसी राजा को लड़का पैदा हो गया तो इसलिये छुट्टी रहेगी। इस तरह की प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिये लेकिन दिया जा रहा है। किया यह जा रहा है कि एक ही आदमी है जो हिन्दुस्तान का मालिक है। यह लोकतन्त्र नहीं है।

दो दिन तक लगातार अगर कोई अख़बार, 20 सूत्रीय कार्यक्रम का समर्थन और श्रीमतीजी का फोटो नहीं छापेगा तो उसका बिजली कनेक्शन कट ही जायेगा। 'ईस्टर्न इकॉनोमिस्ट' मशहूर अख़बार है उसने महात्मा गाँधी के 'नोआखाली यात्रा' की तस्वीर निकाली तो वह सेंसर हो गयी क्योंकि उसका अनुचित अर्थ लगाया जा सकता है। अर्थात् गाँधी का अपने देश में कोई स्थान नहीं रह गया। अपनी लकुटिया लेकर वे विदेश जा रहे हैं परन्तु सम्पादक ने इसका विरोध किया और इस्तीफ़ा दे दिया। इस प्रकार से देश का मस्तिष्क बनाया जा रहा है।

इंदिराजी की माताजी कमला नेहरु पर केस चला 1931 में और जज़मेंट अब निकालकर प्रदर्शित किया जा रहा है 'पायनियर' अखबार में सरकारी प्रदर्शनी में। उस समय कितने गरीब आदमी, औरतें और देशभक्त जेल गये लेकिन प्रदर्शनी में एक लेडी प्रधानमन्त्री की माताजी का चित्र प्रदर्शित किया गया। बहुत सी महिलाओं ने कमलाजी से भी अधिक बलिदान व त्याग किया उनका फोटो क्यों नहीं रखा?

20 सूत्रीय कार्यक्रम की उपलब्धि है साहब दुनिया में किसी भी योग्य गवर्नमेंट के मातहत जो कार्य होने चाहिये उन्हें आप इमरजेंसी की उपलब्धि कहते हैं। एक बात कहते हैं आप कि मीसा में तस्करों के खिलाफ सख़्त कार्यवाही हो रही है तो यह देवीजी ने कौन सी नई बात कर दी, जिसका आप ढोल पीट रहे हैं? यह क़ानून पहिले से बना हुआ था। सन् 1971 में कौल कमीशन ने तस्करों के बारे में रिपोर्ट दी थी कि बहुत जोरों से अपराध बढ़ रहा है तो उस वक्त क्यों नहीं कार्यवाही की गयी? लेकिन उस वक़्त चुनाव होने वाले थे तस्करों से रुपया लेना था। इसलिये कुछ नहीं किया गया और जब देखा कि जनता की नाराजगी बढ़ रही है तो आपने यह कानून बनाया। 20 पोइन्ट प्रोग्राम क्या हो गया जैसे कोई नई गीता लिख दी हो। तो क्या इन सब बातों के लिये आपात् काल की जरूरत थी? अखबारों में छपता है जब से इमरजेंसी लागू हुयी है तब से बिना टिकिट यात्रा कम हो गयी। तो साहब पहिले से जैसे सम्वत् चले आये हैं वैसे ही आप भी अब 26 जून से इंदिरा सम्वत् चलाइये। यह सब आपका प्रोपगेन्डा है, इससे किसी अफसर की कुशलता नहीं बढ़ेगी, बिना टिकिट यात्रा नहीं रुकेगी। यहाँ तो जैसा आपका चरित्र होगा वैसा ही काम कर्मचारी करेगा। इस इमरजेंसी में आप कुछ लोगों को

जेल भेज देंगे। मानो विरोध पक्ष ने आदेश दिया था कि बिना टिकिट वालों को मत पकड़ो, हमने कहा था स्मगलिंग चलने दो, हमने कहा था सिंचित क्षेत्र न बढ़ाना, हमने कहा था लड़कों को लूटने दो, चाकू–छुरे चलने दो और उन्हें नकल करने दो। लोगों को गुमराह करने के लिये कि देखो कितना फायदा हुआ है इन विरोधी नेताओं को बन्द करने से, इसलिये इनको जेल में रहने दो जेल में रखना ही ठीक है, यह सब प्रचार हो रहा है।

एक शिशु मन्दिर की बात है। शिशु मन्दिर एक छोटी सी संस्था है जो जनसंघ के लोगों के हाथ में थी। आर.एस.एस. से उसका कोई मतलब नहीं था उसको आपने जब्त कर लिया। उन लोगों ने हाईकोर्ट में दावा दायर कर दिया यह रिट गवर्नमेंट के खिलाफ थी चूँकि फैसला होने वाला था अतः आर्डिनेंस द्वारा उसे जब्त कर लिया गया, यह कोर्ट का अपमान है। बहुत बड़ा अपमान है उसके 400 अध्यापक हैं उनकी तनख्वाह अब नहीं मिल रही है। आप सोचें, उन बेचारों का क्या होगा?

पूरे मुल्क में इस मीसा में कितने ही ऐसे है जिनको उनक तनख्वाहें नहीं मिल रही है मैं कहता हूँ मुख्यमन्त्री जी इनको नोट करें। कानून में मीसा के लिये प्राविधान है। लोगों के बच्चे भूखे मर रहे हैं उनके घर पर कोई जीविका कमाने वाला नहीं है किन्तु ऐसे तमाम लोगों को कानून होते हुये भी कोई एलाउन्स नहीं दिया जा रहा है। जुर्म बताते नहीं हैं, हाईकोर्ट का अधिकार ले लिया गया, तानाशाह की तरह से लोगों को जेलों में डाल दिया। किन्तु उनके लिये जो प्रोवीजन है एलाउन्स का, वह भी नहीं दिया, वैसे तो उन्हें जेल में ही नहीं रखा जा सकता। आप विचार कर लीजिये इसकी रिट होने वाली है जेल में उसी को रखा जा सकता है जिस पर कोई आरोप हो या जिसकी अदालत से सजा हो गयी हो फिर उसके बच्चों का तो प्रबन्ध करने का आपका फर्ज है, उस पर तो ध्यान दें।

जिस समय चौधरी साहब ने यह बयान दिया था उस समय सारा देश एक असंवैधानिक सत्ता केन्द्र के पीछे चक्कर लगा रहा था। देश के बड़े से बड़े मन्त्री, मुख्य मन्त्री और पार्टी ने उनकी अगवानी करने और उनकी चप्पल तक उठाने के लिये आगे भागते थे। उनके इशारे पर कांग्रेस नाच रही थी और स्वयं इंदिरा जी भी उल्टी उनकी खुशामद करती थीं, एक केन्द्रीय मन्त्री को तो इस राजकुमार ने चाँटा तक मार दिया था। डिफैंस के विभिन्न आयोजनों (जहाँ रक्षामन्त्री के अतिरिक्त कोई नेता नही बुलाया जाता) में उद्घाटनों में जाया करता था और अपने कुछ शिष्यों द्वारा सुन्दरियों को मंगाने के आदेश देता था फिल्म अभिनेत्रियों से जबरन डांस कराया जाता था। ऐसे इस शहंशाहे राजकुमार तथा कथित भारतीय ''युवा ह्रदय सम्राट'' का जिक्र किये बिना चौधरी साहब न रह सके।

''जेल में मेरे एक अजीज रेडियो सुना करते थे। वह बताते कि एक नौजवान संजय गाँधी का रेडियो प्रोग्राम आ रहा है हमारी बहिन इंदिरा जी का युवराज सुपुत्र संजय का रेडियो कार्यक्रम आ रहा है। मैं जानना चाहूँगा इसका क्या औचित्य है? किस नाम, किस उसूल से ऐसा किया जाता है। क्या उन्होंने कांग्रेस में रहकर कभी कोई जनसेवा का कार्य किया है। अब मैं आपसे पूछता हूँ कि इन तथ्यों से आपके अन्तःकरण को चोट लगती है या नहीं।

राजनारायण जी का मामला सर्वोच्च न्यायालय में पेश था संजय गांधी जाते हैं सुप्रीमकोर्ट में मामले की सुनवाई में इसलिये पुलिस वकीलों को एक जगह से दूसरी जगह जाना तक रोक देती है, क्योंकि युवराज आये हैं, उनको खतरा हो सकता है, इसकी निन्दा बार कौंसिल प्रस्ताव पारित करके करता है, उसका डेपुटेशन चीफ जस्टिस के माध्यम से प्रधानमन्त्री को जाता है, यह अखबार में भी नहीं आता है, क्यों?

मैं तिवारी जी पर चार्ज लगाता हूँ कि वह मुख्यमन्त्री की हैसियत से संजय का स्वागत करने क्यों जाते हैं? संजय बहन जी का लड़का है। 25–30 वर्ष उम्र होगी मैंने तो उसका फोटो ही देखा है सूरत भी नहीं देखी न जाने कैसे वह आसमान पर पहुंच गया। ऐसे और इतने ऊपर, मानो प्रधानमन्त्री के बाद दूसरा नेता वही है। कितनी खबरें उनके बारे में निकलती हैं कोई सीमा नहीं, क्या प्रेस खुश होकर यह खबरें देता है? ऐसा नहीं है उसे छापना पड़ता है, उसे आर्डर दिया जाता है। युवा कांग्रेस की सदस्यता का कोई रजिस्टर नहीं है, वह युवा कांग्रेस के नेता हो गये। रोज व्याख्यान देते फिरते हैं वरिष्ठ कांग्रेसमैनस् को डाँटते फिरते हैं। यू. पी. के विधायकों को चण्डीगढ़ में मीटिंग में डाँटा कि क्यों फिरते हो, इधर उधर गाँव में जाकर काम करो। गांव के बड़े एक्सपर्ट 'विशेषज्ञ' हो गये हैं रातों रात, भले ही खुद गांव नहीं देखा हो, जो आदमी मिलते हैं उनसे फटकार लगाकर कहते हैं गांव में जाकर काम करो बात कम करो। यू. पी. वालों से कहा मिनिस्ट्री बनती रहेगी गांव में जाकर काम करो। उस समय तक नारायण दत्त जी की नियुक्ति नहीं की गई थी। स्वतन्त्र भारत में दूसरे पृष्ठ पर नारायण दत्त जी द्वारा दी गई खबर छपी संजय जी के आगमन की कि उनका स्वागत किया जाये। यह काम मुख्यमन्त्री का नहीं है आप किसी से कह देते या किसी कांग्रेसमैन से करा देते।कम हो गयी। तो साहब पहिले से जैसे सम्वत् चले आये हैं वैसे ही आप भी अब 26 जून से इंदिरा सम्वत् चलाइये। यह सब आपका प्रोपगेन्डा है, इससे किसी अफसर की कुशलता नहीं बढ़ेगी, बिना टिकिट यात्रा नहीं रुकेगी। यहाँ तो जैसा आपका चरित्र होगा वैसा ही काम कर्मचारी करेगा। इस इमरजेंसी में आप कुछ लोगों को जेल भेज देंगे। मानो विरोध पक्ष ने आदेश दिया था कि बिना टिकिट वालों को मत पकड़ो, हमने कहा था स्मगलिंग चलने दो, हमने कहा था सिंचित क्षेत्र न बढ़ाना, हमने कहा था लड़कों को लूटने दो, चाकू–छुरे चलने दो और उन्हें नकल करने दो। लोगों को गुमराह करने के लिये कि देखो कितना फायदा हुआ है इन विरोधी नेताओं को बन्द करने से, इसलिये इनको जेल में रहने दो जेल में रखना ही ठीक है, यह सब प्रचार हो रहा है।

एक शिशु मन्दिर की बात है। शिशु मन्दिर एक छोटी सी संस्था है जो जनसंघ के लोगों के हाथ में थी। आर.एस.एस. से उसका कोई मतलब नहीं था उसको आपने जब्त कर लिया। उन लोगों ने हाईकोर्ट में दावा दायर कर दिया यह रिट गवर्नमेंट के खिलाफ थी चूँकि फैसला होने वाला था अतः आर्डिनेंस द्वारा उसे जब्त कर लिया गया, यह कोर्ट का अपमान है। बहुत बड़ा अपमान है उसके 400 अध्यापक हैं उनकी तनख्वाह अब नहीं मिल रही है। आप सोचें, उन बेचारों का क्या होगा?

पूरे मुल्क में इस मीसा में कितने ही ऐसे है जिनको उनक तनख्वाहें नहीं मिल रही है मैं कहता हूँ मुख्यमन्त्री जी इनको नोट करें। कानून में मीसा के लिये प्राविधान है। लोगों के बच्चे भूखे मर रहे हैं उनके घर पर कोई जीविका कमाने वाला नहीं है किन्तु ऐसे तमाम लोगों को कानून होते हुये भी कोई एलाउन्स नहीं दिया जा रहा है। जुर्म बताते नहीं हैं, हाईकोर्ट का अधिकार ले लिया गया, तानाशाह की तरह से लोगों को जेलों में डाल दिया। किन्तु उनके लिये जो प्रोवीजन है एलाउन्स का, वह भी नहीं दिया, वैसे तो उन्हें जेल में ही नहीं रखा जा सकता। आप विचार कर लीजिये इसकी रिट होने वाली है जेल में उसी को रखा जा सकता है जिस पर कोई आरोप हो या जिसकी अदालत से सजा हो गयी हो फिर उसके बच्चों का तो प्रबन्ध करने का आपका फर्ज है, उस पर तो ध्यान दें।

जिस समय चौधरी साहब ने यह बयान दिया था उस समय सारा देश एक असंवैधानिक सत्ता केन्द्र के पीछे चक्कर लगा रहा था। देश के बड़े से बड़े मन्त्री, मुख्य मन्त्री और पार्टी ने उनकी अगवानी करने और उनकी चप्पल तक उठाने के लिये आगे भागते थे। उनके इशारे पर कांग्रेस नाच रही थी और स्वयं इंदिरा जी भी उल्टी उनकी खुशामद करती थीं, एक केन्द्रीय मन्त्री को तो इस राजकुमार ने चाँटा तक मार दिया था। डिफैंस के विभिन्न आयोजनों (जहाँ रक्षामन्त्री के अतिरिक्त कोई नेता नही बुलाया जाता) में उद्घाटनों में जाया करता था और अपने कुछ शिष्यों द्वारा सुन्दरियों को मंगाने के आदेश देता था फिल्म अभिनेत्रियों से जबरन डांस कराया जाता था। ऐसे इस शहंशाहे राजकुमार तथा कथित भारतीय ''युवा ह्रदय सम्राट'' का जिक्र किये बिना चौधरी साहब न रह सके।

''जेल में मेरे एक अजीज रेडियो सुना करते थे। वह बताते कि एक नौजवान संजय गाँधी का रेडियो प्रोग्राम आ रहा है हमारी बहिन इंदिरा जी का युवराज सुपुत्र संजय का रेडियो कार्यक्रम आ रहा है। मैं जानना चाहूँगा इसका क्या औचित्य है? किस नाम, किस उसूल से ऐसा किया जाता है। क्या उन्होंने कांग्रेस में रहकर कभी कोई जनसेवा का कार्य किया है। अब मैं आपसे पूछता हूँ कि इन तथ्यों से आपके अन्तःकरण को चोट लगती है या नहीं।

राजनारायण जी का मामला सर्वोच्च न्यायालय में पेश था संजय गांधी जाते हैं सुप्रीमकोर्ट में मामले की सुनवाई में इसलिये पुलिस वकीलों को एक जगह से दूसरी जगह जाना तक रोक देती है, क्योंकि युवराज आये हैं, उनको खतरा हो सकता है, इसकी निन्दा बार कौंसिल प्रस्ताव पारित करके करता है, उसका डेपुटेशन चीफ जस्टिस के माध्यम से प्रधानमन्त्री को जाता है, यह अखबार में भी नहीं आता है, क्यों?

मैं तिवारी जी पर चार्ज लगाता हूँ कि वह मुख्यमन्त्री की हैसियत से संजय का स्वागत करने क्यों जाते हैं? संजय बहन जी का लड़का है। 25–30 वर्ष उम्र होगी मैंने तो उसका फोटो ही देखा है सूरत भी नहीं देखी न जाने कैसे वह आसमान पर पहुंच गया। ऐसे और इतने ऊपर, मानो प्रधानमन्त्री के बाद दूसरा नेता वही है। कितनी खबरें उनके बारे में निकलती हैं कोई सीमा नहीं, क्या प्रेस खुश होकर यह खबरें देता है? ऐसा नहीं है उसे छापना पड़ता है, उसे आर्डर दिया जाता है। युवा कांग्रेस की सदस्यता का कोई रजिस्टर नहीं है, वह युवा कांग्रेस के नेता हो गये। रोज व्याख्यान देते फिरते हैं

वरिष्ठ कांग्रेसमैनस् को डाँटते फिरते हैं। यू. पी. के विधायकों को चण्डीगढ़ में मीटिंग में डाँटा कि क्यों फिरते हो, इधर उधर गाँव में जाकर काम करो। गांव के बड़े एक्सपर्ट 'विशेषज्ञ' हो गये हैं रातों रात, भले ही खुद गांव नहीं देखा हो, जो आदमी मिलते हैं उनसे फटकार लगाकर कहते हैं गांव में जाकर काम करो बात कम करो। यू. पी. वालों से कहा मिनिस्ट्री बनती रहेगी गांव में जाकर काम करो। उस समय तक नारायण दत्त जी की नियुक्ति नहीं की गई थी। स्वतन्त्र भारत में दूसरे पृष्ठ पर नारायण दत्त जी द्वारा दी गई खबर छपी संजय जी के आगमन की कि उनका स्वागत किया जाये। यह काम मुख्यमन्त्री का नहीं है आप किसी से कह देते या किसी कांग्रेसमैन से करा देते।

लेकिन एक इतने बड़े प्रदेश का मुख्यमन्त्री एक लड़के के लिये जिसकी कोई सरकारी कानूनी हैसियत नहीं, विज्ञापन भोंपू बजाता फिरे कि वह आ रहा है, तो यह कहाँ तक उचित है? क्या मतलब है इसका?

एक 25–30 वर्ष का लड़का बजट पर व्याख्यान दे जो कि इतनी गुप्त चीज है। जवान और बूढ़े सभी कांग्रेसमैनस् को उपदेश दे। बल्कि मैंने यहाँ तक सुना है कि प्रधानमंत्री जी बड़े–बड़े नेताओं से, जो उनसे मिलने जाता है कह देती हैं कि पहले सजय गांधी से बात कर लो। मुख्यमन्त्रियों तक से कहा जाता है। यह सम्पूर्ण सार्वजनिक जीवन की बेइज्जती है। तिवारी जी, मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि संजय और आपका क्या मुकाबला? यह क्या बात हुई कोई शर्म है या नहीं? आप लोगों को कोई गैरत हो तो डूब मरना चाहिए। मुझे मालूम हुआ कि मिनिस्टर नारे लगाते रहते हैं यह भी मैंने सुना है कि नारा लगाया जाता है कि आज की नेता इंन्दिरा गांधी युवकों का नेता संजय गांधी, महिलाओं की नेता मेनका गांधी, कल का नेता राहुल गांधी। मैंने यह भी सुना है कि गवर्नमेंट की ओर से एक आर्डर दिया गया है कि 26 तारीख को जब संजय गांधी आ रहे हैं तो उस दिन अड्डे से गवर्नमेंट हाऊस तक स्कूल के बच्चों और उनकी अध्यापिकाओं की 15 कि.मी. तक लाइन उनके स्वागतार्थ बनायी जायेगी और बच्चे खड़े कर दिये जायेंगे। क्यों आपने ऐसा आर्डर नहीं दिया? अगर अफसरों ने दिया है तो उनसे पूछिये कि क्यों दिया? क्या सीखेंगे बच्चे संजय साहब से? मैं कुछ नहीं कहना चाहता? संजय से तिवारी जी आप क्या सीखेंगे? मीलों तक बच्चों को खड़ा किया जायेगा क्या उनसे कोई सीख मिलेगी? ट्रासपोर्ट अफसर को हुक्म हुआ कि वह 5–5 हजार लोगों को लायें। आर.टी.ओ. को हुक्म हुआ कि पैसे का इन्तजाम उन्हे करना है। आपने दिल्ली से आने पर बादशाह अकबर जैसा संजय का जुलूस निकालना चाहा। मैं पूछना चाहता हूँ कि यह सब गवर्नमेंट की तरफ से खर्च क्यों होगा।

लौह पुरुष चरणसिंह एक ऐसा व्यक्तित्व है कि उनके दामन पर कोई दाग नहीं ईमानदारी उनके रक्त में समाई हुई है। भ्रष्टाचार से जबर्दस्त नफरत है तो भला झूठ के लिए ऐसे स्पष्टवादी के मस्तिष्क में स्थान ही कहाँ मिला सकता है? चूँकि जो व्यक्ति झूठ बोलना पसन्द नहीं करता वह झूठ सुनना भी पसन्द नहीं करेगा। वह इसलिए इन्दिरा जी से भी अधिक नाराज रहते है कि वह एक तो गलत कार्य करती हैं और फिर उसे छुपाने के लिये अनेक झूठ बोलती हैं। इसी सन्दर्भ में उनके भाषण के उन महत्वपूर्ण अंशों को दिया जा रहा है जहाँ श्रीमतीजी के झूठ की आलोचना की गई है:–

पहले प्रधानमंत्री जी कम्युनिस्टों की भाषा में जनतंत्र को ''सोशियल डेमोक्रसी'' 'सामाजिक लोकतन्त्र' कहा करती थी कि संविधन में बड़े भारी परिवर्तन की जरूरत है लेकिन अब केवल डेमोक्रेसी कह रही और कहती हैं। हम डेमोक्रेसीके अन्तर्गत कार्य कर रहे हैं और संविधान सभा में अधिक संशोधन की जरूरत नहीं है किन कारणों से उनके कथनों में तब्दीली आ गई है इस पर मैं कुछ नहीं कह सकता लेकिन इसमें शक नहीं कि आज डेमोक्रेसी का दम भरा जा रहा है।

बात यह है बड़े अफसोस की बात है कि हमारी प्रधानमंत्री कभी सच नहीं बोलेंगी कभी नहीं बोलेंगी। लिखा लीजिये इसका जबाव दे दीजियेगा। जो भी बयान उन्होंने दिया है उसमें गलत बयानी ही अधिक की है। कहती हैं कहां है सेंसर? तिवारी जी यू.पी. में सेंसर हैं या नहीं? हिन्दुस्तान में है या नहीं? गाइड लाइंस के आधार पर आदेश दे दिये गये हैं। इसके खिलाफ प्रेस वाले कार्यवाही करें तो बिजली कट जायेगी और कोई अपील नहीं होगी और कुछ गाइड लाइन्स 22 मार्च को जारी हुई है जिन पर कहीं किसी के दस्तखत नहीं कि किसका आदेश है फिर भी न मानें तो हाईकोर्ट तक से तो बच जायेंगे मगर वह रगड़ कर रख देंगे अखबारों में कोई खबर ही नहीं है ए टू जैड दो ही नाम उसमें हैं। एक तो हमारी बहन जी हैं दूसरा हमारा भान्जा है।

एक और मजे की बात है। अभी एक विदेशी संवाददाता समिति से इन्टरव्यू हुआ हमारी बहिन जी का उन्होंने कहा प्रेस सेंसरशिप क्यों लगा रखा है? उत्तर था ''यहाँ के अखबार सरकार के खिलाफ अनर्गल प्रोपेगण्डा करते थे कि बड़े–बड़े उद्योगपातियों के अखबार हैं और बड़ी–बड़ी जायदाद वालों के हैं अतः वह हमारे खिलाफ हैं क्योंकि हम गरीबों के हामी हैं।'' पहली बात तो मैं यह कहना चाहता हूँ कि प्रोपेगण्डा करने का सब को हक होता है सही हो या गलत अगर वह करना चाहे। कहाँ संविधान में लिखा है कि प्रोपेगण्डा नहीं होगा? चूँकि यह इन्दिरा जी के खिलाफ होता है तो वह कहती हैं लोकतन्त्र के खिलाफ है, फिर मालदार लोग अपके खिलाफ नहीं हैं और आप भी उनके खिलाफ नहीं है। इससे बेहतर सरकार उनके लिये और क्या होगी? क्योंकि सन् 1947 में बिड़ला की सम्पत्ति 30 करोड़ थी 1951 में 65 करोड़ हो गयी 65 में 400 करोड़ हो गयी आज बहिनजी के शासन में बढ़कर 10 अरब हो गई। इसी तरह से 95 बड़े पूँजीपतियों की सम्पत्ति दुगनी, चौगुनी, दस गुनी और बीस गुनी हो गई है और आप सरासर झूठ बोलकर दुनियां को दिखा रही हैं कि पूँजीपति आपसे नाराज हैं और उनके अखबार खिलाफ खबरें छापते थे। जो शिकायत हमको होनी चाहिए थी वह आप कर रही हैं आपके हाथ में विज्ञापन है, अखबारी कागज का कोटा है, बिजली कनेक्शन, लाइसेन्स, फैक्ट्री लगाने की इजाजत देना न देना भी आपके हाथ मे है। फिर क्या यह लोग आपके खिलाफ हो सकते हैं, मतलब जान–बूझकर झूठ बोला जाता था, ऐसी नंगी गलत बयानी की जाती है जिसको करने का साहस मात्र उनमें ही है यह कोई पुरूष नहीं कर सकता है। कोई पुरूष 60 करोड़ लोगों को इमरजेंसी के नाम पर इस तरह नहीं हाँक सकता है जैसे राजेन्द्रकुमारी कर सकती हैं या इंदिरा जी कर रही हैं। रोजाना की गलत बयानी मेरी समझ में नहीं आती। सच्चाई का गला जितना आपने घोंटा, उसने हिटलर और मुसोलिनी को भी मात कर दिया।

मीसा बनाया था अपराधियों के लिये जो वाकई तस्करी करते हों, आश्वासन दिया गया था लोकसभा में कि राजनैतिक नेताओं के खिलाफ मीसा इस्तेमाल नहीं होगा। माननीय देसाई जी ने जब अनशन किया था तो उनकी एक मांग यह भी थी उस समय इन्दिरा जी ने उनको लिखा था कि मीसा को राजनैतिक नेताओं के खिलाफ इस्तेमाल नहीं करेंगे। परन्तु आपने हम सबों को फिर भी मीसा में बन्द कर दिया। क्या आप बतायेंगे क्यों? आप सदन में बयान देते हैं प्राइम मिनिस्टर वायदा करती हैं, मोरारजी को पत्र लिखती हैं। मैं जानना चाहता हूँ, कि आपने इन आवश्वासनों की अप्रतिष्ठा क्यों की?

तिवारी जी जब कोई मिनिस्टर कहीं बयान देता है, मान लो वह दौरे पर जाये और बयान दे, तो वह सरकार की नीति वक्तव्य की भाँति मान्य होता है। वह गवर्नमेंट का स्टेटमेंट माना जाता है, मीसा के मामले में इन्दिरा जी ने औपचारिक वायदा किया था, उसकी अवहेलना करना प्रधानमंत्री के पद को गिराने की बात है। तिवारी जी चाहे कोई प्राइम मिनिस्टर दो साल रहे, चाहे 10 साल रहे, हमें ऐसी परम्परा नहीं कायम करनी है कि हिन्दुस्तान में आने वाली हमारी औलादें प्रधान मन्त्री के बचनों में यकीन न करें। यकीन के ऊपर ही सारी सोसाइटी चलती है। प्रधानमन्त्री के वचनों पर मुल्क चलता है, मुल्क उठता है, मुल्क लड़ता है, संधि करता है, नुकसान उठाता है और लाभ उठाता है।

हमारी बहिन गलती से भी कभी सही बात नहीं कहती है। रोज ही गलत प्रोपेगण्डा करेंगी किस तरह साम्यवादी देशों में ब्रेनवाश किया जाता है या दिमाग की सफाई होती है। एक गलत काम करो तो उसके छिपाने के लिये हजार झूठ वोले जाते हैं और हजार गलत बातें की जाती हैं। सुनिए, एक विदेशी संवाददाता ने आपसे पूछा कि लोग आपके साथियों के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोप लगाते हैं तो उत्तर मिला– हमारा कोई मन्त्री भ्रष्ट नहीं है क्या इससे अधिक असत्य दुनिया में कोई हो सकता है?

अपने बयान के दौरान चरणसिंह जी ने श्रीमती इंदिरा गांधी पर कम्युनिस्ट प्रकार की तानाशाही थोपने का आरोप लगाते हुये आपको चुनौती दी कि अगर तुममें हिम्मत है तो चुनाव करा लो मालूम हो जायेगा कि तुम्हारी जनता में कितनी जड़ें हैं–

श्रीमती गाँधी अपने पिता पं0 नेहरू को भी राजनीति में मात दे गयीं वह स्वयं कहने लगीं कि ''मेरे पिता तो साधु थे, राजनीतिज्ञ मैं हूँ तथा राजनीति में कोइनैतिकता नहीं होती।'' इसके ठीक विपरीत पंडित जवाहरलाल नेहरू के विचार थे जब वह 1936 मे लखनऊ में आयोजित कांग्रेस में भाग लेने आये तो उन्होंने कहा थाः–

"Comrade, being interested in psychology, I have watched the process of moral and intellectual decay and realised even more than I did not previously, how autocratic power corrupts, degrads and relgarises.

A government that has to rely on the criminal administration amendment act and similar laws that suppresses

the press and literature, that bans hundreds of ogranisations, that keeps people in persons without trial and that sees so many things that are happening in India today, is a government that have ceased to have even a shadow of justification for its existence."

यही भाषा उस समय समाचार पत्रों में प्रकाशित हुयी थी किन्तु उनके विरूद्ध कोई कार्यवाही नहीं हुई थी।

बड़े दुर्भाग्य का विषय है कि चौधरी साहब द्वारा आपातकाल में 5 घण्टे तक लगातार दिये गये उनके इस धारा प्रवाह वक्तव्य की चार पंक्तियाँ भी किसी समाचार–पत्र में देखने को नहीं मिलीं। अगर छापने की कोशिश भी की होती तो उसे बन्द कर दिया जाता; यह तो जनतंत्र था इंदिराजी का। लेकिन चौधरी साहब ने पुनः गिरफ्तारी की चिंता न करते हुये भी इंदिरा सरकार पर जिस प्रकार के तीखे, सीधे किन्तु सत्य प्रहार किये वह भारतीय इतिहास की एक अभूतपूर्व मिसाल है किन्तु उन्हें सामान्य जनता के बीच आने से रोक दिया गया। अब मैंने उन्हें इसी दृष्टिकोण से अपनी पुस्तक में संजोया है जिससे चरणसिंह जी की निर्भीकता की कहानियाँ जन–जन तक पहुंचें और पाठक विचार कर निर्णय ले सकें कि वह सही मायनों में भारत के दूसरे लौह पुरूष हैं, जो अपनी बात पर अडिग रहे, जबकि कुछ स्थार्थी नेताओं ने उन पर आरोप लगाया था कि वह इन्दिरा जी से समझौता कर गृहमंत्री बनना चाहते थे।

क्या उनके द्वारा दिया गया विधान सभा का ओजस्वी भाषण इस तथ्य की स्पष्ट जानकारी नहीं देता? यह लोग कितने स्वार्थी और निम्नस्तर के हैं जो एक ईमानदार, स्पष्टवादी और धवल व्यक्तित्व पर छींटाकशी करते हैं। यह बात यहाँ स्पष्ट हो जाती है।

(ब) लोकसभा में : पंजाब की समस्या पर

जिस प्रकार उ0प्र0 विधानसभा में चौ0 चरणसिंह ने आपात्काल में एक ऐतिहासिक गर्जना की उसी प्रकार भारत की सातवीं लोकसभा में भी पंजाब में अलगाववादी एवं कुछ विरोधी शक्तियों द्वारा खेली जा रही खून की होली पर अपनी मानसिक वेदना व्यक्त करते हुये जो भाषण दिया वह भी उनकी राष्ट्रवादिता, दृढ़ता एवं स्पष्टवादिता के लिए देश की जनता के हित में दिया गया एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दस्तावेज है। 26 अप्रैल 1984 को लोकदल सांसद प्रो0 बी0डी0 सिंह ने पंजाब समस्या पर काम रोको प्रस्ताव पेश किया उसी प्रस्ताव पर लगभग ढाई घण्टे के विवेचन में चौधरी साहब ने जो गर्जना की उसकी सारे राष्ट्र ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की। अतः इस भाषण को मूलरूप से प्रस्तुत किया जा रहा है–

''जैसा कि मेरे साथी ने कहा है कि आज जिस प्रस्ताव पर चर्चा कर रहे हैं, यह एक ऐतिहासिक मसला कहा जा सकता है। इससे देश के भविष्य का सवाल जुड़ा हुआ है। यह कोई मामूली

बात नहीं है। इसका प्रभाव कोई मामूली पड़ने वाला नहीं है। देश के भविष्य के लिए यह बहुत बड़ी बात है।

खालिस्तान की माँग या सिक्खिस्तान या सिख स्टेट, कुछ भी कहिये, यह काफी समय से चली आ रही है। हिन्दुओं ने हिन्दुस्तान ले लिया, मुसलमानों ने पाकिस्तान ले लिया और हमारी मांग खालिस्तान के लिए है। इन्हीं अल्फाजों में नहीं तो दूसरे अल्फाजों में, यह आवाज पहले से उठती रही है। सरदार पटेल के सामने मास्टर तारा सिंह जी ने करीब–करीब यही बात कही थी। अल्फाजों में फर्क हो सकता है। सरदार पटेल ने उनको बुलाया और उनसे कहा कि यह मुमकिन नहीं है। यह आपके लिए और देश के किसी नागरिक के लिए मुनासिब नहीं है। उन्होंने जो कहा मास्टर तारा सिंह उसको समझ गये। जो कुछ वे कह रहे थे उसको वे राजसत्ता के बल पर करने के लिए तैयार भी थे। मास्टर साहब जिस प्रबल भाषा में आवाज उठा रहे थे उसको उन्होंने बन्द किया और देश शांति से चलने लगा। देश भर में किसी व्यक्ति के जहन में यह बात नहीं रही कि हमारे सिख भाई हम से अलग होने की बात सोच रहे हैं।

उसके बाद बहुत अरसे तक पं. गोविन्द बल्लभ पंत यू. पी. के चीफ मिनिस्टर रहे। वे जब होम मिनिस्टर बने तो 12 जून 1960 को पंजाबी सूबा या पंजाबी स्टेट या जो कुछ भी कहा जाये, इस मांग को लेकर हमारे सिख भाईयों ने एक जुलूस निकालना चाहा। वह जुलूस शीशगंज से रकाबगंज गुरुद्वारे तक निकालना चाहते थे। पंडित जी ने कहा कि यह बात गलत होगी क्योंकि यह मांग भी गलत है। लिहाजा वह जुलूस शीशगंज से निकलकर रकाबगंज तक नहीं जापाया और जो लोग जुलूस में थे, वे तितर–बितर हो गये। देश में कोई अवांछनीय घटना नहीं हुई और यथा–पूर्व शांति से देश चलता रहा। इसके बाद सबसे पहले 10 जून 1968 को दिल्ली में सिख होमलैंड की आवाज उठती है। बाकायदा मेरे पास एक प्रेस रिपोर्ट है और जो बात आज तफसील से कही जा रही है, करीब–करीब वही मांग थी। इस पर गवर्नमेंट ने कुछ किया या नहीं, यह मुझको नहीं मालूम लेकिन, बाजाब्ता यह आवाज उठी।

मैं यह अर्ज कर देना चाहता हूँ कि इससे पहले सन् 1966 में पंजाब और हरियाणा के दो टुकड़े हो गये। रोहतक में प्रैक्टिस करने वाले एक प्रमुख वकील थे, उन्होंने मुझको एक चिट्ठी में यह लिखा कि हरियाणा एक छोटा सूबा रह जायेगा और पंजाब भी छोटा सूबा होगा। लेकिन मुगलों के जमाने से दिल्ली सूबा एक था मेरठ और आगरा डिवीजन तथा हरियाणा का इलाका, यह सब एक ही सूबा था। अंग्रेजों के जमाने में एक सिविलियन ऑफिसर कारबेट ने यह स्कीम रखी थी। सन् 1928 में हिन्दू–मुस्लिम एकता का सवाल उठा। उस समय पं0 मोतीलाल नेहरु हमारी कांग्रेस के अध्यक्ष थे। मुस्लिम भाई अल्पमत में थे लेकिन उनको तरजीह दी जाती थी। हमारे सिख भाईयों ने कहा कि पंजाब में हमको प्रमुखता मिलनी चाहिए, जैसे मुस्लिम अल्पसंख्यकों को और सूबों में मिलती है। मुसलमानों का यह जबाव था कि हमारी कुल 52–53 प्रतिशत आबादी है इसलिए हमें पंजाब में प्रमुखता मिलनी चाहिए। दलील दोनों की ठीक थीं। इस मसले को हल करने के लिए ब्रिटिश सिविलियन ने एक योजना रखी थी। जिसमें राउण्ड टेबल कांफ्रेंस पर विचार हुआ। जहाँ तक मुझे याद है, महात्मा गांधी

और जिन्ना साहब ने उसको माना। लेकिन डॉ0 गोकलचंद नारंग ने, जो हिन्दू महासभा के लीडर थे, स्वीकार नहीं किया। योजना यह थी कि हिन्दी भाषी क्षेत्र पंजाब में घग्गर नदी तक है, वह कभी पंजाब का अंग नहीं था लेकिन सन् 57 में शामिल कर दिया गया। वह क्षेत्र, मेरठ और आगरा, डिवीजन का क्षेत्र तथा दिल्ली सूबे का क्षेत्र 1803 में लार्ड लेक की विजय के बाद अंग्रेजों के हाथ में आया। उसे हरियाणा, पंजाब में जोड़ दिया और मेरठ तथा आगरा डिवीजन लखनऊ में शामिल कर दिये गये।

एक साहब ने मुझे चिट्ठी लिखी, उनका नाम मेरे पास मौजूद है। उन्होंने कहा कि आप यू0पी0 से आवाज उठाइये। यू0पी0 से आवाज पहले उठ चुकी थी। मैंने उस आवाज में पहले कभी हिस्सा नहीं लिया था कि यू0पी0 का पुनर्गठन होना चाहिए। मैंने उसमें सक्रिय हिस्सा नहीं लिया क्योंकि पंडित जी इस चीज को नहीं मानते थे। जब जनता पार्टी बनी तो मेरी राय थी कि बिहार, मध्य प्रदेश और यू0पी0 का पुनर्गठन होना चाहिए। हमारे उस वक्त के जो प्रधान मन्त्री थे वह उसके लिये शुरू में राजी नहीं हुए, बाद में राजी हो गये।

विभाजन ग़लत

हाँ, तो मैं अर्ज कर रहा हूँ कि मुझसे कहा गया कि उधर से यह आवाज उठायें कि मेरठ, आगरा, डिवीजन हरियाणा के पास मिलाकर दिल्ली सूबा हो जाये। तो उस वक्त जो चिट्ठी मैंने लिखी, वह सुनाता हूँ। मेरी राय यह थी कि पंजाब का बंटवारा होना गलती हुई। यह नहीं होना चाहिए था। क्योंकि इसके नतीजे आगे जाकर गलत निकलने वाले हैं। मैंने उनको लिखा, यह चिट्ठी नवम्बर 24, 1965 की है–

'प्रिय चौधरी साहब, आपका 18 नवम्बर का पत्र प्राप्त हुआ। बहुत–बहुत धन्यवाद। मेरा स्पष्ट रूप से कहना है कि मैं नहीं समझता कि एक पंजाबी भाषी राज्य का गठन देश के हित में होगा। इसके दूरगामी परिणाम होंगे।'

अब उसके प्रभाव हमारे सामने हैं। यह मैं बता रहा हूँ कि 1966 में बंटवारा हुआ और दो साल बाद खालिस्तान की आवाज उठनी शुरू हो गई मेरे पास बाकायदा प्रस्ताव की प्रति मौजूद है, 1968 की। 1976 में आनन्दपुर साहब में उस प्रस्ताव को फिर दोहराया गया और साफ बात कही गई। जो उसका शुरू में अर्थ लगाया गया, वह कहते हैं हमारा मतलब यह नहीं था कि सिख राज्य अलग बने, सिख देश या खालिस्तान बने। लेकिन जो अल्फाज उसमें इस्तेमाल किये हैं उससे अगर यह अर्थ निकाला जाये कि सिख समुदाय एक सिख राष्ट्र होगा और वह एक अलग देश या हिस्सा चाहते हैं, मुल्क से अलग होना चाहते हैं तो गलत न होगा। क्योंकि प्रस्ताव के अल्फाज यह हैं:–

''शिरोमणि अकाली दल के बुनियादी आधार तत्व''

(अ) अभिधारणा:

''शिरोमणि अकाली दल सिख राष्ट्र की आशाओं और आकांक्षाओं को मूर्त रूप देने के लिए है और इस प्रकार पूर्ण रूप से इसका प्रतिनिधित्व करने का अधिकारी है।''

सिख कम्युनिटी नहीं, सिख राष्ट्र, फिर अगले पृष्ठ 20 पर वह कहते हैं:

''राजनीतिक लक्ष्यः

निःसंदेह पन्थ का राजनीतिक लक्ष्य सिख इतिहास के पृष्ठों में दसवें गुरु के धर्मादेशों को प्रतिष्ठापित करना और खालसा पन्थ का जो मूलभूत लक्ष्य है, वह है खालसा का पुनः उत्कर्ष।''

अब प्रीएमीनेंस आफ दि खालसा का मतलब आम भाषा में यही हुआ किऔर लोगों से ज्यादा अधिकार खालसा पंथ के सदस्यों को होंगे। प्रीएमीनेंस खालसा पंथ की होगी और लोगों को नहीं होगी। 1973 में यह प्रस्ताव पास हुआ। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्ध कमेटी दरअसल कायम हुई धार्मिक मामलों को तय करने के लिए। ननकाना साहब में जो उस वक्त मैनेजर थे वह मिसमैनेजमेंट कर रहे थे, जिसके लिए सत्याग्रह हुआ, केवल धार्मिक और सांस्कृतिक मामले में। जहाँ तक मेरा अन्दाजा है उनका उद्देश्य सीमित था। धीरे–धीरे उसने राजनीतिक रूप धारण किया और हमारी गलती की वजह से, हमारे नेताओं की गलती की वजह से, आज हम वर्तमान स्थिति में पहुंच गये हैं। अब सब पर यह बात जाहिर हो गई है।

पंजाब के सिलसिले में बात करने के लिए अक्टूबर के आखिरी हफ्ते में इंदिरा जी ने मुझको बुलाया। मेरी उनकी कोई 40–45 मिनट तक बातचीत हुई। मैंने बहुत साफ गोई से उनसे बात की। मैंने इन्दिरा जी से कहा कि मैं चाहता था कि वह यहां होतीं, लेकिन वह यहां नहीं है। मैंने कहा कि जो कुछ हुआ है, यह आपकी गलती के कारण हुआ है। साम्प्रदायिक, जातिगत, भाषाई–भेदभाव यह सब कांग्रेस नेतृत्व, जो कि शुरू से ही शासन में है, की गलत नीतियों के कारण है। उन्होंने एक पैटर्न सैट कर दिया जिसका नतीजा यह हुआ कि सारे राजनैतिक दलों ने भी वही नीति अपनानी शुरू कर दी जो आपने अपनायी। सबको वोट की फिक्र थी। वोट मिल जाये किसी सूरत में, किसी भी शर्त पर और हम सत्ता में आ जायें। पूरी सत्ता में न आ पायें कुछ में आ जायें। लेकिन जिस ढंग से वोट मांगे जायें, जिस तरीके से लोगों से अपील की जाये, चाहे उसके नतीजों के तौर पर देश के टुकड़े क्यों न हो जायें, मसलन धर्म की बात, साम्प्रदायिकता की बात।

धार्मिक संगठन और राजनीति

पंडित जी कहते थे और हम सब लोग कहा करते थे कि साम्प्रदायिकता, जातिवाद और भाषावाद, ये तीनों कारण हैं बिखराब के। लेकिन हमने क्या किया साम्प्रदायिकता के बारे में?

मैंने इंदिरा जी से यह कहा कि होना यह चाहिए था कि जब देश का बंटवारा हो गया, जिसके लिए न मालूम कितने लोगों ने तकलीफ उठाई, जो हम स्वप्न देखते थे, जो हमारी सांस्कृतिक विरासत थी, जिस पर हमें गर्व था, जिस देश के टुकड़े हो गये, तो 16 अगस्त को पंडित नेहरू को यह अध्यादेश जारी करना चाहिए था कि हर धर्म के लोगों की अपने धर्म के प्रचार के लिए, अपनी संस्कृति को बढ़ाने के लिए, शैक्षिक संस्थान खोलने के लिए छूट होगी, संगठन बनाने का अधिकार होगा लेकिन जिस संगठन की सदस्यता किसी सम्प्रदाय या एक धर्मावलम्बी लोगों तक सीमित होगी उसे राजनीति में दखल नहीं देने दिया जायेगा। मुस्लिम लीग ने बँटवारा कराया। लेकिन मुस्लिम लीग ही नहीं, चाहे अकाली दल हो, हिन्दू महासभा हो या हिन्दुओं का कोई और संगठन हो, या इसाईयों का हो, एक ही

धर्म के मानने वाले लोगों तक जिसकी सदस्यता महदूद होगी, उसे सभी स्वतंत्रताएं होंगी, सिवाय इसके कि वह राजनीतिक क्षेत्र में काम नहीं कर सके, यह करना चाहिए था, लेकिन नहीं हुआ।

देश आजाद हुआ और पांच महीने बाद एक धर्मान्ध हिन्दू ने महात्मा गांधी की हत्या कर दी। उसके दो महीने बाद 3 मई 1948 को अपनी विधायी हैसियत में संविधान सभा ने एक प्रस्ताव पास किया। उसे हैसियत थी संविधान बनाने की और जो संसद के अधिकार होते हैं, विधान बनाने की। उसी पर अगर अमल कर लिया जाता तो आज देश की दुर्गति न होती।

तीन मई को यह प्रस्ताव पारित किया गया–

''चूँकि लोकतंत्र को उचित रूप से चलाने और राष्ट्रीय एकता में वृद्धि, भाईचारे के लिए यह अत्यावश्यक है कि साम्प्रदायिकता को भारतीय जन–जीवन से समाप्त कर दिया जाये। संविधान सभा का विचार है कि किसी भी ऐसे साम्प्रदायिक संगठन को, जो कि अपनी संविधान द्वारा या अधिकारियों या विभागों द्वारा किये गये कार्यों, निहित सूझबूझ से, अपने संगठन में किसी भी व्यक्ति को धर्म, प्रजाति तथा जाति या इनमें से किसी भी आधार पर सदस्यता से अलग रखता हो, समाज की धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तथा शैक्षणिक मूलभूत आवश्यकताओं को छोड़कर किसी भी क्षेत्र में कार्य करने की अनुमति नहीं है तथा इसको रोकने के लिए वैधानिक और प्रशासनिक कदम उठाए जाने चाहिए।

संविधान सभा ने यह प्रस्ताव पास किया था, मैंने इन्दिरा जी से कहा कि बहनजी, अगर खुद पंडित जी ने यह काम नहीं किया तो आपको ही करना चाहिए, मुझे तारीख तो याद नहीं है, मैंने अखबारों में पढ़ा था, इसी सदन में जब यह पूछा गया कि मुस्लिम लीग, जो दक्षिण में काम कर रही है, उसको क्यों बर्दाश्त किया जा रहा है, तो पंडित जी ने यह जवाब दिया था कि वह साम्प्रदायिक नहीं है, यह दूसरी ही मुस्लिम लीग है। खैर, मैंने इंदिरा जी से कहा कि आप 1959 में कांग्रेस अध्यक्ष बनीं और 1960 में पं0 नेहरू प्रधानमन्त्री थे। आप दोनों की रज़ामंदी से यह हुआ होगा– यह नहीं हो सकता कि आपने विरोध किया हो और वे चाहते हों या आप चाहती हों और उन्होंने विरोध किया हो, फिर भी यह हो गया हो। आपने मुस्लिम लीग से मिलकर केरल में मिली–जुली सरकार बना ली।

1959 में रबात में मुस्लिम देशों और मुस्लिम बहुल देशों की कांफ्रेस हुई। भारत सरकार ने श्री फखरूद्दीन अली अहमद को, जो कि उस वक्त औद्योगिकविकास मंत्री थे, अपना प्रतिनिधि बनाकर वहाँ भेजा। जो उनकी तैयारी समिति थी, उसने कहा कि आप हकदार नहीं हैं क्योंकि इण्डिया न तो मुस्लिम राष्ट्र है और न ही मुस्लिम बहुल राष्ट्र है। टर्की ने कहा था कि हम मुस्लिम राष्ट्र ज़रूर हैं लेकिन हम धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र हैं। उन्होंने अपना प्रतिनिधि नहीं भेजा। इंडोनेशिया ने भी अपना प्रतिनिधि नहीं भेजा यह कहा कि हम धर्मनिरपेक्षता में विश्वास करते हैं, इसलिए वहाँ पर जाना ठीक नहीं समझते हैं। यह तो दो मुस्लिम देशों का रवैया था लेकिन हमारे राजनीतिक नेता का यह रवैया था कि हमारा प्रतिनिधि वहाँ पर जाकर बैठे। जब पाकिस्तान ने एतराज किया तो उनको मीटिंग छोड़नी पड़ी और हिन्दुस्तान की नाक एक तरह से सारी दुनिया के सामने कट गई। इसके बारे में उस वक्त बहुत सारे राष्ट्रवादी मुसलमानों ने भी एतराज किया था। मेरे पास उनके नाम मौजूद हैं। छागला साहब ने तो बहुत सख्त बयान दिया

था कि वहाँ पर हमारा नुमाइन्दा क्यों भेजा गया। लेकिन इंदिरा जी की मर्ज़ी से वहाँ पर गये। इरादा इसके पीछे यह था कि मुस्लिम वोट्स को हासिल किया जाये। मौजूदा प्रधान मन्त्री ने ऐसा किया। हमारी तरफ से तो ऐसे कदम उठने चाहिए जिससे लोग भूल जाएं कि कौन हिन्दू है और कौन मुसलमान है।

लीग से गठबंधन क्यों?

1970 में केरल में कांग्रेस (आई) मुस्लिम लीग के साथ चुनाव लड़ने का फैसला करती है। प्रेस कांफ्रेस होती है, उसमें लोग ऐतराज करते हैं कि आपकी पार्टी तो धर्मनिरपेक्ष है, आपने मुस्लिम लीग के साथ चुनाव लड़ने का फैसला क्यों किया? कहा जाता है कि हमने उसके साथ चुनाव नहीं लड़ा, लेकिन हमारे और इनके प्रोग्राम एक हैं, इसलिए उनके साथ सरकार बना रहे हैं। इसका क्या मतलब है? हमारे इनके प्रोग्राम एक हैं– यह क्या दलील है।

उसके बाद जनवरी या फरवरी 1971 में बम्बई कारपोरेशन में कांग्रेस (आई) मुस्लिम लीग के साथ मिलकर चुनाव लड़ती है। केरल के मामले को इनकी नेता यह कह कर फर्क करती है कि हमने चुनाव साथ नहीं लड़ा, यह चुनकर आ गये, हमारा इनका दृष्टिकोण एक है, प्रोग्राम एक है, इसलिए मिलकर सरकार बनाने में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन पाँ–छः महीने के बाद ही वह दलील खत्म हो जाती है और कांग्रेस (आई) मुस्लिम लीग के साथ मिलकर चुनाव लड़ती है। यह इनका रवैया रहा है, जिसकी वजह से हिन्दुस्तान में आज जो हो रहा है, यह सब उसी का नतीजा है।

मुस्लिम मजलिस भी एक साम्प्रदायिक पार्टी थी। मेरी पार्टी और कुछ दूसरी पार्टीज ने मिलकर चुनाव लड़ा– यह बात ठीक है। ऐसा नहीं होता तो ज्यादा ठीक होता, मैं इस बात को स्वीकार करता हूँ। लेकिन हमने आपके (कांग्रेस) लीडर की नकल की। उसमें मेरी पार्टी थी और चार–पाँच पार्टियाँ थीं। सबने मिलकर चुनाव लड़ा। मैं पहले ही इस बात को कह चुका हूँ– शासक दल सबसे बड़ी पार्टी है जिसका नेतृत्व सबसे पुराना है, उसने सबसे पहले ऐसा नमूना पेश किया। दूसरे राजनीतिक दलों ने भी उसी तरीके पर कोशिश की, जो मैं समझता हूँ कि गलती की है। लिहाजा इस पर खुश होने का कोई मौका नहीं है। नमूना शासक दल ने स्थापित किया और करीब–करीब सभी विपक्षी दलों ने उस पर अमल किया। इसलिए बजाय इसके कि कांग्रेस(ई) यह स्वीकार करे कि गलती की है, उसके कुछ सांसद कहते हैं कि हमने भी गलती की है। हम तो कह चुके हैं– जो बड़े भाई ने गलती की, वही गलती हमने भी की।

जातिवादः जिम्मेदार कौन?

अब जाति की बात को लीजिये। मैंने पंडित जवाहरलाल नेहरु का नाम नहीं लिया, लेकिन यह बात सच है कि पंडित जी भी कश्मीरी पंडितों की कांफ्रेस में जाया करते थे, वे एक बार नहीं अनेक बार उनकी कांफ्रेस में सम्मिलित हुये हैं। मैंने अपनी किताब में इसका हावाला दिया है, आप चाहें तो मैं उसको सुना देता हूँ। समय कम है इसलिए नहीं पढ़ूंगा, लेकिन एक बार मैंने इंदिरा जी के सामने भी कहा था कि ऐसे बहुत से सम्मानित कांग्रेसजन हैं, जिनका मैं बहुत आदर करता हूँ, वे इस तरह की

कास्ट–कांफ्रेस में हिस्सा लेते हैं। एक बार पी.सी.सी. की एक्जीक्यूटिव में यह सवाल उठाया कि क्या एक्जीक्यूटिव के सदस्य को कास्ट कांफ्रेस में जाना चाहिए। कुछ मुखालफत के बाद यह तय हुआ कि नहीं जाना चाहिये। लेकिन मेरे एक बुजुर्ग नेता थे, जिनकी मेरे मन में सबसे ज्यादा इज्जत थी– मैंने कहा, 'बाबूजी, आप खत्री समाज की कांफ्रेस में कानपुर गये थे।' मैं टण्डन जी की तरफ इशारा कर रहा हूँ। मैं कोई ऐसी बात नहीं कह रहा हूँ जो असंगत हो। मैं कह रहा हूँ कि हमारे राजनीतिक नेतृत्व ने शुरू में गलती की है और उसकी ज्यादा जिम्मेदारी शासक दल की है, जिसमें हमारे करीब–करीब सारे नेता शामिल थे। दूसरे लोगों ने भी नकल की, यह मैं शुरू में ही कह चुका हूँ। पंजाब की जो बात है, वहाँ तो आग लगी हुई है।

अब इन्दिरा जी जो दे रही हैं; मेरे पास उनकी स्पीचें हैं, रोज उनकी स्पीच हो रही है कि यूनिटी की जरूरत है, साम्प्रदायिकता बढ़ रही है, जातिवाद बढ़ रहा है। मैं जानना चाहता हूँ कि साम्प्रदायिकता को बढ़ाया है, तो किसने बढ़ाया है? सबसे ज्यादा इन्होंने बढ़ाया है। जातिवाद भी इन्होंने ही बढ़ाया है। अगर आप कहते हैं कि मैंने बढ़ाया है, तो कोई यह बात बतला नहीं सकता कि मैं कभी जाति कांफ्रेस में गया हूँ। शुरू में ही, जब से मैंने होश संभाला, मैंने कहा है कि मैं जाति को मैं हिन्दुस्तान के पतन का सबसे बड़ा कारण समझता हूँ, जिसकी वजह से देशबर्बाद हुआ है। पंडित नेहरू को यह मालूम होना चाहिए था कि अंदरूनी कमियों की वजह से देश गुलाम हुआ, जिनमें एक बड़ा कारण जातिवाद भी था। मैं कभी जाट सभा में नहीं गया यादव सभा में भी नहीं और न किसी तरीके से इस चीज को बढ़ाया है। आप अपने (इंका मन्त्रियों के) डिपार्टमेंट में जाकर देखिये, जो मैंने काम किया है। कभी जाति के बारे में किसी को कोई शिकायत नहीं हुई। जाति में मेरा विश्वास नहीं है।

मैं यह कह रहा था कि आजकल इंदिरा जी बहुत कुछ कह रही हैं कि विभाजक तत्व देश में मजबूत हो रहे हैं और यह हो रहा है, वह हो रहा है। बिल्कुल ठीक है, लेकिन मैं अर्ज करना चाहता हूँ कि इन विभाजक तत्वों को किसने मजबूत किया है? सारे देश में जहाँ भी कांग्रेस (आई) की गवर्नमेंट है, चाहे आप कैबिनेट का गठन देख लीजिए, आल इण्डिया का देख लें और यू. पी. के अन्दर प्रशासन को देख लें कि किस तरह से वहाँ पर नियुक्तियाँ होती हैं, किस तरह से वहाँ पर प्रोन्नतियाँ होती हैं। मैं इसकी तफसील में नहीं जाना चाहता। मेरे कहने का मतलब यह है कि साम्प्रदायिकता को कांग्रेसी नेताओं ने बढ़ाया है और जातिवाद कांग्रेसमैन लाये हैं।

राष्ट्रभाषा की समस्या

जहाँ तक भाषावाद की बात है, हिन्दी को पूह–पूह करके खत्म कर दिया और कहा नो–नो, वी आर वन नेशन। 31 वर्ष पहले 1963 में इन्होंने कहा था कि हिन्दी को किसी पर लादा नहीं जायेगा। लेकिन हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनना है। माना, हिन्दी को लादना नहीं है और संविधान में लादने की कोई बात भी नहीं है। सिवाय तमिलनाडु के प्रतिनिधियों के सारे देश के प्रतिनिधियों ने इस बात को माना था कि हिन्दी रखनी है। हिन्दी नहीं रखनी है, चलिए हिन्दी न सही। तो जिन दोस्तों ने एतराज किया है, उनको बुलाकर पूछा जाये कि किस भाषा को रखना है। संस्कृत रख लीजिए और कुछ लोगों का जो

यह ख्याल है कि यह बहुत कठिन भाषा है, तो ऐसी बात नहीं है। 5–6 महीने में उसे आसानी से सीखा जा सकता है और मेरा कहना तो यह है कि अगर मुल्क को एक राष्ट्र रहना है, तो एक भाषा होनी चाहिए, एक जुबान होनी चाहिए।

अभी आपका एक प्रतिनिधि मंडल चीन गया था। वहाँ सब अंग्रेजी में बोले। चीन के लोगों ने पूछताछ की कि आपकी कोई भाषा नहीं है। जो लोग वहाँ गये थे, किसी के पास कोई जवाब नहीं था। इस बात का मजाक हुआ और बराबर मजाक उड़ता रहा है। यह स्थिति नेतृत्व की गलती की वजह से हुई है।

अब सवाल यह है कि आज जो कुछ हो रहा है इसके पीछे भी राजनीति है। मुझे ऐसे राजनीतिज्ञों के नाम लेने पड़ रहे हैं जिनका कि मैं नहीं लेना चाहता था। क्योंकि, सदन में जब इस चीज पर गौर हो रहा है तो मुझे नाम लेना पड़ेगा और उनका नाम लेना पड़ेगा जो हिन्दुस्तान के राजनीतिक ढांचे के सबसे बड़े पद पर आसीन हैं। 1977 तक पंजाब में कांग्रेस की हुकूमत थी। उसके बाद 1977 में जब सब जगह दूसरी सरकार आयी तो पंजाब में भी प्रकाश सिंह बादल की सरकार आ गयी। उस वक्त यह कोशिश की गई कि अकाली दल के खिलाफ कोई भी शिगूफा खड़ा किया जाये और कोई कार्यवाही करने की बात शुरू की गयी। उसकी तफसील में मैं नहीं जाऊँगा। मेरे पास लेख है। आप उसे पढ़ करके मुझसे बात कर लेना। अगर आप सच्चाई जानना चाहते हों तो उसे पढ़ना।

यह ''सण्डे'' (मैगजीन) है– 25 अप्रैल से 1 मई तक का और यह कलकत्ता से निकलता है। यह आनन्द बाज़ार पत्रिका का पब्लिकेशन है। उसके जो वाक्य हैं उन्हें मैं पढ़ देता हूँ–

''इस प्रकार दल खालसा, उग्रवादी सिखों का संगठन, जो कि एक अलग खालिस्तान की वकालत कर रहा है और पिछले सितम्बर में जो इण्डियन एयर लाइंस के बोइंग 737 का अपहरण कर पाकिस्तान ले जाने के पीछे था, केन्द्रीय गृहमंत्री ज्ञानी जेलसिंह से संरक्षण पाता है।''

यह गवाही उसकी है कि जो अपहरण करने वाले लोगों का लीडर था। वे लोग गिरफ़्तार हो गये। पुलिस के सामने उस (अपराधी) ने स्वीकार किया और कहा कि हमारे 17 बहुत बड़े–बड़े सक्रिय हमदर्द हैं, 17 आफीसर्स हैं जिनमें लीडिंग पब्लिक लाईफ के लोग हैं। वह उनके नाम बताता है। इस लेख में उन लोगों के नाम लिखे हुए हैं जो कि ज्ञानी जेलसिंह के दोस्त हैं, उनके अजीज हैं, उनके नियुक्त किये हुए हैं।

(जिस समय चौधरी साहब इस सन्दर्भ में बोल रहे थे उस समय संसदीय कार्य, खेल और आवास मन्त्री श्री बूटा सिंह ने आपत्ति प्रकट करते हुए कहा कि वह संसदीय नियमों के अनुसार राष्ट्रपति महोदय के नाम का उल्लेख नहीं कर सकते। इस पर चौधरी साहब ने स्पष्ट किया कि वह श्री ज्ञानी जेलसिंह के नाम का उल्लेख भारत के राष्ट्रपति के रूप में नहीं बल्कि तत्कालीन गृहमन्त्री के रूप में कर रहे हैं।)

सांसद श्री आर. एल. भाटिया तथा श्री बूटा सिंह ने कहा कि यह कोई सबूत नहीं है तथा यह गृहमन्त्री के खिलाफ साजिश भी हो सकती है। इस पर चौधरी साहब ने कहा कि तत्कालीन गृहमन्त्री

को उसी समय इस सन्दर्भ में स्पष्टीकरण देना चाहिए था, इसका खंडन करना चाहिए था, किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया।

खालिस्तान की मांग के पीछे बाहरी हाथ होने की बात भी की जाती है। एक दो देशों के नाम भी लिये गये हैं। कुछ मुल्क हमारे देश को टुकड़े–टुकड़े देखना चाहते हैं। अगर बदकिस्मती से देश बंटा तो यह इस देश के नेतृत्व की गल्तियों के कारण होगा। वैसे देश बंटेगा नहीं। आज हम देख रहे हैं कि यू.एस.ए. का क्या रवैया है, कनेडियंस का क्या रवैया है। ब्रिटिश हाई कोर्ट के चीफ जस्टिस लेविंगटन ने जिस तरीके का फैसला दिया है उससे बाहर के देशों के स्वार्थो का पता लगता है।

भिंडरावालाः हीरो किसने बनाया?

क्या गुरुद्वारों में प्रार्थना के लिये किसी धार्मिक स्थान पर कोई अपराधी या पुलिस जिस पर शक करती हो कि उसने अपराध किया है, ऐसा कोई आदमी जा सकता है? इस सिलसिले में मैंने इंदिरा जी को पत्र लिखा है। मैंने उसमें यह भी लिखा है संत भिंडरावाला पर लाला जगतनारायण के कत्ल का आरोप था। आरोप गलत होगा, लेकिन पुलिस ने उनको गिरफ्तार नहीं किया। उल्टे रेडियो पर घोषणा की कि उनका वारंट जारी हुआ है। रेडियो पर यह बात घोषित की जाती है। इसके बाद संत भिंडरावाला यह कहते हैं कि फलां जगह, फलां वक्त और फलां तारीख को मैं अपने आपको पेश करूंगा। लाख दो लाख लोग इकट्ठे हुए और सरकार चुपचाप देखती रही। उस वक्त भी मैंने इंदिराजी को लिखा था कि इस तरह से उनका सिर ऊँचा हो जाता है। क्यों हुआ ऐसा? यह किसकी गलती है? यह गलती भारत सरकार की है। उस गलती को बताने का हक हमको होना चाहिए क्योंकि हम भी इस मुल्क के रहने वाले हैं।

यही नहीं, मुंख्यमन्त्री दरबारा सिंह पत्र लिखते हैं ज्ञानी जैलसिंह जी को कि दो सौ आदमियों के साथ भिंडरवाला बिना लायसेंस के हथियारों को बस की छत पर रखकर राण्उड लेते हैं। मैंने इंदिरा जी को लिखा कि इतने राजनीतिक महत्व की बात आपकी इत्तिला में न हो, यह नहीं हो सकता। बाकायदा अखबारों में खबरें छपती हैं, लेकिन कोई गिरफ्तारी नहीं होती है। इससे यह नतीजा निकालें कि वह कानून से ऊपर हैं, वह कानून की गिरफ्त से भी बाहर हैं। इससे दूसरे लोगों पर क्या असर पड़ेगा?

आज तक 100 आदमियों का खून हो चुका है। 101वीं हत्या पुलिस के डी0आई0जी0 की हुई 102वीं हत्या आज पटियाला में या किसी अन्य जगह पर हुई है। वहां पर इससे जो तनाव हो रहा है उससे जाहिर है कि वह राजनीतिक हत्या है। एक आदमी पर भी मुकद्मा नहीं चल रहा है। मुझे लगता यह है कि सरदार दरबारा सिंह कानून और व्यवस्था लागू करने के मामले में कुछ करने के लिए स्वतन्त्र नहीं है। वे यहाँ से हुक्म लेते हैं। मैंने इंदिराजी को लिख दिया है कि आपने संत भिंडरवाला को हीरो बनाया है। गुरु नानक निवास के क्या मायने हैं? ठीक है वह मन्दिर है। क्या दुनिया के किसी मंदिर, मस्जिद या गिरजाघर में अपराधी चला जाय तो उसको गिरफ्तार नहीं किया जा सकता?

इतना बड़ा पुलिस अफसर मारा गया और पुलिस कहती है कि गोली यहाँ से आई है, गोली वहाँ से आई है। इस मामले की तहकीकात पुलिस नहीं कर सकती। क्यों नहीं कर सकती है? मैंने इंदिरा जी को पत्र लिखा है और उन्होंने 25 मार्च को जबाव दिया है–

''साम्प्रदायिक तत्वों से कड़ाई से निपटने की अपनी इच्छा की सदाशयता को हमें सिद्ध नहीं करना है।''

अपने लिये सम्प्रदायिक तत्वों के खिलाफ कुछ भी कह लीजिये लेकिन आपने ठीक तरह से डील नहीं किया है।

''समाज विरोधी तत्वों को गुरुद्वारों में शरण देने के बारे में हमें निश्चित रूप से चिन्ता है। लेकिन गुरुद्वारों में पुलिस भेजने के आपके सुझाव की गम्भीर प्रतिक्रिया होगी।''

अगर आप देश पर शासन नहीं कर सकती है तो आपको इस्तीफा दे देना चाहिए। आप सबसे बड़े अपराधी को गिरफ्तार नहीं कर सकते है? क्यों? जो हत्या, जुल्म और डकैती करता है, स्टेनगन लेकर चलता है, और मैं तो भिंडरावाले के बारे में कहूँगा कि 10–20 आदमी उसके साथ चलते हैं। वहाँ सैंकड़ों आदमी मौजूद हैं। पुलिस अन्दर नहीं जा सकती क्योंकि उसकी प्रतिक्रिया खराब होगी। यह कोई व्याख्यान देने वाली जगह नहीं है। यह धर्म स्थान है जहाँ गुरु ग्रंथ साहब या पुराण का पाठ किया जा सकता है। कहीं जब यह आभास दिया जायेगा कि अमुक जाति और अमुक किस्म के लोग कानून के ऊपर हैं तब कैसे काम चलेगा?

एक बात यह है कि यूनिवर्सिटी में कोई आदमी या पुलिस नहीं जा सकती है जब तक वाइस चांसलर की इजाजत न हो। मैं जब होम मिनिस्टर हुआ तो मैंने सबसे पहले यह आर्डर किया कि उत्तर प्रदेश का प्रत्येक इंच भाग पुलिस कार्य क्षेत्र में है। उन्हें वाइस चांसलर की इजाजत की जरूरत नहीं है। तब एक कुत्ता भी नहीं भोंका क्योंकि उन्हें यह मालूम था कि मैं अपनी बात पर फिर से विचार करने वाला व्यक्ति नहीं था। अब सवाल यह है कि इस मामले से कैसे निपटा जाये? जब तक कानून नहीं लागू किया जायेगा तब तक यह बात बढ़ती ही रहेगी। लिहाजा कानून को लागू करना चाहिए तब जाकर काम चलेगा। शिकायतों को शिकायत हल करने के तरीकों से दूर किया जायेगा।

हिन्दू–सिख एक हैं

मैंने एक बार प्रेस कांफ्रेस में, और इंदिरा जी से अलग से भी कहा कि सिख और हिन्दू दो नहीं हैं, यह एक हैं। हिन्दू का शरीर और रक्त सिख का है और सिख का रक्त और हड्डियां हिन्दू की हैं। गुरु लोगों ने मेरे इतिहास के ज्ञान के हिसाब से, हिन्दुओं की खातिर कुर्बानी दी। अंग्रेजों के जमाने में जुल्म हो रहे थे तो उन्होंने नेतृत्व दिया। अब जो सूरत पैदा हो गई है, उसको छोड़ दीजिए। लेकिन मेरे ख्याल में सिखों से ज्यादा हिन्दू गुरुद्वारों में पूजा करने के लिये जाते थे।

अल्पसंख्यक आयोग हमारे यहाँ जनता पार्टी में कायम हो गया था। मैं उस समय वर्किंग कमैटी में मौजूद नहीं था। मैं उसी समय आया, लेकिन कुछ समझ नहीं पाया। मैंने मोरारजी भाई से कहा, वे भी देर से आये थे, मैंने कैबिनेट से तय करा लिया कि अल्पमत आयोग से समस्यायें खड़ी हो जायेंगी।

मेरे सामने सवाल उठा था कि सिखों को अल्पसंख्यक माना जाये या नहीं। मैंने कहा कि मैं नहीं मानूंगा। मैं कोई गलत बात नहीं कर रहा हूँ। बहुत खुलकर और सीधी बात कह रहा हूँ। प्रकाश सिंह बादल और जगदेव सिंह तलवंडी से मेरे कुछ व्यक्तिगत ताल्लुकात भी हैं क्योंकि प्रकाश सिंह बादल और मैं एक ही जेल में रहे थे। मैंने कहा यह बताइये कि अल्पमत की परिभाषा क्या है? बल्कि आखिरी गुरु गोविन्द सिंह ने देवी की पूजा की, उन्होंने मन्त्र लिखे हैं, श्लोक लिखे हैं, गाने गाये हैं, किसी ने कभी कहा कि हिन्दू नहीं हैं? हिन्दू फिर क्यों जाते हैं गुरु ग्रंथ साहब के पाठ में और क्यों मत्था टेकते हैं गुरुद्वारों में।

जहाँ तक दर्शन का सम्बन्ध है, जो आधार–दर्शन है– आत्मा का रूप बदलना, कर्म का सिद्धांत, उसको मैं मानता हूँ। हर मजहब मैं थोड़ा–थोड़ा फर्क होता है। मैं इत्तफाक से आर्य समाजी हूँ, मूर्ति पूजा में विश्वास नहीं करता हूँ, अवतार, जाति–प्रथा और श्राद्ध में विश्वास नहीं करता हूँ, तो क्या यह दावा कर सकता हूँ कि हम भी अल्पमत में हैं? मुसलमानों में भी अलग फिरके हैं। तो इस तरह मैं सिखों को अल्पमत मानने के लिए तैयार नहीं हूँ। उनके पास इसका कोई जवाब नहीं था और वह चले गये। उसके बाद उन्होंने कोई पत्र नाराजगी का नहीं भेजा, कोई बयान नहीं दिया, कोई नाखुशी जाहिर नहीं की तथा समय से समझौता कर लिया और अल्पमत आयोग ने काम करना शुरू कर दिया।

धीरे–धीरे लोगों की महत्वाकांक्षाएं बढ़ाइये, गलत चीजें करके लोगों को गलत रास्ते पर ले जाइये, वोट जरूर मिल जायेंगे, जो वोट का इरादा है कि हिन्दू को डराया जाये और हिन्दू डरा हुआ है, मैं जानता हूँ, हिन्दू मेरे पास आये हैं और मुझसे कहा चलने के लिए। मैंने कहा नहीं, यह ठीक नही है, तुम लोग अपने को संगठित करो और गुरुओं का जहाँ तक ताल्लुक है, गुरुद्वारा या गुरु ग्रन्थ का जहाँ तक ताल्लुक है, कभी कोई ऐसी बात न कहो जो किसी को कड़वी लगे, या बुरी लगे। और अगर नरम दल, जिसके नेता प्रकाशसिंह बादल हैं, यह हिम्मत कर आगे बढ़ते तो यह नौबत न आती जो आज आ रही है। लिहाजा यह मामूली बात नहीं है। अगर खालिस्तान बन जाता है तो कल को और स्तान बनेगा। नार्थ–ईस्ट इण्डिया के अन्दर, मुझे डर है, 2–3 साल के अन्दर क्रिश्चियन राज्य की मांग उठने वाली है। हम लोग धर्म, जाति, भाषा सब में बंट जाते हैं और हमारे नेता, जिनमें वास्तव में बड़प्पन था, जो हमारी अपनी बड़ी लीडरशिप थी, जिसने देश को आजाद कराया था, उसकी गलती रही। जितनी पार्टियाँ हैं करीब–करीब सबने वही रास्ता अपनाया।

इन शब्दों के साथ इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ।

6 .दिल्ली में देहात की बात

अर्थशास्त्र का यह प्रारम्भिक सिद्धान्त है कि उत्पादन आदानों में जो आदान स्वल्प मात्रा में हों उनकी क्षमता का अधिकतम उपयोग हो। उदाहरणतः कृषि के लिये भूमि सीमित है अस्तु इसकी प्रति इकाई से अधिकतम उत्पादकता का लक्ष्य होना चाहिये।

चौधरी चरणसिंह ने इसी सिद्धांत को अपनी अर्थनीति का आधार बनाया। उनके कुछ आलोचक भी उनकी इस बात से सहमत हैं कि देश की वर्तमान दशा में लोगों को रोजी देने, अधिकतम रोजगार प्रदान करने और उनकी श्रम शक्ति बढ़ाने के लिये, जिस पर औद्योगिक विकास निर्भर है; श्रम प्रमुख तकनीकी को प्राथमिकता देना आवश्यक है। पूँजी के अभाव में पूंजी प्रमुख तकनीकी को श्रेय देना तर्क संगत नहीं होगा।

चौधरी चरणसिंह ने देश के आर्थिक विकास का एक आधारभूत ढांचा प्रस्तुत किया था। इसे सुसज्जित करना एक व्यक्ति का दायित्व न होकर भिन्न क्षेत्रों में कार्यरत देश के तमाम कार्यकर्ताओं का सामूहिक दायित्व है। इस ढांचे के छिन्द्रान्वेषण की अपेक्षा उचित तो यही होगा कि इसे सर्वागींण बनाने के लिये व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत किये जायें। क्योंकि बापू के अनुयायी होने के कारण श्री सिंह को सत्य में अडिग विश्वास था वह जिसे मानते थे उसके कहने में एवं समर्थन में उन्हें कोई असमंजस तथा भय नहीं होता था। वह व्यवहारिक अर्थशास्त्री ही नहीं, उन्होंने कृषि अर्थशास्त्र की पुस्तकों का अध्ययन भी किया, एवं भारतीय कृषि प्रणाली व भारतीय ग्रामीण अर्थशास्त्र पर गहन मनन किया तथा कृषि एवं राजस्व मंत्री के नाते बहुमूल्य अनुभव भी प्राप्त किये इतने व्यस्त होते हुये भी, मनन एवं चिंतन उनका स्वभाव बन गया था।

चौधरी चरणसिंह ने जो अर्थनीति देश के समक्ष प्रस्तुत की वह वस्तुतः गाँधीवाद का सार तत्व है। क्योंकि चौधरी सिद्धांत–व्यवहार दोनों में ही गाँधी जी के सच्चे अनुयायी रहे और मात्र इसी कारण पं0 जवाहरलाल नेहरू से भी उनके मतभेद रहे। अतः चौधरी साहब की आर्थि नीति को समझने के लिये बापू की नीति की ओर जाना होगा।

''महात्मा जी के बारे में बी0आई0 लेनिन की यह टिप्पणी एक दम सटीक प्रतीत होती है कि ''वह दो विरोधी संसारों के बीच मंडराने वाले टाल्स्टॉय के भारतीय शिष्य हैं अर्थात् गाँधीजी एक साथ रूढ़िवादी और क्रांतिकारी दोनों ही थे, उनकी विशेषता यह थी कि यदि उनका टैम्परामेंट ठीक हुआ और परिस्थितियों ने साथ दिया तो वह कोटि–कोटि जनता को आन्दोलित कर सकते थे। उनका दोष यह था कि वह बीच में ही रुक जाते थे जिससे संघर्ष को क्षति पहुँचती थी, क्योंकि उनके मन में कुछ विचित्र विरोधाभास घर किये हुये थे। यह कहना अधिक सौम्य होगा कि वह ''साध्य और साधन'' के अनन्त प्रश्न तथा हिंसा से बचने की समस्या में सर्वाधिक उलझे रहे।''

गाँधी एण्ड फ्री इण्डिया–टी0के0 उन्निथनः बम्बई 1956।

हमारे देश की समस्यायें विपुल और पेचिदा हैं। सामाजिक और आर्थिक ग्रन्थियाँ ऐसा अटाला हैं जिसे आसानी से साफ नहीं किया जा सकता और इच्छा तुष्टि मूलक सिद्धान्तों द्वारा तो निश्चय ही नहीं किया जा सकता, तब ऐसे विचित्र देश में गाँधी जी के अतिरिक्त किसी अन्य की नीतियां भी सकारात्मक साबित नहीं हो सकतीं क्योंकि यह तो अर्थहीन चीजों का देश हैं।' जहाँ हजारों हिन्दू किसी मुस्लिम परिवार का पानी पीने की जगह प्यास से मर जाना बेहतर समझते हों अगर उन सिर फिरे लोगों को यह विश्वास दिला दिया जाय कि उनके धर्म का तकाजा है कि वह मात्र भारत में बने वस्त्र पहनें और यहीं पैदा किया अनाज खायें तो वह किसी अन्य का अनाज खाने व कपड़े पहनने से इन्कार कर सकते हैं। भारतीय सार्वजनिक जीवन में इस नये साहसी प्रयोग को गाँधीजी ने किया था और सफलता प्राप्त की और वह समूचे ऐतिहासिक युग पर इतनी भव्यता से छाये रहे कि एक उग्र राजनैतिक विवाद के अवसर पर भारतीय कम्युनिस्ट पाँचवे दशक के प्रारम्भ में उन्हें ''राष्ट्रपिता'' कहने में, पीछे नहीं हटे। इसी प्रकार बाबू सुभाष बोस ने भी उन्हें पर्याप्त सम्मान दिया जबकि वह गाँधी विरोधी खेमे के सरदार थे। इसलिये यह कहना अभीष्ट होगा कि उनका ऐसे व्यक्ति के रूप में आदर किया जाता है जिसने स्वयं को अन्य हर किसी से बढ़कर, अपनी जनता के जीवन से मूलबद्ध किया और भारतीय राजनीति के रंगमंच को इतना बदला जितना एक व्यक्ति द्वारा संभव नहीं था।

मार्डन इंडिया (1926) में **रजनी पामदत्त** जो बहुत अच्छे साम्यवादी लेखक रहे हैं ने गाँधी जी की विशिष्ट मीमांसा करते हुये लिखा है–

''गाँधीजी की उपलब्धि इस बात में निहित थी कि सारे नेताओं के बीच मात्र वही आवाज को समझ सके और उस तक पहुंच सके। यह गाँधीजी की पहलीमहान् उपलब्धि थी।''

गाँधी जी की यह सकारात्मक उपलब्धि उन सारी समझों और कमजोरियों से उच्चतर है जिन्हें उनके विरोध में पेश किया जा सकता है, और भारतीय राष्ट्रवाद को उनका सच्चा योगदान है (पृष्ठ 72–73)

साम्यवादी नेता ई0एम0एस0 नम्बदरीपाद ने अपनी पुस्तक ''गाँधीजी और उनके वाद'' (पृष्ठ 8–9) में लिखा है कि ''गाँधीजी इसलिये महान थे कि जिन आदर्शों और नैतिक मूल्य मान्यताओं को वे मृत्युपर्यन्त मानते रहे वे करोड़ों भारतीयों की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं से मेल खाती थी, उनकी शिक्षा पूरे राष्ट्र के लिये विद्रोह का आव्हान बनी। ..... देहाती गरीब जनता ने उसे नया मसीहा माना, मगर बात देहाती गरीबों तक ही सीमित नहीं है, देश व देश की जनता के अन्य अंग भी हैं जिन्होंने गाँधीजी को एक ऐसा महान् व्यक्ति माना जिसके आदर्श और जिसकी नैतिक मूल्य मान्यतायें उनकी अपनी आकांक्षाओं और तात्कालिक हितों से मेल खाती थी। भारतीय मज़दूर वर्ग ने भी जिसका अपना स्वतंत्र राजनैतिक आन्दोलन अभी विकसित नहीं हुआ था, गाँधीजी को अपने हितों का हामी पाया। मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों और नौजवानों ने भी जिनके दलों में महान् व उदात्त आदर्शो के लिये जूझने की आग होती है, गाँधीजी को ऐसा उत्साह प्रदान करने वाला नेता पाया जिसने उन्हें उच्चध्येय के लिये

जान की बाजी लगाना सिखाया। ऊपरी वर्गो यानी पूँजीपतियों और भू सम्पत्तिधारियों को भी गाँधीजी में ऐसा व्यक्ति दिखाई दिया जो उच्चध्येय के लिये निःस्वार्थ कार्य करने वाला देशभक्त था और साथ ही जनता की भीड़ को अहिंसा की कठोर सीमा–रेखा में बाँधे रखता था।

अतः गाँधीजी जनता के विभिन्न अंगों के, जिनकी आकांक्षाओं और आवश्यकताओं में स्वभावतः बड़ी विविधता थी नेता बन गये। फिर भी वह आरम्भ में इन सबको अपने नेतृत्व में एकजुट करने में सफल हुये। क्योंकि उनकी शिक्षायें सभी को किसी न किसी रूप में संतोष प्रदान करती थीं।

श्री नम्बूदरीपाद ने ''गाँधीवाद का अर्थ'', में स्पष्ट किया है कि ''गाँधीजी की भूमिका का एक जबर्दस्त महत्व इस बात से भी आंका जा सकता है कि कांग्रेस के सभी गुट और सभी धारायें तथा कम्युनिस्टों को छोड़कर लगभग सभी राजनैतिक दल अपनी नीतियों का समर्थन करने के लिये गाँधीजी के नाम का उपयोग करते हैं।''

वस्तुतः उनका सारा जीवन सामाजिक अन्याय, आर्थिक विषमता, शोषण, गरीबी और ऊँच नीच के भेदभाव के विरुद्ध सतत संघर्ष था भारत की राजनैतिक आजादी इस अन्याय को दूर करने के लिये पहला कदम था। यद्यपि आजादी उनके लिये कोई साध्य नही था वरन् राष्ट्र की उत्पीड़ित और दुखित जनता के लिये त्राण का साधन था। गाँधी के विचार कितने मौलिक और प्रभावशाली थे इसकी प्रमाणिकता तो विश्वविख्यात वैज्ञानिक आइन्सटीन के इन शब्दों में मिलती है– ''सदियों वाद आने वाली पीढ़ियाँ शायद इस बात पर आश्चर्य करेंगी कि हाड़ मांस का ऐसा पुतला कभी इस पृथ्वी पर पला था।''

उक्त कथन की पुष्टि हमें आज होती नजर आ रही है, जब देश के ही नहीं विश्व के कोने–कोने में बापू को राष्ट्रपिता कहकर उनके चित्रों, मूर्तियों आदि की पूजा का सिलसिला शुरू हो गया है। लेकिन अफसोस है हमें अपने उन राजनेताओं पर जिन्होंने गाँधी द्वारा सामाजिक आर्थिक व्यवस्था के विरूद्ध उनके द्वारा प्रतिपादित विकेन्द्रित अहिंसक समाज के बुनियादी विचारों को परदे के पीछे धकेल दिया अस्तु नयी पीढ़ी उनकी भौतिक मान्यताओं से अनभिज्ञ रही और बापू की परिकल्पना विस्मृति के गाल में चली गयी।

गाँधीजी के जो उत्तराधिकारी बने उनमें भी अतंर्द्वन्द छिड़ गया और सत्ता के इर्द गिर्द रहने के कारण बापू के विचारों की मूलभूत भावनायें कुंठित होती चली गयीं। यही कारण है कि आज हम यह विस्मयकारी घटना घटित होते देख रहे हैं कि भारत विश्व में सर्वाधिक कृषि प्रधान देश है अर्थात् 75 प्रतिशत क्षेत्रफल कृषि उत्पादन करता है और लगभग 50 प्रतिशत लोग मात्र इसी धन्धे पर लगे हैं उनके बावजूद देश की जनता के लिये खाद्यान्न आपूर्ति अमेरिका से करनी होती है खाद्य उत्पादन की विपुल संभावनाओं के बावजूद हमें खाद्यान्न आयात करना पड़ रहा है। यही वह घटना है जो चौधरी चरणसिंह जैसे अर्थशास्त्री को झकझोरती रही। और देश को बचाने के लिये गाँधीवादी स्तर पर कदम बढ़ाते हुये औद्योगीकरण से मुंह मोड़ने के लिये सरकार को दलील पेश कर रही है। उनकी मान्यता यह थी कि– भारत चूँकि कृषि प्रधान देश है अतः इसे बिना पूँजीगत उद्योग के तो चलाया जा सकता है

किन्तु खेती के बिना उद्योगों को जिन्दा रखना कदाचित संभव नहीं ठीक ऐसे ही जैसे जीवधारी बिना भोजन के जीवित नहीं रह सकते। आर्थिक समृद्धि कृषि की उपेक्षा करके प्राप्त करने की बात तो मात्र सब्जबाग दिखाकर जनता को गुमराह करना ही है।

इस बात की प्रमाणिकता तो पूर्व ही समय में सिद्ध हो चुकी है कि औद्योगिक विकास के अभाव में कृषि की सहयोगी विकास योजनायें जैसे–सिंचाई के लिये कुऐं नहर, तालाब, या दैनिक उपयोग की चीजें जैसे कपड़े, आवास, पठन–पाठन की सामग्री आदि मशीनीकरण के बिना पूरी की जाती रही है तो आगे भी चलायी जा सकती है। मगर कृषि के बिना उद्योग चलाना संभव नहीं है क्योंकि भूमि ही खाद्य पदार्थ देती है और वही कृषि जिनसे माल का उत्पादन करने वालाकच्चा माल भी पैदा करती है। कच्चे माल से आशय है तमाम उद्योगों को चलाने के लिये सम्बद्ध कृषित्तर सामान जैसे तेल मीलों के लिए सरसों तो सिगरेट व बीड़ी के कारखानों के लिये तम्बाकू, डेरी उद्योग के लिये दूध, पशुओं से हड्डी और चमड़ा वहीं खानों के रूप में अनेक बहुमूल्य धातु व खनिज वस्तुओं की देन भूमि ही है जिस पर किसी भी देश का 60 प्रतिशत उद्योग चलता है और भारत जैसे मुल्क में तो 76 प्रतिशत रोजगार भी मात्र इसी प्रकार के उद्योगों से दिया जा सकता है। अतः औद्योगिक विकास भी तभी हो सकता है जबकि कृषि में विकास हो यदि
अधिक कुछ है तो मात्र यह कि दोनों साथ–साथ चल सकते हैं किन्तु पहिले औद्योगीकरण कर लिया जाय और उसके बाद कृषि को संभाला जाय ऐसा कम से कम भारत जैसे देश में तो सम्भव नहीं है। कृषित्तर उद्योग से आशय होता है कृषि से अतिरिक्त क्रय शक्ति जुटाना इसका आशय है कि किसानों के उपभोग से अतिरिक्त उत्पादन लेकर–उसे बेचना। ऐसा करने से हमें काफी विदेशी मुद्रा मिल सकती है जिसमें हम औद्योगिक विकास के लिये पूँजीगत माल का आयात कर सकते हैं इसके उदाहरण कनाडा और जापान हैं जिन्होंने क्रमशः इमारती लकड़ी और रेशम का निर्यात करके औद्योगिक समृद्धि की थी। इस प्रकार कृषि विकास से दो लाभ हम प्राप्त कर सकेंगे।

1–जनसमूह की क्रयशक्ति जो तैयार माल व सेवायें खरीद सकें, और

2–खेतिहर मजदूरों को रोजगार मुहैया हो सकेगा।

इस प्रकार चौधरी साहब की मान्यता थी कि ''हमारी आर्थिक प्रगति का एक मात्र ''स्त्रोत व आधार'' कृषि है और कुछ नहीं। कोई देश उसी हद तक विकास करता जायेगा जिस हद तक उसके यहाँ खाद्यान्न व कच्चा माल उपलब्ध होंगे। अगर किसान अपनी आवश्यकता से अधिक खाद्यान्न नहीं पैदा करते तो उनके पास साधन नहीं होंगे। इसका मतलब है कि बिना कृषि उत्पादन में वृद्धि किये न तो कोई व्यापार चल सकता है न दस्तकारी।''

चौधरी साहब ने जब कृषि प्रधानता के प्रश्न को उठाया तो उसकी प्रमाणिकता को भी सिद्ध किया तथा उन्होंने आंकड़ों के द्वारा यह बात सिद्ध की कि 1951 में हमारे देश में 72 प्रतिशत मजदूर थे, 10 प्रतिशत मजदूर तथा 18 प्रतिशत शेष विविध रोजगारों में लगे हुये थे और आजादी के 30 साल बाद भी मजदूरों का प्रतिपादन उसी परिधि के ईर्द गिर्द घूम रहा है, यही नहीं खाद्यान्न व कच्चे माल के

उत्पादन में कमी के कारण औद्योगिक व कृषि पर आधारित रोजगारों का तो हम विकास नहीं कर सके जबकि अपने मूल आधार कृषि क्षेत्र की उपेक्षा के प्रतिफल स्वरूप विदेशों से खाद्यान्न मँगाने के लिये हमें 6,000 करोड़ की विपुल धनराशि खर्च करनी पड़ी है। यदि हम अपने देश को प्रतिव्यक्ति राष्ट्रीय आय के परिप्रेक्ष्य में देखें तो ज्ञात होगा हम दुनिया के सर्वाधिक गरीब मुल्कों की श्रेणी में खड़े हैं तथा आर्थिक सम्बृद्धि की दर हमारे यहाँ न्यूनतम है।

प्रगति की विश्व दौड़ में हम पिछड़ गये फिर भी अपनी भूलों पर दृष्टिपात करने की चेष्टा नहीं कर सके उदाहरणतः आज भी हम किन–किन गलतफहमियों के शिकार होकर प्रगति का मूल्यांकन वातानुकूलित या डीजल की गाड़ियों, रंगीन टी.वी. सेट या आलीशान फाइव स्टार होटल और धुंआ उगलती चिमनियों के आधार पर कर रहे हैं और बापू के सपनों के भारत में उद्धृत ''आखिरी आदमी'' के लिये दैनिक उपभोग की वस्तुयें पहुंचा सकने में कितने सफल हुये हैं? इस प्रश्न को हवा में उड़ा दिया है। हमारे राष्ट्रीय नेतृत्व ने कभी इस प्रश्न पर सोचने का कष्ट नहीं उठाया कि इस गरीब मुल्क के लिये कौन सी व्यवस्था उचित है– काश हमारा उद्देश्य मात्र प्रति श्रमिक अधिक उत्पादन प्राप्त करना है और उत्पादन का कुल पूँजी से प्रति व्यक्ति के हिसाब से सकारात्मक सम्बन्ध कायम करना है तो हमें पाश्चात्य तरीके की पूँजी रचना खोजनी होगी जहाँ अत्यधिक पूँजी की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत यदि हमें सर्व जन–कल्याण की भावना से कदम उठाना है तो भारत जैसे पूँजी विहीन और श्रम–शक्ति की विपुलता वाले मुल्क में बापू के तरीके की अर्थ–व्यवस्था से विमुख नहीं हुआ जा सकता यही दृढ़ विश्वास चौधरी चरणसिंह का रहा, दुर्भाग्य की बात यह है कि चौधरी एक ऐसे वर्ग में पैदा हुये जिसे इस देश में पिछड़ा माना जाता है और यही मात्र कारण है कि उनकी योग्यता, सूझ–बूझ और विद्वता को नजर अंदाज करते हुये येन–केन प्रकरेण उनकी नीति को साथ ही उनके व्यक्तित्व को प्रतिक्रियावादी करार दिया गया है। अन्यथा जिसने गांधी साहित्य का अध्ययन किया है वह आज चौधरी की नीति को पढ़ने के बाद यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि गांधी ने शहर और गांव के बीच सीमा रेखा बनाकर जिस सीमा तक ग्रामोन्मुखी अर्थनीति की वकालत की थी, चौधरी ने तो उस सीमा को पार करने की कभी हिमाकत ही नहीं की।

देखिये बापू ने क्या कहा है:–

''मेरा विश्वास है और मैंने इस बात को असंख्य बार दुहराया है कि भारत अपने चंद शहरों नहीं बल्कि सात लाख गाँवों में बसा हुआ है लेकिन हम शहरवासियों का ख्याल है कि भारत शहरों में ही है और गांवों का निर्माण शहरों की जरूरतों को पूरा करने के लिये हुआ है। हमने कभी यह सोचने की तकलीफ ही नहीं उठायी कि उन गरीबों को पेट भरने को अन्न और शरीर ढकने को कपड़ा मिलता है या नहीं और वर्षा तथा धूप से बचने के लिये सिर पर छप्पर है या नहीं।''

....मैंने पाया है शहरवासियों ने आम तौर पर ग्रामीणों का शोषाण किया है सच तो यह है कि वह गरीब ग्रामीणों की मेहनत पर ही जीते हैं अधिकांश ग्रामीण आबादी लगभग भुखमरी की हालत में रहती

है, दस प्रतिशत अधभूखी रहती है और लाखों लोग चुटकी भर नमक और मिर्ची के साथ महीनों का पॉलिश किया हुआ निःसत्व चावल या रूखा–सूखा अनाज खाकर अपना गुजारा चलाते हैं''

.....(हरिजन अंग्रेजी साप्ता0 4 अप्रैल 1936)

बापू ने सदैव इस प्रश्न पर बहस खड़ी करने और ग्रामीणों के हित साधक के रूप में स्पष्ट मत बनाकर आगे बढ़ने के लिये स्वयं को प्रस्तुत किया, वह कहते थे ''असली भारत तो गाँवों में रहता है चमकते शहरों में नहीं अतः इस मुल्क को सच्ची आजादी ग्रहण करने के लिये इन गांवों की झोंपड़ियों में रहना सीखना चाहिये, महलों में नहीं। करोड़ों भारतीय नागरिक महलों में शांति का जीवन नहीं बिता सकते चाहे ऐश आराम (भौतिक सुख) कितना भी उठा लें, जब बापू से नगरों के बारे में बात की जाती थी तो वह उस समय भी इन बड़े बड़े बंगलों में रहने वालों की बात को सुनते भी नहीं थे वरन् वहाँ भी हरिजन एवं दलित वर्ग तथा गरीबी के शिकार झुग्गी–झोंपड़ियों में रहने वालों की ही चिन्ता उन्हें परेशान किये रहती थी।

1921 की बात है एक बार बंगलौर के करदाताओं ने जब नगर व्यवस्था की समस्याओं के संदर्भ में उनकी सम्पत्ति पूंछी तो गांधी जी ने कहा–

''मुझे खुशी है कि आपने अपने नगर में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा लागू की है, आपकी चौड़ी सड़कों, रोशनी के शानदार प्रबन्ध और सुन्दर उद्यानों पर मैं आपको बधाई देता हूँ लेकिन आपके मानपत्र से जहाँ यह ज्ञात होता है कि यहाँ के मध्यम और ऊपरी वर्ग सुखी होंगे, वहाँ पर यह पता नहीं चलता कि आपके नगर में कोई गरीब भी है और अगर है, तो उसे स्वच्छ व स्वस्थ रखने के लिये आप क्या करते हैं। क्या आप उनके दुख दर्दो में हाथ बंटाते हैं? क्या आप मेहतरों भंगियों की जीवनावस्थाओं के बारे में भी सोचते हैं? क्या आपने बच्चों बूढ़ों, अपाहिजों व गरीबों के लिये सस्ते दूध का इन्तजाम किया है? क्या आपको यकीन है कि इस नगर के दुकानदार खाने–पीने की चीजों को बिना मिलावट के बेचते हैं?''

इससे यह बात प्रमाणित हो जाती है कि जनता का कोई अंग ऐसा न था जिसकी समस्याओं का अध्ययन गांधी जी ने न किया हो और जिसकी दुरावस्था का पर्दाफाश न किया हो। यही कारण है कि वह दरिद्र और पद् दलित आम जनता के विभिन्न अंगों को अपनी ओर आकर्षित कर सके।

ठीक इसी के समरूप पाते हैं हम चौधरी चरणसिंह को उनके इस कथन को लीजिये–

ष्क्मेचपजम जीमपत चतवमिपवद व िश्ळंतपइइप भ्ंजंवश जीम चवसपबपमे व िजीम तनसपदह चंतजल िंअम तमेनसजमक पद जीम मउमतहमदबम व िउवदवचवसल िवनेमे ूपजी जीमपत मअमत पदबतमेंपदह बंचपजंस `जवबा ंदक उवनदजपदह चतवपिजे पद बवदजतेंज जव बतवतमे व िमउप. `जंतअमक ंदक पसस बसंक कूमससमते पद जीम बवनदजतलेपकम ंदक `सनउे पद जीम बपजपमे ूपसम वद जीम वदम ींदकए जमदे व िजीवनेंदके ूससवू पद सनगनतल ादवूपदह दवज ूींज जव उंम व िजीमपत ूपदकसिसे वत पसस हवजजमद हंपदेए वद जीम वजीमतए जमदे व िउपससपवदे `जंतअम वित ूदज व िं उवतेंस व िइतमंकण् ज्तनम ं ूपकम हनसि इमजूममद जीम तपबी ंदक जीम चववत ीं

मगपेजमक पद प्दकपंए जीतवनही जीम बवनदजतपमे इनजए पदेजमंक वि हवपदह कवूदए पज ीं
ंबबनउनसंजमक ूपजी जीम ंकअमदज वि पदकमचमदकमदबम ंुनंतजमत वि बमदजनतल ंहवण

।कवचजपवद वि बंचपजंस पदजमदेपअम जमबीदपुनमे पद ं बवनदजतल ूपजी `नतमिपज वि समेवनत ॅ ू `वनदक जव तमेनसजए ंदक ीं तमेनसजमकए पद कनंस.मबवदवउल ं मिू पेसंदके वि चतवेचमतजल ूपबी बपजपमे `पहदपलि ंतम `नततवनदकमक इल ं अेंज `मं वि उपेमतल पद जीम वितउ वि सिनउमे ंदक अपससंहमेण्

प्दकपेश म्बवदवउपब च्वसपबल ळंदकीपंद ठसनम च्तपदज ैवनतबम पदही

वास्तविका यह है कि स्वाधीनता के बाद जितने भी राजनैतिक दलों के नेता थे उनमें से किसी को आज खुली भाषा में कहने का साहस नहीं हुआ जिसे बापू ने उठाया था चौधरी ने आज पुनः उसी बहस को देश के पर्दे पर पहुंचा दिया है। बापू ने महसूस किया कि किसान अन्नदाता है और वही इतनी हेय दृष्टि से देखा जाता है। इसीलिये उन्होंने देशवासियों को बार–बार यह समझाने का प्रयास किया कि– ''किसानों'' का वह भूमिहीन मजदूर हो या मेहनतकश जमीन मालिक उनका स्थान पहला है। उकने परिश्रम से ही पृथ्वी फली–फूली और समृद्ध हुई है, इसलिये सच कहा जाय तो जमीन उनकी ही है या होनी चाहिये, जमीन से दूर रहने वाले जमीदारों से उनकी जमीन बल–पूर्वक नहीं छीन सकता। उसे इस तरह कार्य करना चाहिये कि जमीदारों के लिय उसका शोषण करना असम्भव हो जाय इसके लिये किसानों में आपस में घनिष्ठ सहकार होना नितान्त आवश्यक है।

.......दि बाम्बे क्रानिकल 28 अक्टूबर 1944

''मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि लोकतांत्रिक स्वराज्य में किसानों के पास राजनीतिक सत्ता के साथ हर किस्म की सत्ता होनी चाहिये किसानों को उनकी योग्य स्थिति मिलनी ही चाहिये और देश में उनकी आवाज ही सबसे ऊपर होनी चाहिये। **.........दि बाम्बे क्रानिकल 12 जनवरी 1945**

ग्रामवासियों को शहरी व पूँजीवादी शोषण के दोहरे जुये से बाहर निकलकर स्वावलम्बी बनने और अपने पैरों पर खड़े होने की सदा वकालत की, उन्होंने आदर्श गाँव का एक सुन्दर चित्र भी तैयार किया जिसमें उनकी जरूरत की सारी चीजें उपलब्ध हों और अपना कारोबार भी खुद चलायें। ''आदर्श भारतीय गाँवइस तरह बसाया जायेगा कि उसमें आसानी से स्वच्छता की पूरी व्यवस्था रहे उसकी झोंपड़ियों में पर्याप्त प्रकाश और हवा का प्रबन्ध होगा और उनके निर्माण में जिस सामान का उपयोग होगा वह ऐसा होगा, जो गांव के आस–पास पाँच मील की त्रिज्या के अंदर आने वाले प्रदेश में मिल सके। इन झोंपड़ियों में आंगन या खाली जगह होगी, जहाँ उस घर के लोग अपने उपयोग के लिये साग भाजियाँ उगा सकें और अपने मवेशियों को रख सकें। गाँव की गलियाँ और सड़कें जिस धूल को हटाया जा सकता है उससे मुक्त होंगी। उस गाँव में उसकी आवश्यकताओं के अनुसार कुएँ होंगे, वह सबके लिये खुले होंगे। उसमें सब लोगों के लिये पूजा के स्थान होंगे, सबके लिये एक सभा–भवन होगा। मवेशियों के लिये चारागाह, सहकारी डेरीफार्म, प्राथमिक और माध्यमिक शालाएँ होंगी जिनमें

मुख्यतः औद्योगिक शिक्षा दी जायेगी और झगड़ों के निपटारे के लिये ग्राम पंचायत होगी। वह अपना अनाज, साग भाजियाँ और फल खुद पैदा कर लेगा।''

महात्मा तेंदूलकर (अंग्रेजी) खंड 4 : पृष्ठ 1442

गाँधी जी ने ग्रामीण विकास की बात को इतने जोश–खरोश के साथ उठाया था कि वह ग्रामीण भारत को शहरों से भी सुन्दर बना देने के लिये शहर वालों को भी निर्देशित कर बैठे और शहरों से गाँवों के लिये कार्यकर्ता भेजने को प्रेरित किया जो ग्रामीण की तरह अपने को परिवर्तित करें ऐसे और अपने पुराने रहन–सहन के नियमों में परिवर्तन करें देहात में शिक्षण प्रशिक्षण द्वारा ग्रामीणों को धर्मान्धता और कुरीतियों के पुराने जाल से निकाल सकें इस प्रकार शहर वाले जो ग्रामों से कमाई खाते हैं उसका कुछ तो प्रतिकार चुकाएँ। शहरी लोगों की स्वार्थपूरक मनोवृत्ति व ऐशो आराम की जिन्दगी पर कड़े प्रहार करते हुये कहा था ''शहर के लोगों को शायद ही इस बात का पता होगा कि भारत के आधा पेट भूखा रहने वाले करोड़ों लोग, किस तरह दिन पर दिन मृतप्रायः होते जा रहे हैं। उन्हें इस बात का पता तक नहीं कि उनके वह क्षुद्र ऐशो आराम और कुछ नहीं..... पूँजीपतियों का घर भरने का जो परिश्रम वे करते हैं उसकी निरी दलाली मात्र है, और वह सारा मुनाफा उनकी दलाली दोनों भारत की गरीब प्रजा की निचोड़कर निकाली गयी चीज है।

.....किसी भी तरह के वितंडावाद से अथवा अंकों और ब्योरों से तथा किसी भी तरह के मायावी कोष्ठकों से उस सबूत को उड़ाया नहीं जा सकता, जो भारत के देहात आज अपने चलते फिरते नर कंकालों को हमारी आंखों के सामने पेश करके दे रहे हैं।

हिन्दी नवजीवन साप्ताहिक, 19 मार्च 1922

गाँवों को गरीबी ने महात्मा की आत्मा को झकझोर दिाय था ''वह गाँव का चित्र देखकर रो पड़ते थे इस व्याकुलता से अधीर होकर तो बापू ने अपने संतुलन को बनाये रखते हुये शहरों की आलोचनात्मक भावनओं से ओतप्रोत होकर गाँव शहर के भेद को इस सीमा तक ला खड़ा किया–''सच तो यह है कि हमें गाँवों वाला भारत और शहरों वाला भारत इन दोनों में से एक को चुन लेना है। गाँव उतने ही पुराने हैं जितना कि यह भारत पुराना है शहरों को विदेशी अधिपत्य ने बनाया है। जब यह अधिपत्य मिट जायेगा, तब शहर को गाँवों के मातहत होकर रहना पड़ेगा। आज तो शहरों का बोलबाला है और वह वहाँ की सारी दौलत खींच लेते हैं। इससे गाँवों का ह्रास और नाश हो रहा है। गाँव का शोषण खुद एक संगठित हिंसा है अगर हमें स्वराज्य की रचना अहिंसा के पाये पर करनी है तो लोगों को उनका उचित स्थान देना होगा।''

हरिजन सेवक हिन्दी साप्ता0 20 जनवरी 1940

''मैं कहूँगा कि अगर गाँवों का नाश होता है, तो भारत का भी नाश हो जायेगा उस हालत में भारत, भारत नहीं रहेगा। दुनिया को उसे जो संदेश देना है, उस संदेश को वह खो देगा।

हरिजन सेवक, 29 अगस्त 1936

इस प्रकार बापू की यह धारणा कि सच्ची लोकशाही केन्द्र में बैठकर दस– बीस लोग नहीं चला सकते वरन् ग्राम पंचायत स्तर से चलायी जायेगी, अपने में एक मौलिकता थी, जो सच्चे अर्थो में देश को आर्थिक पिछड़ेपन से बचाकर प्रगति के पथ पर बढ़ाने का एक सुन्दर सपना उस राष्ट्र–नायक के मनोमस्तिष्क में था। इसीलिये उन्होंने बार बार ग्रामीण भारत ही ''मूल भारत'' का नारा दिया किन्तु स्वाधीनता के बाद देश में बापू के कथित ठेकेदारों ने हमें आज की स्थिति में पहुंचा दिया, जहाँ नव उपनिवेशवादी तोड़–फोड़ की छाया और प्रकाश तथा तिमिराच्छन्न होता हुआ खतरा मौजूद है। इसका प्रमुख कारण यह था कि आजादी के बाद जिन लोगों के हाथों में राष्ट्र निर्माण का उतरदायित्व आया वह बापू की ख्याति को जीवित रखकर अपना अस्तित्व बचाने के लिये ''ग्राम की ओर वापस लौटो'', का प्रचार तो करते रहे किन्तु व्यवहारिक जीवन में निर्लज्ज होकर शहरों और कस्बों के अभ्यस्त बन गये। इन्हीं राजनेताओं के अनुयायी भी ऐसे बनते गये जो बातें पंचायतों की करते मगर झूँठ दम्भ और कृत्रिमता से भरी हुयी विदेशी ढंग पर बनी अदालतों में शरण पकड़ते। डीगें मानवता के आदर्श की मारते किन्तु अर्द्ध–विक्षिप्त विधवा के हाथों से चन्द चाँदी के सिक्के छीनते हुये हमें शर्म नहीं आती। वहाँ नीचे शादी की खुशियाँ मनाते हैं तो ऊपर की मंजिल में शमशान यात्रा के लिये लाश पड़ी होती है, गीत ग्रामोद्योग और गृहउद्योग के गाते हैं किन्तु उनके बच्चों कीशिक्षा–दीक्षा निर्जीव एवं यांत्रिक प्रणाली से होती है वह दम तो विधवा एवं अनाथों की सहायता का भरते हैं परन्तु पूजा, जीवन और आजीविका का नाश करने वाले यंत्र की करते हैं। इन ग्रामीण भारत के आदर्श के झण्डे को ऊँचा उठाने वाले परन्तु अपनी शक्ति और समय का अपव्यय शहरों में करने वाले लोगों से क्या अपेक्षायें हो सकती थीं। यही कारण था कि शनैःशनैः बापू के अनुयायियों में मतभेद की रेखाऐं साफ उभरने लगीं और महात्मा गाँधी की मृत्यु के बाद तीन गाँधीवादी धाराओं का विकास हुआ– प्रथम धारा के सर्वोत्तम प्रतिनिधि थे पं0 जवाहरलाल नेहरू, दूसरी धारा विनोवा जी के सर्वोदय आन्दोलन के रूप में मुखरित हुयी वहीं तीसरी धारा राजाजी के विशिष्ट स्वतंत्र दर्शन के साथ स्थापित हुआ। कांग्रेस में इसी भूचाल तथा ऊहापोह के वातावरण का पूर्वानुमान लगाते हुये बापू ने 29 जनवरी 1948 को अपने ''आखिरी वसीयत नामा में लिखा था–''देश का बंटवारा होते हुये भी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा मुहैया किये गये साधनों के जरिये हिन्दुस्तान को आजादी मिल जाने के कारण मौजूद स्वरूप वाली कांग्रेस का काम अब खत्म हुआ। शहरों और कस्बों से भिन्न उसके सात लाख गाँवों की दृष्टि से हिन्दुस्तान की सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी हासिल करना अभी बाकी है। अतः कांग्रेस को हमें राजनैतिक पार्टियों और साम्प्रदायिक संस्थाओं के साथ गन्दी होने से बचाना चाहिये। इन और ऐसे ही दूसरे कारणों से अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी नीचे दिये गये नियमों के मुताबिक अपनी मौजूद संस्था को तोड़ने और लोक सेवक के संघ के रूप में प्रकट होने का निश्चय करें।''

मेरे सपनों का भारत–महात्मा गाँधी

यही बात आज भी चौधरी चरणसिंह कहते हैं कि कांग्रेस को पार्टी के रूप में चलाते रखकर पं0 जवाहरलाल नेहरू एवं उनके परिवारी जनों ने अपनी राजनैतिक स्वार्थसिद्धि की एवं एक पवित्र संस्था

को बेईमान चोर, ठग, दलाल और पेशेवर राजनीतिज्ञों का अखाड़ा बनाकर छोड़ दिया। वस्तुतः उस समय महात्मा जी की बात को नहीं माना गया तो इसकी जिम्मेदारी मात्र पं0 नेहरू की थी कि जो गाँधी ने अपने उत्तराधिकारी घोषित किये।

इसी कारण भविष्य में पं0 नेहरू का प्रभाव देश के शासन और कांग्रेस संगठन पर बढ़ता चला गया जिसे विदेशों से भी समर्थन मिलता गया और देश की घोर औद्योगीकरण की ओर मोड़ दिया तथा महात्मा गाँधी जी का रास्ता एक धूमिल पगडंडी में बदलते हुये समाप्त हो गया। यह लोग गाँधी जी को अवतार और महापुरूष कह करके मिथ्या अहं में फंस गये और उनकी नीतियों को बलाये–ताक रखकर गाँधीवाद का ऊपरी ढोंग प्रचार के लिये रचते रहे। सत्य तो यह है कि इन्होंने इस महान् आत्मा के साथ विश्वासघात किया या उसके बलिदान की कीमत पर अपनी राजनैतिक स्थितियां मजबूत कीं और स्वार्थ पूरे किये। इस बात की प्रमाणिकता तो तभी जाहिर हो गयी थी जबकि विनोबा के ''भूदान आन्दोलन'' को असफल होना पड़ा और कांग्रेस का भ्रष्ट प्रशासन तथा संगठन अंदर–अंदर उसकी जड़ खोद रहा था। क्योंकि कांग्रेस पर पं0 नेहरू का आधिपत्य था जिन्हें बापू का उत्तराधिकारी माना गया और विनोवा पर बापू का हाथ नहीं रहा था। लेकिन उनका कार्यक्रम विशुद्ध तथा प्रगतिशील मार्ग पर ले जाने वाला गाँधीवादी था। राजाजी की बात छोड़ सकते हैं जिनके दर्शन को दक्षिण पंथी या उपनिवेशवादी करार दे दिया गया था। जिसमें ऐसी झलक भी मिलती है किन्तु विनोवा और जयप्रकाश का प्रयास कहीं भी गाँधीवादी परिधि के बाहर नहीं गया था मात्र उसी पथ का अनुसरण करने को एक अहिंसक त्याग औरा ''बहुजन हिताय'' की भावना से ओतप्रोत था। लेकिन नेहरू परिवार की छाया में पुष्पित–पल्लवित कांग्रेस संगठन और पुनः इस संगठन के नेतृत्व में पैदा हुआ प्रसानिक तौर–तरीका गाँधीजी के रास्ते का पूर्णतः परित्याग था जो बहुत बड़ी भूल है क्योंकि भारत की नब्ज को उस युग पुरूष्ज्ञ ने भली भाँति पहचाना था तथा उसी के अनुरूप जो विकल्प प्रस्तुत किया था वह आज भी उतना ही सफल है। जितना जन्म–काल के समय था और ईसा के 2000 वर्ष बाद उतना ही साकार साबित होगा। यही वह बात है जिसे चौधरी कहते हैं। उनका कहना है कि बड़े बड़े उद्योगों द्वारा देश की आर्थिक समृद्धि को धक्का लगा है। अन्यथा गाँधी के आर्थिक कार्यक्रमों से हटकर, देश का जो दिशा निर्देशन हुआ है उससे बहुत सी कठिनाईयाँ सामने आई हैं। ठीक तो यह है कि देश की आर्थिक समृद्धि उसके अपने स्त्रोतों तथा मानव शक्ति के उचित प्रयोग से ही संभव है। इसलिये चौधरी ने अपनी अर्थनीति की व्याख्या करते हुये कहा है कि सारा अर्थतंत्र कृषि, व्यवसाय प्रदान तथा विकेन्द्रित उत्पादन पर केन्द्रित होना चाहिये ताकि गाँधी के वह शब्द कि ''जन समूह द्वारा जन समूह के लिये ही उत्पादन होना चाहियै'' सार्थक हों।

जैसा पहिले ही कहा जा चुका है चौधरी के विचार में विगत अर्थ नीतियों की विफलता दो बातों पर निर्भर थी प्रथम तो उद्योग तथा कृषि पर असंतुलित धनराशि का प्राविधान दूसरे बड़ी मशीनों पर जोर, इसके आमूल परिवर्तन हेतु चौधरी का सुझाव है–

धनराशि के प्राविधान में कृषि को प्राथमिकता तथा मशीनीकरण पर रोक। इस प्रकार उनकी मान्यता है कि भारत की रूपरेखाा ग्राम्य विकास तथा उन उद्योगों पर निहित होगी जिनका कच्चा माल स्वदेशी होगा। इस प्रकार देश स्वावलम्बी अर्थव्यवस्था का विकास करता चला जायेगा। यही नीति महात्मा गाँधी की मूलरूप में थी। मगर जैसा मैं पहले कह चुका हूँ आजादी के बाद देश के विकास की क्या दिशा निर्धारित की जाय इस प्रश्न पर तात्कालीन नेतृत्वकर्ता पंडित नेहरू ने गंभीरता से विचार नहीं किया और औद्योगीकरण को गरीबी मिटाने के लिये एक मात्र विकल्प घोषित कर दिया।

अगर आप चाहते हैं कि भारत औद्योगीकरण कर और आगे बढ़े, जैसा हम चाहते हैं जो जरूरी भी है तो आपको औद्योगीकरण करना होगा और वह विचार छोड़ना होगा कि छोटे पुरानी तरह के कारखाने हों जिनमें बालों में लगाने वाला तेल और ऐसी ही चीजें बनती हों– इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उपभोक्ता वस्तुएं छोटी हैं या बड़ी। आपको जड़ तक नींव तक जाना चाहिये इसलिये भारी उद्योग महत्व रखते हैं और किसी चीज का महत्व नहीं सिवाय उसके जो संतुलन के लिये जरूरी हो– और भी महत्वपूर्ण है। हमें भारी मशीन निर्माण उद्योगों और भारी उद्योगों के लिये योजना बनानी चाहिये। हमें ऐसे उद्योग चाहिये जो भारी मशीनें बना सकें और हमें यह काम जल्दी से जल्दी करने में लग जाना चाहिये क्योंकि इसमें समय लगता है।

जनवरी 1956 राष्ट्रीय विकास परिषद के वक्तव्य का अंश

इसके बाद बनाई गयी दूसरी योजना का मुखौटा सार्वजनिक क्षेत्र के विकास विशाल व विकासशील सहकारी क्षेत्र के निर्माण का तैयार हुआ 28 सितम्बर 1956 को चंडीगढ़ में कांग्रेस कमेटी में अपनी स्थिति को साफ कर दिया।

''एकीकृत योजना की प्रमुख बात है उत्पादन, न कि रोजगार महत्वपूर्ण है लेकिन उत्पादन के संदर्भ में बिल्कुल महत्वहीन है और उत्पादन पहिले से श्रेष्ठत्तर तकनीकों से ही बढ़ सकता है जिसका अर्थ है कि आधुनिक उपायों से ही बढ़ सकता है।''

इस प्रथम योजना के बाद लगातार इस ओर प्रयास जुटाये जाते रहे कि किस प्रकार भारी उद्योगीकरण को प्रधानता दी जाय जिससे तेजी से विकास हो सके और लघु या मध्यम उद्योग भी लगें तो मात्र भारी उद्योगों के सहयोगी के रूप में उनके विकास के प्रयोजन से लगाये जायें। यही वह नीति थी जिसने कृषि एवं ग्रामीण विकास का मार्ग रोक दिया लेकिन वस्तुस्थिति क्या थी? क्या हम महात्मा गाँधी की दिशा में बढ़ रहे थे? जरा बापू के औद्योगीकरण पर विचार देखिए–

''अभी तक हमें यंत्रों की आवश्यकता नहीं है। हमारे यहाँ अभी तक बहुत हाथ' बहुत ज्यादा हाथ बेकार हैं। लेकिन जब हमारा बौद्धिक विकास हो जायेगा और हमें महसूस होगा कि हमें यंत्रों की आवश्यकता है तब हम अवश्य उनको ग्रहण करेंगे। हमें उद्योगा चाहिये तो इसके लिये हमें उद्यमी बनना होगा। पहिले हम स्वावलम्बी बनें तो हमें दूसरों के नेतृत्व की उतनी आवश्यकता नहीं रहेगी। जब और जैसे हमें आवश्यकता होगी, हम यंत्रों को दाखिल करेंगे।''

कम्युनिस्ट सर्विस न्यूज, सितम्बर अक्टूबर, एम0एन0 चटर्जी द्वारा उद्धृत ला0 के0 584–586

बापू की इस धारणा के साथ ही उनका रचनात्मक व्यवहारिक ज्ञान भी जुड़ हुआ था उनका कहना था कि बड़े पैमाने पर माल पैदा करने का पागलपन ही दुनिया कि मौजूदा संकटमय स्थिति के लिये जिम्मेदार है क्योंकि इसके प्रति फलस्वरूप उत्पादन कुछ विशिष्ट क्षत्रों में केन्द्रित होने का खतरा है जिससे वितरण व्यवस्था बिखर जायेगी। इसके विपरीत– जहाँ जिस वस्तु की आवश्यकता हो वहीं उनका निर्माण हो और वहीं वितरण व्यवस्था पर स्वतः नियंत्रण बना रहेगा। बापू का दृष्टिकोण साफ था कि जैसे जैसे प्रतिस्पर्धा और बाजार की समस्या खड़ी होगी वैसे ही गाँवों का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में शोषण होने लगेगा। अतः गाँवों को अपने आप में पूर्ण बनाने के लिये चाहिये कि वस्तुओं का निर्माण और उत्पादन अपने उपयोग के लिये वह करें फिर अपनी शक्ति बढ़ाने के लिये शनैः शैनः यंत्रों का प्रयोग स्वतः करने लगेंगे। लेकिन यह कहना कि औद्योगीकरण हर हालत में किसी भी देश के विकास के लिए जरूरी है इसे महात्मा जी मानने को तैयार न थे। यंत्रों के बढ़ते प्रयोग पर अपनी टिप्पणी करते हुये बापू ने कहा था–

''मेरा विरोध यंत्रों के सम्बन्ध में फैले हुये दिवानेपन से है, यंत्रों से नहीं। परिश्रम का बचाव करने वाले यंत्रों के सम्बन्ध में लोगों का जो दीवानापन है उसी से मेरा विरोध है। आज परिश्रम की बचत इस दह तक की जाती है कि हजारों लोगों को आखिर भूखों मरना पड़ता है और उन्हें तन ढंकने तक को कपड़ा नहीं मिलता। मुझे भी समय और परिश्रम का बचाव अवश्य करना है लेकिन वह मुठ्ठी भर आदमियों के लिये नहीं बल्कि समस्त मानव जाति के लिए। आज यंत्रों के कारण मुठ्ठी भर आदमी असंख्य लोगों की पीठ पर सवार होकर बैठे हैं और उन्हें सता रहे हैं क्योंकि यंत्रों के चलाने के मूल में मनुष्य का लोभ है, धन तृष्णा है, जन कल्याण की भावना नहीं है। यंत्रों के इस दृरूपयोग के विरूद्ध मै अपनी पूरी शक्ति से लडत्र रहा हूँ।

हिन्दी नव जीवन साप्ताहित 2 नवम्बर 1934

इस प्रकार नेहरू और गाँधी दोनों के विचार औद्योगीकरण पर मूलतः प्रतिकूल थे अब इनमें से चौधरी चरणसिंह ने प्रत्यक्ष व परोक्ष दोनों ही रूपों में बापू के विचारों को प्रधानता देते हुये भारत के लिये नये सिरे से अर्थनीति तैयार करनेकी बात कही है। जिसमें मात्र वहीं यंत्रों के प्रयोग का समर्थन किया है जहाँ अपरिहार्य है।

चौधरी मूलतः गाँधीवादी विचारधारा के प्रतीक के रूप में हमारे सामने आये हैं अस्तु नेहरू के औद्योगीकरण की नीति से उनका टकराव होना स्वाभाविक है। अन्य गाँधीवादी विचारकों की भाँति उनके सोचने का तरीका भी यही है कि पश्चिमी देशों की इस क्षेत्र में जो दौड़ है हम उसकी नकल नहीं करें क्योंकि हमारे पास इतनी पूँजी लगाने के लिये न आज है न कल थी। दूसरी ओर देश में उपलब्ध भूमि व प्राकृतिक साधनों की मात्रा व उनकी गुणवत्ता निर्धारित है और जनसंख्या बढ़ रही है ऐसी परिस्थितियों में व्यक्ति की आय अथवा उत्पादन तभी बढ़ सकता है जब पूँजी की वृद्धि या औद्योगिकी के सुधार की दर या दोनों तत्व मिलकर इतनी रफ्तार से बढ़ें कि जनसंख्या में वृद्धि की दर से आगे निकल सकें यह तभी हो सकता है जब श्रमिक बल में अपनी भौतिक स्थिति सुधारने की आकांक्षा इतनी

प्रबल हो कि वह उसके लिये कड़ी मेहनत करने के लिये तैयार हो। इस प्रकार आर्थिक संवृद्धि के लिये प्राथमिक निर्णय तत्व है बचत की दर, पूँजी के संचयन की दर, से पूँजी निर्माण की दर या अर्थव्यवस्था में निबल लागत की दर। ऐसे मुल्क में जहाँ सघन खेतिहर अर्थव्यवस्था हो आय कम हो व उपभोग का स्तर बिलकुल गुजारे भर हो जहाँ आबादी की कुल मिलाकर आमदनी का बहुत बड़ा भाग खाने और इस तरह के प्राथमिक खर्चो में जैसे कपड़े व घर की जरूरी चीजों के लिये जाता हो वहाँ बचत में वृद्धि करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि जनसंख्या वृद्धि के कारण उसी अनुपात में परमावश्यक वस्तुओं की वितरण व्यवस्था भी बढ़ती है। फलतः प्रचार मात्रा में पूँजी का संचय होना मुश्किल हो जाता है।

इस प्रकार अत्यधिक जनसंख्या तथा मानवीय कमजोरियों में बचत की दर घटा दी है। यह ऐसी अकाट्य व ठोस सच्चाई है जिसे आर्थिक पूँजी प्रधान व भारी उद्योगों की वकालत करने वाले भूल गये हैं और वह लोग जो कम पूँजी वाले विकेन्द्रित अद्योगों की वकालत करते हैं वह सही माने गये हैं।

इसी पृष्ठभूमि में चौधरी साहब की स्पष्ट मान्यता यह है कि यदि हमारा देश एक दशाब्दि पूर्व औद्योगीकरण की ओर कदम बढ़ाता है तो उसके विकास के लिये पश्चिमी मार्ग खुला मिल जाता। क्योंकि तब समूचे महाद्वीप की जनसंख्या 20 करोड़ से अधिक नहीं थी मृत्यु दर ऊँची थी जनसंख्या वृद्धि की दर आधे प्रतिशत से भी कम थी और उद्योगों की लागत भी बहुत कम थी। तथा सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि अब बड़े उद्योगों में हम बेरोजगारी की लम्बी भीड़ को खपा नहीं सकते हैं।

संक्षेप में चौधरी साहब की मान्यता है कि आजकल हमारे देश में जो पूँजी प्रधान भारी उद्योग स्थापित किये जा रहे हैं वह हमारे महानगरों के एक वर्ग विशेष की आवश्यकताओं की पूर्ति भर के लिये हैं अथवा मामूली कीमतत पर अपना माल निर्यात कर रहे हैं जिससे यह अवगुण पैदा होता है कि बेरोजगारी बेतहाशा बढ़ रही है पूँजी कुछ विशिष्ट लोगों के हाथों में संचायित होती है और देश सम्पन्न मुल्कों के हाथों में फँसता जा रहा है अतः इस देश की परिस्थितियों के अनुरूप उत्तम कदम यही होगा कि उपज में वृद्धि करने के लिये उत्पादकता व रोजगार को एक साथ बढ़ाया जाये ताकि रोजगार की उपेक्षा करते हुये उत्पादकता बढ़ा दी जाये अर्थात् प्रति श्रमिक उत्पादकता बढ़ायी जाये। अतः जब तक पूरे रोजगार की स्थिति न आ जाये तब तक जहाँ कहीं हमारे सामने यह सबाल आये कि हम या तो अधिक श्रमिकों को लाने वाली तकलीफी को पसन्द करेंगे या कम मजदूरों को लगाने वाली को, जबकि उत्पादन दोनों से बराबर होता है तो हम पहली को पसन्द करेंगे। यद्यपि राष्ट्रीय हित के मुद्दे पृथक की बात है जब दूसरे तरीके से सोचना पड़ेगा।

इस प्रकार वित्तीय व तकनीकी आत्म–निर्भरता की ओर बढ़ने का एक मात्र रास्ता यह है कि औधोगीकरण के अब तक के रास्ते को तिलांजलि देते हुये महात्मा गाँधी के मार्ग का अनुसरण करें, जहाँ आवश्यक हो गाँधी की नीतियों को बदलते परिवेश के अनुरूप ढालें और देश का बहुमुखी विकास करें।

7. गाँधीवादी दृष्टिः पं. नेहरु एवं चौधरी

महात्मा गाँधी कहा करते थे कि ''मेरे सपनों का स्वराज्य तो गरीबों का स्वराज्य होगा।'' इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उन्होंने अपने मस्तिष्क में एक निश्चित मंतव्य बना रखा था कि गरीबों को स्वराज्य तब मिलेगा जब ग्राम आजाद होंगे अर्थात् गाँवों का शोषण व उत्पीड़न जारी रहा तो देश में भयंकर स्थिति पैदा होगी जब गाँवों से उठने वाली क्राँति की चिंगारियाँ शहरों की खुशहाली को समूल नष्ट कर देंगी। क्योंकि भारत 7 लाख गाँवों में रहता है चंद शहरों में नहीं इसलिये बापू ने एक बार तो स्पष्ट घोषणा की थी। सच तो यह है कि हमें गाँवों वाले भारत और शहरों वाले भारत इन दो में से एक को चुन लेना है।''

मगर बापू के घोषित उत्तराधिकारी पंडित नेहरू का ध्यान भारी औद्योगीकरण और विशालकाय योजनाओं द्वारा उत्पादन वृद्धि करने तथा सरकार की शक्ति के बल पर सामाजिक न्याय स्थापित करने की ओर था। स्वयं गाँधी जी ने भी आजादी की पूर्व बेला में कांग्रेस वर्किंग कमेटी में इस प्रश्न को गम्भीरता से उठाया था मगर वहाँ खुलकर बहस करना उचित नहीं मानते हुये अक्टूबर 1945 में बापू ने एक पत्र भी नेहरू जी को लिखा–

हम लोगों के दृष्टिकोण में जो अंतर है वह बुनियादी है तो..... जनता को उसकी जानकारी होनी चाहिये। इस बारे में उसको अंधेरे में रखना स्वराज्य के हमारे काम के लिये हानिकारक होगा।

–मेरी दृढ़ मान्यता है कि यदि भारत को सच्ची आजादी प्राप्त करनी है, और भारत के जरिए संसार को भी, तो आगे या पीछे हमें समझ लेना होगा कि जनता को गाँवों में ही रहना है शहरों में नहीं, झोंपड़ियों में रहना है महलों में नहीं। करोड़ों लोग शहरों या महलों में कभी एक दूसरे के साथ शांतिपूर्वक नहीं रह सकते।''

लेकिन देश का ऐसा सौभाग्य नहीं था कि आजादी के प्रणेता और उनके उत्तराधिकारी के बीच दृष्टिकोण का यह अंतर दूर हो पाता, न ही यह भी संभव था कि बापू के उत्तराधिकारी के स्थान पर दूसरे दर्जे के उत्तराधिकारियों को शासन चलाने का अधिकार पाता। अस्तु आजादी के कुछ समय बाद ही जब महात्मा जी हमारे बीच से उठ गये तो उनकी सारी नीतियां और कार्यक्रम दूसरी पंचवर्षीय योजना तैयार करते समय हवा में उड़ा दी गयी और नेहरू जी के पश्चिमी सभ्यता से रंगे हुये दिमाग के आधार पर तैयार कर देश को दूसरी ओर 'औद्योगीकरण से पैदावार वृद्धि 'मोड़ दिया। 18 वर्ष तक वह प्रधानमंत्री रहे, फिर उनकी बेटी इंदिरा प्रधानमंत्री बनी। इस प्रकार लगातार सन् 1947 से 1977 तक नेहरू परिवार के साये में उन्हीं के वर्चस्व में तैयार की गयी नीतियों के आधार पर देश का आर्थिक ढांचा खड़ा किया गया जिसमें गांव एवं कृषि की घोर उपेक्षा कर शहर और उद्योगों के विकास पर सारी शक्ति झोंक दी गयी और देश को बर्बादी के गर्त में ढकेल दिया गया। जब 1977 में कांग्रेसी सत्ता पलटी और जनता सरकार का गठन किया गया तो पुनः गाँधीवाद की ओर देश को मोढ़ने का संकल्प

दुहराया गया जिसकी अगुआई चौधरी चरणसिंह ने अपना आर्थिक दर्शन पेश करते हुये की फिर क्या था–

पं0 नेहरू बनाम चौधरी एक देश व्यापी बहस का मुद्दा बन गया कुछ लोगों की धारणा है कि चौधरी ने केन्द्र में ग्रह मंत्रालय पर आने के बाद नेहरू विरोध की आवाज बुलन्द की, किन्तु यह सब कुछ प्रचार मात्र एक अज्ञानता का परिचय देना है क्योंकि अभी तक राजनीतिज्ञों को कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन की वह सिंह गर्जना विस्मृत न हो पायी होगी–

''पंडित जी आप रूस का अंधानुकरण कर कृषि प्रधान भारत की खेती को चौपट न कीजिये। भारत का किसान अपनी तथा अपनी निजी फसल की ममता के कारण ही कड़ी धूप में पसीना बहाकर हल चलाता है। यदि सहकारी खेती के नाम पर जमीन व फसल का सरकारीकरण कर दिया गया तो वह कड़ी मेहनत कदापि नहीं करेगा। सहकारी खेती से कृषि उत्पादन चौपट हो जायेगा।''

जब पं0 नेहरू देश के एक मात्र नेता थे तब चरणसिंह जी ने उस दबंग और तेजस्वी व्यक्तित्व के विचारों को चुनौती दी–

''पंडित जी आपको मुझसे अधिक खेती का अनुभव नहीं है, आपके विचार अव्यवहारिक हैं।''

तब समूचा पंडाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज गया था वातावरण में निस्पब्धता छा गयी थी, तथा नेहरूवादी कांग्रेसी तबेले में तहलका मच गया था। इस प्रकार नेहरू चौधरी विचार–वैभिन्य एक बहुत पुरानी कहानी है जिसके फलस्वरूप चौधरी जी को भारी कीमत अदा करनी पड़ी। किन्तु तमाम विरोधों केबावजूद यह निर्भीक व्यक्तित्व अपनी बात पर अटल रहकर नेहरु के राजनीतिक प्रादुर्भाव तक का विरोध करता रहा जिसके पीछे बापू आशीर्वाद माना जाता है। अस्तु चौधरी जी बापू की गलतियों पर भी समय–समय पर उंगली उठाते रहे–

"Gandhiji has committed two mistakes and these two errors ceased all the good work that his great soul did. His first mistake was that he always considered those involved in KHILAFAT movement to be better people than Jihna the only spkesman of Muslims, and we did not give him his due importance, at the right time. It is one of the historic ironies, that the Jihna whom Gandhiji spurned on the advice of Nehru was able to wrest Pakistan from us, Gandhiji disciples. People maintain that Jihna was for Pakistan from the very begining, but I doubt this. Jinha was pushed into taking that stand.

Bapoo's second mistake was that he selected Nehruji to be the Prime Minister instead of V.B. Patel. If we had than got a strong leader with Indian ways. India would have been a powerful country today what actually happened was that the Englishman deported but left behind Englishmens,"

-Charan Singh-The two mistakes of Gandhiji

-(Sunday Weakly 23rd Oct. 1977)

लेकिन उपरोक्त भाषा का अर्थ यह कदापि न लगाया जाना चाहिये कि चौधरी पं0 नेहरू के व्यक्तिगत विरोधी रहे। उन्होंने नेहरू का अंधविरोध न करके तथ्यों के आधार पर पंडित जी के विचारों, विशेषकर आर्थिक नीति सम्बन्धी विचारों की निरर्थकता साबित करते हुये एक ठोस और आर्थिक वैकल्पिक कार्यक्रम देश के समक्ष रखा और बुनियादी बात नियोजन व राष्ट्रीय विकास के संदर्भ में उठाई। उन्होंने नेहरू जी के स्वाधीनता आंदोलन में किये गये त्याग– बलिदान उनकी सूझबूझ और विद्वता के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुये तथा अपना नेता मानते हुये भी उनको गाँधी जी के आधार भूत सिद्धांतों से हटने के कारण उनकी आर्थिक नीतियों को देश की दुर्दशा के लिये जिम्मेदार ठहराते हुये नियोजन में प्राथमिकताओं को जड़मूल से बदलने की बात बहुत कुशलता से उठाई। यह मात्र इसलिये कि चौधरी के विचार मूलतः गाँधीवादी हैं वह इसके प्रणेता और प्रवक्ता हैं, तथा उनकी धारणा है कि देश के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत लोग विभिन्न समस्याओं का समाधान मात्र गाँधीवादी दर्शन के आधार पर ही कर सकते हैं। स्वयं महात्मा जी ने भी नीतियों के सवाल पर नेहरु जी से अपना मतभेद समय समय पर जाहिर किया था और अपनी नीतियों को जोर देकर लागू कराने के लिये इस अंतर को भी स्पष्ट कर दिया था–

''पंडित नेहरु उद्योगीकरण चाहते हैं क्योंकि वह समझते हैं कि उनका राष्ट्रीयकरण कर देने से वह पूँजीवाद के दोषों से मुक्त हो जायेगा। मेरी राय है कि उद्योगवाद में ये दोष निहित हैं और कितना भी राष्ट्रीयकरण क्यों न किया जाय उन दोषो को दूर नहीं किया जा सकता।''

हरिजन अंग्रेजी साप्ताहिक 29 सि0 1940

चूँकि गाँधी ने गलती से सरदार पटेल की उपेक्षा कर पं0 नेहरू के बड़प्पन और अंग्रेजियत का ख्याल करते हुये उन्हें अपना उत्तराधिकारी बनाकर शासन सौंप दिया अतः देशवासी इस भ्रम में आते हैं कि नेहरू और गाँधी में कोई मौलिक अंतर नहीं उनकी नीति और विचार एक हैं किन्तु यही मतिभ्रम अलाभकर साबित होता है चौधरी साहब ने इसकी स्पष्ट विवेचना की है–

"The entire nation is guilty of confusing Gandhiji with Pt. Nehru and of trying to bring about amalgam of what the two

stood for. Actually the two are poles apart, we have to choose between the two. If India is to be saved, we will have to admit our errors and go back wholsole to Gandhiji."

(Sunday: October 23rd 1977)

इस प्रकार चरणसिंह जी ने तो मात्र नेहरू और गाँधी के अंतर को स्पष्ट करते हुये देशवासियों के मनोमस्तिष्क पर छायी धुंध को साफ करने का ही प्रयास किया इसके बावजूद देश के स्वार्थी राज नेताओं द्वारा तमाम भ्रांतियां इस प्रश्न को लेकर फैलाने की कुचेष्टा की लेकिन जब डॉ0 राम मनोहर लोहिया ने पं0 नेहरु और इंदिरा के लिये अत्यधिक उग्र विचार व्यक्त किये तो यह लोग बिलों में क्यों जा बैठे थे? लोहिया जी कहते थे कि जब तक कांग्रेस के मोहिनी स्वरूप का असर जनता के दिमागों पर रहेगा, तब तक देश में लोकतांत्रिक विचार नहीं पनप सकता। लोहिया जी ने कांग्रेस के खात्मे हेतु इसलिए जनसंघ के सहयोग को तिरस्कृत नहीं किया था। वह शासन पर नेहरू परिवार की एक छत्र परम्परा के विरोधी रहे। मोतीलाल के बाद जवाहर लाल फिर उनकी बेटी इंदिरा और तब इंदिरा जी का बेटा संजय फिर राजीव, कांग्रेस और शासन की बागडोर संभालें यह किसे सहन होगा। बाबू जगजीवनराम ने ही बताया था कि–''सुभाष चन्द्र बोस के भतीजे से जब उनकी बात हुई तो उसने कहा था कि नेताजी के बलिदान का लाभ वहराजनीति में नहीं उठाना चाहते।'' लेकिन इंदिरा जी अपनी सत्ता के लिये नेहरु परिवार की देशभक्ति और बलिदान का बखान करते नहीं अघाती। वह दलील देती हैं कि मेरे परिवार ने सर्वाधिक त्याग किया है और उसी के प्रतिफलस्वरूप हम शासन कर रहे हैं। यहाँ मैं एक सवाल पर बहस छेड़ता हूँ अपने पाठकों के लिये कि क्या नेहरू परिवार का त्याग शहीद भगतसिंह के परिवार से भी अधिक था? जिस परिवार की दो पीढ़ियों का खात्मा मात्र आजादी की खातिर हो गया उसी परिवार की अबला माँ विद्यावती एक ओर जीवन भर भरपेट खाने को तरसती रही, वहीं दूसरी ओर गुलामी में नेहरू परिवार के दो लोग जेल गये और वहाँ भी अंग्रेजों की कृपा से ऐश भुगता, फिर बाहर आये तो देश की बागडोर संभाल बैठे। पं0 मोतीलाल से संजय गाँधी तक एक कड़ी है जिसमें जुड़कर सारा परिवार कांग्रेस संगठन को हथियाये रहा और सन् 1947 से आज तक बीच के तीन वर्षो को छोड़कर लगातार इसी परिवार ने देश पर शासन किया और अभी कब तक इनकी तानाशाह हकूमत जारी रहेगी इसका भी कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता। अतः चौधरी चरणसिंह ही क्यों देश का कोई भी बुद्धिजीवी इस खानदान शाही को कैसे और कब तक गले उतारेगा?

चौधरी चरणसिंह का यह विरोध नेहरु से व उनके परिवार से रहा यह कहना क्षुद्रता और अज्ञानता है कि चौधरी ने जवाहरलाल जी की नीति का विरोध करने का साहस उनके जीवन काल में नहीं किया इसका उदाहरण मैं दे चुका हूँ कि नागपुर अधिवेशन में जब जवाहरलाल जी प्रधानमंत्री और कांग्रेस के एक मात्र नेता था तथा चरणसिंह राज्य मंत्रिमण्डल और कांग्रेस के सामान्य सदस्य थे तब विरोध का स्वर बुलंद कर चुके थे। इसमें व्यक्तित्व के छोटे बड़े का प्रश्न नहीं है सरकार और किसी भी

छोटे बड़े व्यक्तित्व की नीति विचारों से मतभेद व्यक्त करने में हर बुद्धिजीवी स्वच्छंद होता है। फिर मृत्युपर्यन्त आलोचना करने का अभिप्राय व्यक्तित्व के प्रति निरादर नहीं बल्कि नीति के प्रति मतभेद है। जब नेहरू जी के निकट आयें और गाँधी जी नेहरू की ओर कदम बढ़ायें, किन्तु आज न नेहरू हैं न गाँधी इसलिये जनता पुरातन का सम्मान करती है किन्तु अपनी नई रचना करती है जो व्यवहारिक नीति है।

मतभेद कहाँ है?

मतभिन्नता कभी–कभी इतनी जटिल हो जाती है कि यह निर्णय करना भी जटिल हो जाता है क्या गलत है और क्या सही है। उदाहरणतः कश्मीर प्रकरण को संयुक्त राष्ट्र संघ में ले जाना क्या नेहरू की गलती थी या सूझबूझ पूर्ण नीति थी? चौधरी ने अपना मतभेद इस प्रश्न पर उसी समय व्यक्त कर दिया था उनका कहना रहा कि भारतीय सेना सम्पूर्ण कश्मीर को आजाद कर लेती तो ऐसी गुत्थी पैदा न होती जो आज तक सिर दर्द बनी हुयी है यही मान्यता जय प्रकाश जी की भी रही और इस तथ्य को स्वाधीन भारत के तात्कालीन क्षणों में दृष्टिपात करने पर सत्य मानना ही होगा–

3 जून 1947 की ब्रिटिश सरकार की घोषणा के बाद कश्मीर भी हैदराबाद की भांति शीघ्र भारत या पाकिस्तान में से किसी एक में विलय करने का निर्णय लेने में विफल रहा। उधर पाकिस्तान ने समझौते को तिलांजलि देकर 22 अक्टूबर 1947 को कबायलियों की आड़ में कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। इसका आक्रमण के दौर में वहाँ के राजा हरीसिंह की याचना पर भारत सरकार ने 27 अक्टूबर से उनकी सहायता आरम्भ कर दी और युद्ध जीत लिया किन्तु पं0 नेहरू की शांतिप्रियता के कारण युद्ध विराम द्वारा कश्मीर के बड़े भू–भाग को पाकिस्तान पर छोड़ दिया गया, यह घटना 1 जनवरी 1947 की है। इससे पूर्व पंडित जी ने कश्मीर प्रकरण को गृहमंत्रालय अर्थात् सरदार पटेल से हटाकर अपने विदेश मंत्रालय के अधीन लाकर 31 दिसम्बर 1948 को औपचारिक रूप से यह समस्या संयुक्तराष्ट्र संघ में भेज दी। जो कि आज तक समस्या ही बनी हुयी है। इस घटना के बाद सरदार पटेल पत्रकारों से विनोद में कह देते थे ''कश्मीर का प्रश्न जवाहरलाल की सुसराल से सम्बद्ध न होता तो इसे 24 घंटे में ठीक कर देता।'' वस्तुतः यदि यह समस्या पूरी तरह गृह मंत्रालय के अधीन होती तो लोह पुरूष पटेल ने जूनागढ़ वे हैदराबाद की तरह इसे भी हल कर दिया होता।

आज तक सभी राजनैतिक विचारक यह मानते रहे हैं कि कश्मीर समस्या नेहरू जी की अदूरदर्शिता नीति के कारण ही उलझी रही, जबकि इससे भी जटिल समस्या सरदार ने सुलझा दीं।

अतः इस प्रश्न पर चरणसिंह की विचार शक्ति सरदार पटेल के समतुल्य माननी होगी जो अपनी जगह सत्य है फिर भी इसे गलत कहने वाले तो नेहरू के अंधभक्त ही हो सकते हैं।

इसी प्रकार तिब्बत और चीन का भी प्रश्न रहा है सरदार पटेल ने 7 नवम्बर 1950 को एक पत्र लिखकर इस बात पर गहरा रोष प्रकट किया था कि भारत के चीन स्थित राजदूत डॉ0 पाण्डेकर के भारत विरोधी व चीन समर्थक विचार और नेहरू द्वारा उनका समर्थन बहुत खतरनाक बात है। फिर

विदेश मंत्रालय द्वारा चीन को पत्र लिखकर तिब्बत पर चीनी स्वायत्ता को सार्वभौमिक सत्ता (वअमतमदजपल) लिखना तो महान् भूल है सरदार की भाषा में–

''चीन दक्षिण पूर्व एशिया में अपना अधिपत्य जमाना चाहता है। हम इस संदर्भ में अपनी आँखें बन्द नहीं रख सकते, क्योंकि साम्राज्यवाद दूसरे रूप में प्रकट हो रहा है।'', **फ्रामकर्जन टू नेहरू'**

इस लक्ष्य से पता चलता है कि नेहरू जिन्हें विदेश नीति का घाघ प्रचारित किया जाता है उनकी सूझ बूझ कितनी थी। उनकी गलतियों पर उस समय भी ओजस्वी व्यक्तित्व उँगली उठाते थे चाहे उनके अत्यधिक सम्मान और अधिकार हीनता के कारण कुछ कर न पाते हों तब चरणसिंह द्वारा इस नीति पर यदि नेहरु की आलोचना की जाय तो यह कौन गुस्ताखी है? इसीलिये चौधरी साहब कभी–कभी इस प्रश्न को उठाते हैं कि नेहरु के स्थान पर पटेल प्रधानमंत्री होते तो देश का मानचित्र कुछ और होता।

इसी प्रकार भारत की तटस्थता की नीति कि वह रूस की ओर अधिक झुकी नहीं होनी चाहिये लेकिन इसे कुछ तथा कथित प्रगतिशील तत्व अमेरिका परस्ती कह देते हैं। भारत का न कम्यूनिज्म की ओर झुकाव हो सकता है न पूँजीवाद की ओर। आर्थिक मदद के लिये अमेरिका पर निर्भर रहकर, अमेरिका से आँख मिचौली करना संभव नहीं, इसी प्रकार मास्को को बद्रीधाम की यात्रा बनाना आस्तिक को नास्तिकता का प्रशिक्षण देना है। राजनीतिक कम्युनिस्ट आवरण और पूँजीवाद का चोला बहुरूपियों का मजाक बन जाता है, स्वस्थ राजनैतिक परम्परा नहीं।

चौधरी का मुख्य विवाद नेहरू से आर्थिक चिंतन पर आरंभ हुआ, उन्होंने अपनी पुस्तक ''म्बवदवउपब च्वसपबल व िप्दकपंरू । ळंदकीपंद इसनम चतपदज'' में इस तथ्य की ओर ध्यान केन्द्रित किया है कि आज की विषम आर्थिक परिस्थितियों के लिये गाँधी जी के उत्तराधिकारी पं0 नेहरू दोषी हैं, जो बापू के विचारों को तिलांजलि देकर आकाशीय उड़ान भरने लगे थे अर्थात् भारतीय परिस्थितियों को नजर अंदाज कर औद्योगीकरण की ओर मुड़ गये। उन्हीं के शब्दों में–

स्वाधीनता भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि के लिये 36 प्रतिशत तथा उद्योगों के लिये 5 प्रतिशत व्यय करने का प्राविधान था। यह योजना सरदार पटेल के अनुसार तैयार हुयी। उसके बाद सरदार नहीं रहे तो अगली योजना में कृषि के लिये 21 प्रतिशत तथा उद्योग के लिये 23 प्रतिशत व्यय का प्राविधान किया गया और पाँच गुनी बिजली सस्ती दामों पर दी गयी। इसमें जहाँ एक ओर पटेल साहब का अभाव एक कारण था दूसरा एक कारण यह भी था कि पं0 नेहरु नवम्बर 1954 में चीन की यात्रा पर गये और वहाँ से वापिस आकर समाजवादी लक्ष्य देश के ऊपर थोप दिया जिसकी विधिवत् घोषणा जन0 1955 में कांग्रेस के आवड़ी के अधिवेशन में गाँधीवाद को ताक पर रखकर समाजवादी समाज की रचना करने के रूप में हुयी। इस संदर्भ में चौधरी की मान्यता है कि पटले की मृत्यु के बाद कांग्रेस संगठन और शासन पर पंडित जी पूरी तरह छा गये और महात्मा जी की दिशा के ठीक विपरीत मुड़ गये। इस कालान्तर में नेहरु जी ने भारी उद्योगों के प्रति आसक्ति दिखाई एवं खेती व लघु उद्योगों की उपेक्षा के लिये यह दौर स्मरणीय रहेगा। इस खोखली और दिखावटी अर्थव्यवस्था पर एक घटना

याद आती है। एक बार जब विख्यात अर्थशास्त्री डॉ0 ई0 एफ0 शमाखर पं0 नेहरू के साथ बम्बई के एक मशहूर अणुशक्ति केन्द्र का चक्कर लगाकर लौट रहे थे तो केन्द्र के दरवाजे पर कार एक भिखारी की बैसाखी से टकरा गयी, तो डॉ0 शमाखर के इस प्रश्न के उत्तर में नेहरु जी हतप्रभ से रह गये कि ''क्या अणुशक्ति केन्द्र और भिखारी एक साथ शोभा देते हैं।''

इस अर्थशास्त्री ने लिखा है कि ''पं0 नेहरू राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं पर बड़े गौरवान्वित थे कि भविष्य का नेतृत्व यहीं से आयेगा, देश की शक्ल बदल जायेगी। किन्तु मेरी राय में वह एक भयभीत व्यक्ति की तरह अंधेरे में सीटी बजा रहे थे।''

मूलतः कृषि उत्पादन तब चौपट हुआ जब पं0 नेहरु ने 19 जनवरी 1956 को राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में बोलते हुये कहा कि देश की उन्नति के स्त्रोत बड़े कारखाने हैं अन्य वस्तुओं का कोई महत्व नहीं है और उसी वर्ष 29 अगस्त को अमेरिका स रियासती दर पर पी0 एल0 480 के अधीन अन्न मंगाने का निर्णय लिया और कृषि उत्पादन को अनदेखा तथा महत्वहीन घोषित कर दिया। किन्तु दूसरी योजना के परिणामों ने नेहरू जी की आँखों पर पड़ा परदा उठा दिया और उन्हें सोचने पर बाध्य होना पड़ा कि मैंने और योजना आयोग ने प्राथमिकता के प्रश्न पर गलती की थी। उधर नेहरू के मित्र राष्ट्र चीन ने जहाँ से यह समाजवादी व्याख्या आयातित की गयी थी अपनी प्राथमिकता अप्रैल 1962 में बदल दी तब नेहरु जी ने 9 नवम्बर 1963 को राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में तथा पुनः 11 दिसम्बर 1963 को लोकसभा में अपनी गलती के लिये क्षमा माँगी। **''मैं बड़े कल कारखानों और अर्वाचीन तकनीकी ज्ञान का बड़ा प्रशंसक रहा हूँ, किन्तु देश की बेरोजगारी की समस्या इससे हल नहीं हुयी और आज मुझे रह–रहकर महात्मा जी की याद आती है। मेरी और योजना आयोग की गलती से देश की आर्थिक सम्पत्ति का बहुत बड़ा भाग चन्द लोगों के हाथों में केन्द्रित हो गया, मैं लोकसभा को वचन देता हूँ कि भविष्य में ऐसी गलती नहीं होगी।''**

इस तथ्य को ही चौधरी साहब उठाते हैं कि नेहरु ने महात्मा के ठीक विपरीत काम करके देश चौपट कर दिया तब याद किया कि गलती हो गयी। काश! उन्हें और लम्बा जीवन मिलता तो अपनी सभी नीतियां बदल लेते। किन्तु उनके बाद शासन संभाला उनकी बेटी ने जिसे नीतियों गुण–दोषों से कोई सरोकार न था उसे यह तक याद न रहा कि उसके पिताजी ने अंतिम दिनों में अपनी गलती खुलकर स्वीकार की थी और क्षमा माँगी थी देशवासियों से। उनकी मान्यता है किनेहरु के समाजवाद से देश में पूँजीवाद बढ़ा, जो नेहरू नहीं चाहते थे किन्तु यह तो किसी नीति की सफलता, असफलता के परिणामों से जाना चाता है। पूँजीवाद से आर्थिक संकट बढ़ता है जिसका रूप 1974 में भयंकर महँगाई के रूप में सामने आया। महंगाई और मन्दी, पूँजीवादी अर्थसंकट की एक ही तलवार की दो धारें हैं, आर्थिक संकट पर काबू न पाने पर शासन का रूप तानाशाही बन जाता है जो देवी इंदिरा ने किया। यूरोप के हिटलर फासिज्म का जन्म पूँजीवादी संकट की पराकाष्ठा का परिणाम था।

नेहरु की इस नीति की आलोचना के कारण आज के कुछ कथित बुद्धिजीवी, चिंतक व राजनीतिज्ञ चौधरी को प्रतिक्रियावादी और समाजवाद का दुश्मन कह देते हैं लेकिन इन लोगों ने कभी

यह सोचने की चेष्टा नहीं की कि चौधरी एक व्यवहारिक राजनीतिज्ञ हैं, आदर्शवादी, ढकोसलावादी नहीं। उनमें विचारों की कट्टरता है लेकिन समझौतावादी हैं। समाजवाद का विरोध करते हुये वह गाँधीवादी समाजवाद को स्वीकार करते हैं और उसके प्रवक्ता हैं। इस पर देश के सभी राजनीतिज्ञ लगभग एकमत हैं। कि बड़े उद्योगों और सार्वजनिक क्षेत्र की प्रौढ़ता के साथ औद्योगिक प्रगति के बुनियादी आधार कृषि क्षेत्र की वरीयता आवश्यक है। मिश्रित पूँजी का किसी दल में विरोध नहीं है। तब अंतर कहाँ? नेहरू नीति का आदर्श यह था कि सार्वजनिक क्षेत्र क्रमशः निजी क्षेत्र पर अपना हस्तक्षेप करता जायेगा जिसे राष्ट्रीयकरण की प्रगति मान लो यही उनका समाजवादी रूझान था। उधर गाँधी जी के ट्रस्टीशिप की परिभाषा करते हुये जे0पी0 ने कहा था कि इसका अर्थ यह नहीं है कि मजदूरों के प्रति मालिकों का हृदय परिवर्तन होकर उनमें बाप और संतान का सा भाव पैदा हो जायेगा। तदनुसार मालिक मालिक बना रहेगा, मजदूर भी उसी रूप में कार्यरत होगा। उत्पादन में पूँजी और श्रम दोनों का प्रतिनिधित्व है अतः मालिक मजदूर दोनों ही उत्पादन के ट्रस्टी हैं। इस प्रकार नेहरू का समाजवाद, गाँधी का ट्रस्टीशिप सिद्धांत या समाजवाद की अन्य कोई व्याख्या या रूपान्तर हो, कोई भी अमिट नहीं है। व्यवहारिक नीति ही अपनाई जाती है जो बहस मुबाहिसे के प्रजातांत्रिक तरीके से निर्धारित होती है। सार्वजनिक क्षेत्र के अस्तित्व पर किसी को विरोध नहीं है मगर सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र का विभाजन बहस का मुद्दा है। किन्तु कांग्रेस में उस समय बहस का प्रश्न ही नहीं था अतः जो पं0 नेहरू करते वही नीति बन जाया करती थी; और यही स्थिति विस्फोटक बनती गयी। यदि व्यवहारिक नीति से दूर हटकर मात्र समाजवाद में आथा रखना ही प्रगतिशीलता है तो महात्मा गाँधी को भी कभी समाजवादी नहीं माना गया वह प्रतिक्रियावादियों के रहनुमा हो गये जैसे हमारे कट्टर कम्युनिस्ट मित्र उनको कहते रहे थे। फिर पं0 नेहरू के समाजवाद के प्रति कम्युनिस्ट पार्टी और सोशलिस्ट पार्टी का भी इतिहास साथ नहीं रहा अर्थात् वह भी सच्चे समाजवादी नहीं माने गये। सुभाष बाबू ने जब काँग्रेस के विरुद्ध मोर्चे बन्दी की तो वह प्रगतिशील थे जब उन्होंने स्वतन्त्रता के लिये आत्म बलिदान कर दिया तो वह कम्युनिस्ट मित्रों द्वारा प्रतिक्रियावादी घोषित कर दिये गये।

चौधरी के मतभेदों पर लोग उन्हें कोसते रहे किन्तु वह यह नहीं सोचने की चेष्टा नहीं करते कि गाँधी, नेहरु और सुभाष को जनता समान रूप से सम्मान देती है; फिर क्या उनमें मतभेद नहीं थे? उनकी राष्ट्र भक्ति, जन सेवा के पृथक देवता स्वरूप बन गया; तब आज इन आलोचकों पर हंसी आती है जिन्होंने समाजवाद किताबों में देखा है और कलम की नोंक से ही राष्ट्रीय भारत को समाजवादी मुल्क में परिणित करने पर आमादा हैं। किसान जीवन की कठिनाई की तो जानकारी नहीं, मजदूरों की रहनुमाई करना उनका एक शौक मात्र है; शेखचिल्ली के मंसूबे उनकी कलम की लिखावट है। बड़ों की भूलें बड़ी होती हैं, महात्मा गाँधी की भूल हिमालय जैसी हो जाती है– शुद्ध आत्मा उसे स्वीकार कर लेती है। पर टट्पूँजिये राजनीतिज्ञों के लिये यह प्रतिक्रियावाद बन जाता है और इस कारण जब व्यक्तित्व पर हमला किया जाता है तो वह छोटे मुँह बड़ी बात अपने मुँह मियाँ मिट्ठू हो जाती है।

चौधरी साहब के नेहरु से मतभेद व्यक्तिगत धरातल पर कहीं नहीं रहे। किन्तु जो भी नीतिगत प्रश्न उनके बीच दीवार बने वह एकदम सटीक व व्यवहारिक हैं जैसे आज की अंग्रेज़ियत और भाषा के प्रश्न पर उनका कहना है– 'पहले सभी भारतीय परिवारों में बंगाली, कन्नड़, तमिल, मलयालम आदि विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में लोग बात करते थे, उसी रूप में कार्यालय में भी, किन्तु स्वाधीनता के बाद पंडित जी ने अंग्रेजी को इतना महत्व दिया कि आज हर अधिकारी केवल अंग्रेज़ी में बात करना अच्छा मानता है। यदि कोई तमिल, गुजराती ही जानता हो तो कार्यालय में उसे बेबकूफ माना जाता है; यह स्थिति यहाँ तक आ गयी है कि अब इन्हीं परिवारों में अपनी मूल भाषा के स्थान पर दैनिक बोलचाल की भाषा तथा पढ़ाई का माध्यम बच्चों के लिये अंग्रेजी रखना अच्छा माना जाता है। स्वयं पं0 नेहरु किसी व्यक्ति को धोती कुरता पहनकर हिन्दी या अन्य क्षेत्रीय भाषा में बात करने पर ''गँवार'' का सम्बोधन देते थे तथा फड़ाफड़ अंग्रेजी बोलने, सूट–बूट पहिनने, कार, स्कूटर, फ्रिज, कूलर आदि रखने पर अच्छे स्तर का व्यक्ति मानते थे। क्या यह सामान्य परिवार का छोटी या माध्यम नौकरी पेशे वाला आदमी बिना भ्रष्टाचार किये रख सकता है। चौधरी के उपरोक्त तथ्यों में कितनी व्यवहारिकता है, क्या यह तथ्य अकाट्य नहीं है? फिर भी चौधरी साहब का कहना है कि पंडित नेहरु न तो भ्रष्ट थे न भ्रष्टाचर पसंद करते थे, किन्तु वह भ्रष्टाचार को देश से समूलनष्ट करने के लिए प्रतिबद्ध नहीं थे। उनका कहना था यदि कोई मंत्री भ्रष्ट है या कांग्रेसी भ्रष्ट है तो इस बात को फैलने मत दो यदि बात फैली तो दल की बदनामी होगी और दल तथा देश कमजोर होगा, अतः भ्रष्टाचार अंदर ही अंदर पनपता रहा और कोई व्यक्ति दंडित नहीं हुआ। क्योंकि नेहरु का कहना था कि यह गन्दी और उथली राजनीति है। इस प्रकार बड़े–बड़े अधिकारी गलती करते रहे किन्तु उनकी जाँच तक नहीं कराई गयी। यदि कोई व्यक्ति उनका निकट का वफादार साथी हो उसको दोषी भी माना गया हो यहाँ तक कि वह बाहर से कुछ वस्तुयें लाने के अपराध में सी.बी.आई. ने पकड़ा हो तो विदेश स्थित राजदूत की मात्र इस संस्तुति पर निर्दोष करार कराया गया कि वह आपका अपना आदमी है। इसी प्रकार चारित्रिक दोष को पंडित जी उसका व्यक्तिगत जीवन कहकर टाल दिया करते थे–

षैंज बंद ? कव पद जीपे उंजजमतघ जीम चतपअंजम सपमि व िंद पदकपअपकनंस पे कपमिितमदज तिवउ ीपे चनइसपब सपमिण्

लेकिन चौधरी साहब का चरित्र और जीवन एक खुली किताब रहे हैं उस पर कहीं काला धब्बा तक नहीं लगा। अतः उनका कहना है कि मानव जीवन के हिस्से (ब्वउचंतजमउमदज) नहीं होते, एक राजनीतिज्ञ के व्यक्तिगत जीवन नाम की कोई चीज नहीं होती वह सम्पूर्णतः जनता को समर्पित होता है। अतः हम पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण इन अर्थों में नहीं कर सकते हैं कि वहाँ व्यक्तिगत जीवन सार्वजनिक या राजनैतिक क्षेत्र में आड़े नहीं आता क्योंकि वहाँ लोग बहुत शिक्षित हैं; चौधरी यह सब गलत मानते हैं।

इस प्रकार चौधरी साहब पं. नेहरु को अपना नेता मानते हुये भी उन मुद्दों पर मतभेद रखते हैं जो वास्तविकता के इर्द–गिर्द घूमते हैं उनके लिये प्रमाणिक तथ्य भी प्रस्तुत करते हैं जो अकाट्य हैं।

किन्तु फिर भी उनका मूलतः मतभेद आर्थिक नीति पर रहा है जिससे देश की अर्थव्यवस्था चौपट हुयी और आज यह दिन देखने पड़ रहे हैं। यही नहीं कि उन्होंने नेहरु की आलोचना मात्र की हो इसके विकल्प में बहुत सुदृढ़ आर्थिक नीति भी प्रस्तुत की है जो बापू की मूल नीति के समरूप ग्रामीण भारत के विकास के संदर्भ में है। उनका कहना है कि योजना में कृषि को प्रथम दर्जा देना और मशीनीकरण को जहाँ तक संभव हो रोकना हमारा लक्ष्य है। इसके लिये ग्रामीण विकास प्रोत्साहन और आत्म–निर्भरता को इस सीमा तक बढ़ा देना कि विदेशी पूँजी और तकनीकी के अभाव में भी काम किया जा सके। उन्होंने सरकार में आते ही इस ओर कदम बढ़ाया भी था उनका कहना है कि ग्रामीण के लिये बेरोजगारी व अर्धबेरोजगारी जल्दी समाप्त करनी होगी। आर्थिक नीति का उद्देश्य कुल राष्ट्रीय उत्पादन को बढ़ाने से बदलकर, उत्पादक रोजगार बढ़ाने का करना होगा। वित्तीय व औद्योगिक आत्मनिर्भरता को बढ़ाने के लिये मौजूदा औद्योगीकरण जो नेहरु की देन है को छोड़कर उस अनुकूल मार्ग पर बढ़ना होगा जिसे गाँधी ने दिखाया था।

पं. नेहरू के आर्थिक दृष्टिकोण को महत्वहीन तब तक नहीं माना जाता जब तक कि उसका विकल्प स्वरूप चौधरी ने ठोस आर्थिक कार्यक्रम प्रस्तुत न किया होता। यही कारण है कि आज नेहरु का अंधानुकरण करने वाले तिलमिला गये और चौधरी चरणसिंह एक भारी व्यक्तित्व तथा गाँधी के सच्चे प्रवक्ता के रूप में उभरकर आगे आये।

8. हरिजन समस्या और जातिवाद

दिल्ली में जनता सरकार के पदारूढ़ होते ही देश में हरिजनों पर अत्याचार नामक जर्बदस्त तूफान उठा, यह तूफान इतना राजनीतिक रंग में रंगा हुआ था कि उसे मात्र कुछ बुद्धिजीवी ही पहचान सके कि वास्तविकता क्या है? चूँकि हरिजन स्वयं बहुत कम शिक्षित हैं अतः अखबारों की सुर्खियों में जब यह छपते देखा तो छुटभैये हरिजन नेता और उनका सामान्य जन आग बबूला हो उठा और बयानों द्वारा आरोप प्रत्यारोप बाजी का सिलसिला शुरू हुआ। कांग्रेस जो 30 वर्ष तक अनवरत शासन में रही थी सत्ता विक्षोह से ''जन विन मछली की गति'' से ग्रस्त थी अतः उसने आग में घी का काम किया तथा इस तूफान को उठाने से लेकर अपनी चरम सीमा तक पहुंचाने का श्रेय भी प्राप्त किया। इस तूफान की जड़ में दो कारण ही प्रमुख थे–

प्रथम तो कांग्रेस को सत्ता विक्षोह के कारण कुछ बहाना चाहिये था। जिसे लेकर वह जनता सरकार के हाथ से बागडोर खींचने का कोई मार्ग अपना सके और अपने शीर्षस्थ नेताओं द्वारा किये गये कुकृत्यों को उजागर होने से रोक सकें। दूसरा पहलू स्वयं हरिजनों की भावनाओं से सम्बन्धित था और वह था देश के प्रधानमन्त्री पद के झगड़े का गया बीता किस्सा।

जब बाबू जगजीवन राम ने कांग्रेस से त्यागपत्र देकर प्रजातांत्रिक कांग्रेस की स्थापना की तो भावनात्मक रूप से देश के 85 प्रतिशत हरिजन बाबूजी की आवाज के साथ कांग्रेस से विरोध लेकर जनता पार्टी के साथ हो लिये थे; और लगभग इतने ही प्रतिशत मतदाताओं ने जनता पार्टी को समर्थन भी दिया था, किन्तु उनके समर्थन की तह में जो रहस्य छिपा था, वह मात्र यही कि अब बाबूजी प्रधानमन्त्री पद प्राप्त कर सकेंगे। किन्तु समर्थन और पद के अन्तिम चयन की प्रक्रिया सम्पन्न होने तक चौधरी चरणसिंह की इस शर्त को बाबूजी ने पूरा नहीं किया कि सी.एफ.डी. को जनता पार्टी में विलय कर दिया जाये। चरणसिंह जी का कहना था कि सी.एफ.डी के पृथक रहने पर नैतिक और सैद्धान्तिक रूप से मैं आपको प्रधानमन्त्री पद हेतु समर्थन नहीं दे पाऊँगा। किन्तु बाबूजी ने यह शर्त स्वीकार न की। इस घटना को चरणसिंह विरोधी खेमें ने अच्छा खासा तूल दिया और यहाँ तक प्रचार किया कि चरणसिंह एक हरिजन नेता के प्रधानमन्त्री पद पर बैठने के खिलाफ थे। इस अफवाह को दिल्ली से लेकर गाँव के हर गलियारे और नगर के हर मुहल्ले तक जोरों से घसीटा गया, और देश के प्रत्येक हरिजन के दिल में इस बात को बिठाने का हर संभव हथकंडा प्रयोग किया गया। यद्यपि इसका मात्र उद्देश्य चरणसिंह जी को बदनाम करना था ताकि आगे मोरारजी के बाद इस पद के लिये चौधरी की वरीयता व योग्यता को नकारा जा सके।

श्री सिंह के पीछे हरिजन विरोध होने का एक अन्य कारण उनकी परम्परागत व दैनिक परिस्थितियाँ भी रहीं। चूँकि वह एक हिन्दू जाट परिवार में पैदा हुये और स्वभावतः उस क्षेत्र के जाट परिवार हर तरह से सम्पन्न और कड़े स्वभाव के होते हैं, इससे पूर्व वह लोग जमींदार भी थे अतः उनकी यह भावना अधिक परिवर्तित नहीं हो पायी है। यदि कुछ लोगों ने अपने को परिवर्तित किया है

तो उनके प्रति सामान्य जनता की अपनी भावनायें व मान्यतायें नहीं बदली है। कुल मिला कर यह लोग इस बात के लिए विख्यात ही हैं कि छोटे तबके के साथ इनका व्यवहार पूर्ववत शोषण और उत्पीड़न पूर्ण है। दुर्भाग्य से चौधरी साहब उसी क्षेत्र के इसी प्रकार के परिवार में पैदा हुये और बद अच्छा बदनाम बुरा की भावना के शिकार बनाये गये। वस्तुतः उन्होंने हरिजनों के हित में जितना अपने जीवन में किया है सम्भवतः डॉ0 भीमराव अम्बेडकर और महात्मा गाँधी के अरिरिक्त किसी ने भी नहीं किया; इसका विवेचन मैं आगे करूँगा।

अब मैं यह बताना उचित समझता हूँ कि आजादी के 30 वर्षो बाद भी हरिजनों के शोषण, उत्पीड़न की कहानी हमने जैसी सन् 1947 में देखी थी लगभग वैसी ही आज भी है तो आखिर यह सब क्यों है? इसमें चरणसिंह की जिम्मेदारी कितनी है और उनके विरोधियों की कितनी है?

हरिजनों की शोषण गाथा के मूलतः दो पहलू हैं सामाजिक और आर्थिक। हमारे देश में वर्ग संघर्ष, जिसका जिक्र कभी–कभी जयप्रकाश नारायण भी कर देते थे आर्थिक आधार प्राप्त नहीं कर सका जो कि राजनीति की एक विचारधारा है। उसमें आर्थिक और सामाजिक दशा को प्रतीक बनाया जाता है, लेकिन उसका मंडप जाति बिरादरी सम्प्रदाय की ध्वजा पताकाओं से सजाया जाता है। हिन्दू वर्ण व्यवस्था का निर्माण जिस काल में हुआ उस समय सामाजिक प्रश्न ही मुख्य था। उसके सामाजिक रचियताओं को ब्राह्मण कहा गया– ''ब्राह्मणों मुखामासीत'', क्योंकि वाणी मुख से ही प्रस्फुटित होती है। लेकिन राजसत्ता से वह सदा अलग रहे। सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन होते हैं। अतः तत्कालीन महान् ग्रंथों मनुस्मृति और तुलसी रामायण को आज घोर प्रतिक्रियावादी लेखकों की देन भी कह दियाजाता है क्योंकि उनके कुछ अंश सामाजिक जीवन के विकास और समानता में गतिरोध पैदा करते हैं अतः वह आज उनके कुछ आर्थिक और सामाजिक शोषण के लिये पुरातन का प्रमाण भी बन गये हैं।

''ढोर गंवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी।''

पूजहि विप्र शील, गुण हीना, शूद्र न गुण गण ज्ञान प्रवीणा।

(तुलसी कृत रामचरितमानस)

''नीच व्यक्ति (वर्तमान में हरिजन) ब्राह्मणादि उत्कृष्ट वर्ण के साथ आसन पर बराबर बैठना चाहे, तो राजा को चाहिये कि उस नीच की कमर दगवाकर, उसे देश से निकाल दे, या उसके नितंब का मांस कतरवा ले (8/281) सेवा परायण शूद्र को जूठा अन्न, पुराने कपड़े, विस्सार धान्य और फटा पुराना ओढ़न, बिछावन देना चाहिये।

(10/125 मनुस्मृति)

पुनश्चः इसी प्रकार हिन्दू धर्म का अश्वमेध यज्ञ करने वाले शंकर ने ''ब्रह्मसूत्र'' के अपने भाष्य में लिखा कि स्त्री और शूद्र को वेद नहीं पढ़ना चाहिये यदि वह सुने तो कानों में गर्म सीसा डाल दो, अगर जबान से उच्चारण करे तो जीभ कटवा दो, अगर वह पढ़–लिखकर विद्वान हो जाये, तो उसे फाँसी पर लटका देना चाहिये।

(10/3–35 से 38 तक)

''मनुस्मृति'' और ''ब्रह्मसूत्र'' के इन तथा ऐसे अनेक निर्देशों का पालन हिन्दू समाज अतिरिक्त उत्साह से करता रहा है। बौद्ध और जैन धर्मों ने सामाजिक वैमनस्य की इन दीवारों पर हमला तो अवश्य बोला एवं कबीर, रैदास जैसे संत कवियों के कारण पिछड़ी जातियों में आत्म विश्वास भी जगा किन्तु जाति व्यवस्था से त्रस्त यह समाज की व्यवस्था इतनी बुरी तरह तोड़ डाली गयी थी कि उसका हल आसान न था। हम देखते हैं कि हिन्दू समाज में चार वर्णों के साथ प्रत्येक की अनेक जातियाँ और फिर उनकी उपजातियाँ हैं। जाति व वर्ग दो पृथक विषय हैं। ऐतिहासिक आधार पर जाति का आधार जन्म को एवं वर्ण का आधार गुण कर्म को माना गया लेकिन आज की स्थिति में प्रश्न यह पैदा होता है कि जो लोग योग्य व विद्वान हैं वह निम्न वर्ण में ही क्यों रहें? या जो अयोग्य हैं किन्तु जन्म से उच्च हैं वह निम्न वर्ण में क्यों नही आते?

यदि हमें सामाजिक व्यवस्था को सही रूप देना था तो इन दोनों ही परिस्थितियों में निम्नलिखित दो में से एक कार्य करना था।

1. योग्यता व अयोग्यता के आधार पर आदर्श वर्ण व जाति व्यवस्था की स्थापना की जाती अथवा

2. जातिवाद व वर्ण–व्यवथा को पूर्णतः समाप्त कर जातिविहीन, वर्गहीन समाज की रचना की जाती जिसमें सबके समान अधिकार व कर्त्तव्य होते तथा व्यक्ति का व्यक्ति से भेद समाप्त हो जाता।

लेकिन तत्कालीन समाज के आलमबरदारों एवं धर्म के ठेकेदारों ने दोनों में से एक भी कार्य पूरा नहीं किया। प्रतिफल स्वरूप विषमता की दीवार ऊँची उठती चली गयी और उसने सामाजिक जीवन को पंगु बनाकर छोड़ दिया। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने अपने गहन अध्ययन एवं लम्बे अनुभव के आधार पर यह उद्घोषणा की कि ब्राह्मणों ने समाज का रूप बिगाड़ा है अतः अब उनके विरुद्ध संगठित होकर समस्त दलित, उत्पीड़ित वर्ग को आगे आना चाहिये और जाति व्यवस्था को तोड़कर नये समाज की रचना करनी चाहिये।

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये सर्वप्रथम डॉ0 अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म के ठेकेदारों से अपील की कि वह अपने धर्म में संयम के साथ परिवर्तन लायें चूँकि यह धर्म एक ''नियम संहिता'' है जिसमें हर तरह की राजनैतिक, सामाजिक व आर्थिक नियम मिलते हैं किन्तु इसमें वर्णित नियमों में असमानता है। यह सबके लिये प्रत्येक स्थान व समय पर समान रूप से सच्चा धर्म नहीं है। जब डॉ. अम्बेडकर प्राचीन असभ्य व कलुषित रीति–रिवाजों की धज्जियाँ' उड़ाते थे तो तत्कालीन धर्म प्रचारक पंडित जी घर–घर जाकर प्रचार करते थे कि यह तो धर्म का नाश करना चाहता है। हमारे हिन्दू धर्म और भगवान द्वारा निर्मित मान्यताओं का विरोधी है अतः सभी उच्च वर्ण संगठित होकर इसका विरोध करें, लेकिन वस्तु स्थिति कुछ और ही थी।

डॉ. अम्बेडकर चाहते थे कि आधारभूत हिन्दू समाज के जातीय स्वरूप में ''मौलिक परिवर्तन' किया जाये। अर्थात् नियमबद्धता, अंध–विश्वास, प्रकृतिवाद, पवित्रता, परम्परावाद को समाप्त कर सिद्धान्त पर आधारित धर्म को ग्रहण करना चाहिये जिसमें रीति–रिवाज रहन–सहन खान–पान शादी–विवाह

सभी में मौलिक परिवर्तन किया जा सके और मानवता, बौद्धिकता व नैतिकता पर आधारित समाज तैयार हो सके।

वस्तुतः हिन्दू समाज सुधारक अन्य स्त्री–पुरुषों को गुमराह ही नहीं करते वरन् वे स्वयं भी सही मार्ग को समझ नहीं पाते। उनको यह भी खोज करनी चाहिये कि हिन्दू शास्त्रों में कौन से नवीन मूल्य मिल सकते हैं जिनके द्वारा मनुष्यों के बीच शुभ सम्बन्ध कायम हो सके। अर्थात् हिन्दू धर्म में नवीन समाज की रचना के लियेसंदेश हैं किन्तु इन पंडित पाखण्डियों ने उस ओर आने का प्रयास नहीं किया। इसलिये डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दू धर्म के समाजसुधारकों से अपील की–''तुम्हें अपने धर्म को सैद्धान्तिक आधार देना चाहिये'' एक ऐसा आधार जो स्वतन्त्रता, समता एवं भ्रातृत्व से मेल खाता हो। संक्षेप में तुम्हें प्रजातन्त्र को आधार बनाना चाहिये, ऐसे धार्मिक सिद्धान्त जो स्वतन्त्रता, समता, भ्रातृत्व के अनुकूल हों यह आवश्यक नहीं कि आप उन्हें विदेशी लोगों की सहायता से प्राप्त करें, वह तो आपके उपनिषदों में ही मिल सकते हैं।

;।द मअवसनजपवद व ́िब्ज.क्तण ठण्त्ण ।उइमकांत.च्हम 76द्ध

देश से जातिवाद के खात्मे के लिये अनेक समाज सुधारकों ने विविध सुझाव दिये व तद्नुसार प्रयत्न भी किये, उन समस्त नियमों का सार इस प्रकार था– कुछ विचारकों का मत था कि पहले उपजातियों को नष्ट कर बड़ी जातियों में मिलाया जाये तत्पश्चात बड़ी जातियों के तोड़ने की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जाये और देश को एक जाति बना दिया जाये।

दूसरा मत था कि सभी जातियों में सामूहिक भोज व्यवस्था लागू की जाये ताकि आपसी भेद–भाव मिटाकर लोग निकट आ सकें। कुछ अन्य लोगों की मान्यता थी कि अन्तर्जातीय विवाह सम्बन्ध कायम किये जायें। इस प्रकार रक्त सम्बन्धों (ठसववक तमसंजपवदेीपच) द्वारा जातिवाद का अन्त स्थायी रूप से हो कता है जहाँ लोग परिवार सम्बन्धों से जुड़ सकेंगे।

डॉ. अम्बेडकर ने तीनों मान्यताओं का गहन अध्ययन किया और विचार रखा कि प्रथम दो मत पूर्णतः अनुपयुक्त हैं क्योंकि भारत की सभी छोटी जातियों में मौलिक विविधता के कारण उन्हें बड़ी जातियों में स्थान नहीं मिलेगा। इस प्रकार यह प्रक्रिया छोटी जातियों तक सीमित रहेगी या आगे पुनः विखण्डित हो जायेगी। जहाँ तक अन्तर्जातीय भोज विधि का प्रश्न है वह एक क्षणिक सम्पर्क की बात होती है इसमें स्थायित्व नहीं है फिर आज भी ग्रामीण भारत में अनेक जातियों में सामूहिक भोज व्यवस्था होते हुए भी उनमें जातीय भिन्नता बनी हुई है। इस सन्दर्भ में महात्मा गाँधी ने भी देश के पैमाने पर सामूहिक भोज आयोजित कराये थे किन्तु उसका कोई स्थायी हल नहीं निकल सका और जातिगत विद्वेष बरकरार रहा। अतः डॉ. अम्बेडकर के अनुसार यह दोनों विचार तार्किक किन्तु अव्यवहारिक एवं अप्रभावशाली हैं।

अन्तर्जातीय विवाह सम्बन्धों को डॉ. अम्बेडकर ने महत्वपूर्ण एवं स्थायी समाधान की खोज बताया। उनकी मान्यता थी कि **''रक्त सम्बन्धों के द्वारा ही पृथकता, घृणा, ऊँच नीच आदि भावनाओं का**

अन्त हो सकता है। हिन्दू समाज जातिवाद के कारण अनेक सामाजिक इकाइयों में विभक्त है। अन्तर्जातीय विवाहों का होना अत्यन्त आवश्यक है।''

''इस विधि का स्वाभाविक प्रभाव यह होगा कि सभी वर्ग एवं जातियाँ स्वतः ही अन्तर्जातीय भोज आदि के लिए तैयार रहेंगी। इस दृष्टि से अन्तर्जातीय भोज से अन्तर्जातीय विवाह कहीं अधिक प्रभावशाली एवं लाभप्रद रहेंगे। लेकिन दो, एक विवाह से काम नहीं चलेगा अधिक लाभ उस समय होगा जब इस विधि को एक विस्तृत सामाजिक स्तर पर सम्पन्न किया जायेगा। भोज एवं विवाह समाज की सामान्य बातें बननी चाहियें, ताकि सभी जातियाँ शीघ्रातिशीघ्र एक हो जायें और सामाजिक विघटन क्रियायें समाप्त हो जायें।''

¼An evolution of Cast— Dr. B. R. Ambedkar 56-58½

लेकिन आज प्रश्न यह आ खड़ा होता है कि यह परिवर्तन होते क्यों नहीं हैं, जबकि हमारे राष्ट्रीय विद्वान महात्मा गाँधी, पं. नेहरु, डॉ. अम्बेडकर तक के सभी नेतागण इस तथ्य की वास्तविकता को समझ चुके थे कि यह भौतिक परिवर्तन से नहीं बल्कि मनोवैज्ञानिक परिवर्तन लाने पर विनष्ट किया जा सकता है। यह सामाजिक बुराई है जिसके भयंकर परिणाम हम देखते आ रहे हैं और यह कोढ़ सामाजिक जीवन में अधिक घृणा व वितृष्णा का वातावरण बना रहा है, लेकिन घट नहीं रहा है। मेरे दृष्टिकोण से इनके जो कारण हैं– प्रथम तो हिन्दू समाज में जाति व्यवहार के नियम उनके धर्म की देन हैं और यह धार्मिक भावनायें और धारणायें जातिवाद के ज़हर को फैलाती हैं। यद्यपि जाति भौतिक बन्धन नहीं है, मात्र एक मानसिकता है जिसमें देवी–देवताओं, धार्मिक ग्रन्थों, वेदों व शास्त्रों का उद्धरण जब हमारे समाज के ठेकेदार पंडित जी समाज के विशेषकर अशिक्षित या अर्धशिक्षित लोगों के बीच लेकर जाते हैं और अन्धविश्वासों में आबद्ध जनता को गुमराह करते हैं तो जनता की पूर्वाग्रह ग्रस्त भावनाओं को बल मिलता है और वह चन्द शिक्षित लोगों द्वारा जातिवाद तोड़ो आन्दोलनकारियों को धर्म विरोधी, अनीश्वरवादी और कलयुगी के रूप में अभिहित करते हुए ईश्वर प्रदत्त (दैवीय) नियमों के विरुद्ध न जाने को बाध्य हो जाते हैं। चूँकि सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए बौद्धिक एवं नैतिकता के मापदण्ड ऊँचे बनाने होते हैं, किन्तु जब धार्मिक पागलपन एवं पवित्रता जैसी संकीर्ण मनोवृत्ति समाज में अधिक बलवती बन जाती है तो फिर वह बौद्धिक व प्रगतिशील प्रवृत्तियों को निरुत्साहित कर देती है। इस प्रकार यह भारतीय हिन्दू समाज आज तक अनेक धार्मिक दूषित धारणाओं से आबद्ध धार्मिक ग्रन्थों व शास्त्रों में वर्णित जातिवाद का शिकार बना हुआ है। अतः इसमें परिवर्तन के लिए सबसे पहला और मौलिक परिवर्तन यह होगा कि हम उन शास्त्रों और धर्म ग्रन्थों से दैवीय एवं पवित्रता सम्बन्धी धारणाओं एवं सामाजिक दण्डों से मुक्त करायें, जो ऊँच, नीच, छुआछूत आदि मानव को मानव से घृणा करने का सन्देश देती हैं। जब तक समाजको इस भय से मुक्त नहीं कर दिया जाता तब तक हमारे सारे प्रयास चाहे वह सामूहिक भोज के हों, चाहे आरक्षण के हों अन्तर्जातीय विवाह सम्बन्धी, वह नाकारा साबित होंगे। क्योंकि यह भावात्मक एकता को बनाने में बाधक तत्व बन गये हैं। डॉ. अम्बेडकर ने स्वयं लिखा

है कि ''धार्मिक शास्त्रों'' के प्रति पवित्रता की भावना नष्ट की जाये, क्योंकि हिन्दुओं के कर्म एवं व्यवहार उनकी धार्मिक धारणाओं के ही परिणाम हैं, शास्त्र मनुष्य को अमुक व्यवहार करने के लिए बाध्य करते हैं। हिन्दू अपने व्यवहार को उस समय तक नहीं बदल सकते, जब तक शास्त्रों के प्रति पवित्रता के भाव का अन्त नहीं किया जायेगा, उनका व्यवहार उनके धार्मिक ग्रन्थों पर ही आधारित है।''

¼An evolution of Cast— Dr. B. R. Ambedkar 59½

इस प्रकार डॉ. साहब ने अत्यन्त उपयोगी व व्यावहारिक विचार रखे किन्तु कुछ लोगों ने उन्हें हिन्दू धर्म विरोधी करार दिया और सामान्य जनता से आर्थिक लाभ उठाने वाले पण्डाओं ने उनके लिए अपशब्दों का प्रयोग करते हुए कहा कि वह हिन्दू धर्म को नष्ट कर विधि के विधान को परिवर्तित करने और एक जाति विशेष को लाभ पहुँचाने के लिए हमारे वेद शास्त्र और ऐतिहासिक नीतियों पर कुठाराघात कर रहे हैं। यही नहीं जब महात्मा गाँधी ने भी हरिजनोत्थान के लिए आदर्श रखे तो उनका भी समाज ने खुला विरोध किया एवं मानसिक तथा भौतिक यातनायें दी गयीं किन्तु महात्मा जी कदाचित विचलित न हुये और आज़ादी प्राप्त होने के बाद भी अपने प्रयत्नों को जीवन की अन्तिम साँसों तक जारी रखा। किन्तु **आज़ादी के बाद जिन लोगों के हाथों में नेतृत्व आया वह अने स्थायित्व के लिये व्यावहारिकता से दूर हट गये और वोट बटोरने की राजनीति शुरू हुयी। इस कालान्तर में हरिजनों को नौकरियों में आरक्षण देने का कार्य चलाकर कांग्रेस के ढाँचे को मजबूत बनाया गया किन्तु सामाजिक व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने का लेशमात्र भी प्रयास नहीं किया गया।** मेरा निश्चित मत है कि यदि सामाजिक व्यवस्था को बदले जाने के लिये पं. जवाहर लाल नेहरु ने क़ानून का प्रश्रय लिया होता तो उस समय पं. नेहरु में देश की जनता की इतनी गहरी आस्था थी कि वह क़ानून आज के विखंडित, दूषित सामाजिक ढाँचे को तोड़कर देश की सही सामाजिक तस्वीर तैयार कर पाता। किन्तु कटु सत्य यह है कि पण्डित जी निर्णय लेने में कतरा रहे थे और पार्टी हित की बात पहले सोचकर सामाजिक हित का ख्याल बाद में किया करते थे। इसकी प्रामाणिकता उस पत्र व्यवहार से ज़ाहिर होती है जो तत्कालीन उ. प्र. सरकार के मंत्री के रूप में चौधरी चरण सिंह जी ने पं. नेहरु के साथ किया था। पत्र व्यवहार इस प्रकार था–

My dear Panditji,

It is after a long time and with great hesitation indeed, that I write this letter to you.

....

....

I make bold to offer a suggestion, which I have been recomending in a feeble way in my own sphere for the last six years or so. In modern times cast comes in the life of an individual only at the time of marriage. So if the evil has

to be tackled successfully, steps have to be taken which will rob the cast of its relevence or significance in main age. That is the evil has to be talked at the source. While laying down rules for recruitment to services. We prescribe all sorts of qualifications in order to ensure that a man, fit suitable for the job alone gets in. These qulifications have only his mind and body in view. But there is not least laid down to measure his heart- to find out how large his sympatheis are. Whether, he will be able to act impartially; whether, his heart is big enough to contain all those whom he will have to deal in the course of his official duties, etc.

In my opinion, in the conditions of our country this test will be fullfilled in a large measur if we require the candidates at least for gazzetted jobs in the first instance, to marry outside the narrow circle of their own cast. By enacting such a provision we will not be compelling anybody to become a graduate today, which is the educational qualification required for many a Government jobs. It will not at all be difficult to secure such youngman in adequate numbers. Today, young boys and girls receiving education in our colleges are all prepared for this step. I would lay down the same qualification of the marriage being an intercaste will apply only to marriages that take place after a certain date. Say 1st January 1955. An unmarried man will be free to enter the services or the legislature but if later on, he marriage inside his caste he will have to resign further for services under the union; we may say that marriage in a different longuistic group will entitle a candidate to a preferential claim. This will be all the more desirable in as much as longuistic states are now clearly in the offering. Such provisions should not offened the feelings, even of orthodox people, for anuloma marriages have been sanctioned by our Shastras also. In fact, we will be converting the present day castes into so many gotras and discouraging a man'smarriage in the gotras of his father.

If an article to this interest is inserted in the constitution, India's greatest social evil and to use Rajaji's aphosism. India's Enemy No. 1, would have been

laid to rest within a period of ten years. The country will never become strong unless caste is rooted out.

....

....

With respect,

Your's

Charan Singh

चौधरी साहब के इस पत्र का उत्तर पं. नेहरु ने 27 मई 1953 को शिमला से अपने कैम्प ऑफिस द्वारा भेजा, जिसके महत्वपूर्ण अंश इस प्रकार हैं–

My dear Charan Singh,

Thank you for your letter dated 22nd May, 1953

....

....

I also agree with you that finally caste will not go till intercaste marriages are not unusual and are looked upon as something which is quite normal.

....

....

But to say, as you do that we should try to compel people by constituional provisions and rules to marry outside their castes seems to me to offend against basic principle of individula freedom. Marriage is very much a personal affair and to take it out of the old routes of conventions and customs. What you suggest is definitely a retrograde step from that point of view, although it is meant to encourage a desirable tendency.

I cannot bring myself to think of the choice of marriage being controlled by legislation or by inducements offered. We have to create conditions otherwise.

Yours Sincerely,

Jawahar Lal Nehru

उपरोक्त पत्र व्यवहार से यह बात सिद्ध हो जाती है कि जातिवाद को समूल नष्ट करने के लिए हमारे तत्कालीन राष्ट्रीय नेतृत्वकर्ता या तो कम उत्सुक थे या जानबूधकर कोई महत्वपूर्ण कदम उठाने से डरते थे। इस प्रकार यह ज़हर आज तक विद्यमान है और अभी यह असमानता की खाई कितनी चौड़ी बनेगी, उसका अनुमान लगाना सम्भव नहीं, यदि वस्तुतः हम इसे मिटाना चाहते हैं तो डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की भावनाओं के अनुरूप तथा चौ. चरण सिंह के सुझावों को अमलीजामा पहनाना होगा। लेकिन मुझे आज की स्थिति में यह सपना साकार होता दिखायी नहीं देता और लगता है डॉ. अम्बेडकर की उस दिन की सोची गयी स्थिति आज भी यथावत् है। आज स्वाधीनता के 33 वर्ष बाद भी देश के अधिकांश लोगों की धारणायें उन प्राचीन धर्मग्रन्थों और किंवदन्तियों के आधार पर ज्यों की त्यों बनी हुई हैं। कथित उच्च वर्ग के लोगों में जहाँ इसके वर्ग को निम्न वर्ग या अछूत की संज्ञा आज भी दी जाती हो उनकी भावनाओं में तनिक भी हेर फेर न हुआ हो, तो इस मुल्क का क्या होने वाला है? मैंने अनेक स्थानों पर हरिजनों के विभिन्न वर्गों के लोगों से भेंट की और उनके अनुभवों को सुना तो लगता है कि हम आज भी वहीं हैं जहाँ 100 वर्ष पूर्व थे। कुछ उद्धरण प्रस्तुत करते हुये बात को आगे बढ़ा रहा हूँ–

एक हरिजन अधिकारी ने किराये पर मकान लिया एक वर्ष तक शान से मकान में रहा, मकान सवर्ण का था। एक वर्ष के बाद मकान मालिक ने मकान खाली करने को कहा, उसने कारण पूछा, तो उत्तर था मुझे आपके रहने सहने और नाम से ऐसा लगा था कि आप सवर्ण हैं अब मुझे ज्ञात हुआ कि आप हरिजन हैं, मैं अपने मकान में किसी महतर को नहीं रख सकता।

कभी पूर्वी उत्तर प्रदेश में बनारस, इलाहाबाद यात्रा कर रहा था। गाड़ी में एक पंडितजी भी यात्रा कर रहे थे जिनके हाथ में पानी से भरा कमण्डल था और हर दो–तीन मिनट के बाद कुछ बूँद वह अपने ऊपर डाल रहे थे और श्लोक पढ़ रहे थे। कारण पूछने पर पता चला कि गाड़ी में हर जाति का आदमी मिलता है उससे स्पर्श होता है अतः गंगाजल छींटे देते रहने से शरीर पवित्र होता रहता है।

इन घटनाओं से यह बात साफ हो जाती है कि जाति–पाँति समाज का हज़ारों वर्ष पुराना नासूर है, हमारे रक्त और संस्कारों में यह समा गया है तो इसे नष्ट होने में अभी समय लगेगा।

सन् 1946 में देश को आज़ादी मिली और सारे देश के कांग्रेस कार्यकर्त्ता इस बात का ढोल पीटते रहे कि सभी समान हैं और जो कमज़ोर हैं उन्हें समानताका स्तर दिलाने हेतु पुरजोर प्रयास किये जायेगें। इसी आधार पर आगे चलकर आरक्षण हर क्षेत्र में हरिजनों के लिये किया गया। किन्तु वस्तुतः कांग्रेस ने हरिजनों के लिये विगत तीस वर्षों के दौरान कितना क्या किया उसका भी संक्षिप्त लेखा जोखा पेश कर रहा हूँ।

हरिजन कांग्रेस के प्रति विशेष लगाव रखते रहे हैं और वोट देने के वक्त पर तो वह कांग्रेस से अलग होने की बात सोच भी नहीं पाते, चाहे जनता पार्टी की सरकार ने उनके लिये बहुत कुछ किया। इसके पीछे कुछ ऐतिहासिक कारण रहे हैं जिनमें सर्वाधिक हैं, महात्मा गाँधी का हरिजन उत्थान के लिये किया गया कार्य, दूसरे तीस वर्ष तक सत्ता में कांग्रेस का रहना (चूँकि समाज का कमज़ोर वर्ग सत्ता से विद्रोह की क्षमता नहीं रखता) अतः उसी पार्टी के साथ दलितों का अभ्यस्त हो जाना।

वस्तुतः हरिजन आज़ादी के बाद जिस स्तर पर थे आज या तो वहीं हैं अथवा उससे भी एक सीढ़ी नीचे उतर आये हैं यदि ऊपर चढ़े हैं तो मात्र सत्ता के नज़दीक के चन्द लोग। इस प्रकार मेरे ही नहीं हर बुद्धिजीवी के दृष्टिकोण में हरिजन समस्या का मूल स्रोत कांग्रेस ही कही जा सकती है क्योंकि उसके द्वारा चलायी गयी वोट डालने की प्रवृत्ति से हरिजनों का राजनीतिकरण नहीं हो सका। साथ ही कांग्रेस की रियायती राजनीति से सामाजिक–आर्थिक ढाँचों के वास्तविक लोकतन्त्रीकरण का मार्ग अवरुद्ध हुआ है। स्पष्टतः विगत तीस सालों में हरिजन कल्याण के नाम पर सरकारें इस वर्ग को भुनाती रही हैं और धन उचित घरों में जाने की बजाय राजनीतिक दलालों की जेबों में जाता रहा। वहीं ''दलितों के लिए आरक्षण'' ने इस वर्ग के पक्ष को काफी कमज़ोर किया है क्योंकि इन सुरक्षित स्थानों पर गरीब और योग्य दलित उम्मीदवार तो पहुँच न सके किन्तु चतुर दलित नेताओं ने इसका राजनैतिक इस्तेमाल किया। दूसरे दूसरी जातियाँ क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य आदि का दलितों से वैमनस्य भी बढ़ा। वस्तुतः आम दलित का उन चन्द ने अधिक नुकसान किया जो व्यवस्था का पिछलग्गू बनकर सुख सुविधायें प्राप्त करके चरित्र से उच्च वर्ण में शामिल हो गये। वह सरकारी 'ब्राह्मण' का दर्ज़ा पाकर गरीब हरिजन के मन में हरिजनो के प्रति सन्देह, ईष्या और तनाव पैदा करते रहे। वस्तुतः इस मुल्क में दो जातियाँ भरे पेट वाले और भूखे गरीब हैं, विडम्बना है कांग्रेस ने सालों से पिट रहे दलितों को आज तक शोषितों से भी नहीं जुड़ने दिया। उनकी अलग श्रेणी तैयार की गयी या हो गयी जिसके कथित नेता उनका राजनीतिक ब्लैक मेल करते रहे, बाकी दलित जलते, पिटते, कुटते रहे। आज भी गाँव के दलितों की पिटाई बढ़ रही है और शहर के खाते पीते राजनीतिक दलित नेता इससे लाभ उठाकर गरीबों के बीच घृणा और तनाव का माहौल तैयार कर रहे हैं। यही कारण है कि आज बाबू जगजीवन राम या बी. पी. मौर्या हरिजनों के नेता हो गये, चाहे उन्होंने हरिजनों के लिये कोई कुर्बानी नहीं दी और चौधरी चरण सिंह हरिजन विरोधी हो गये जबकि वह हरिजनों के हित में अपने छात्र जीवन 1925 से आज तक इतना करते रहे जितना अन्य किसी ने नहीं किया। यदि किसी गैर हरिजन को स्वाधीन भारत में हरिजनों के नेता की उपाधि मिली तो इन्दिरा गाँधी को क्योंकि यह छुट भैये हरिजन नेता समाज में श्री चरण सिंह के प्रति नफ़रत और घृणा तथा इन्दिरा के प्रति सहानुभूति पैदा करने में सफल रहे। यद्यपि इसका एक कारण यह भी रहा है कि चरण सिंह–जगजीवनराम बाबू के मार्ग में रोड़े थे और जाति के जाट थे अतः उस समय (आपात्काल के बाद) इन्दिरा को ही बाबूजी का दुश्मन माना गया था किन्तु चरण सिंह से बदला लेने के लिये कि बाबूजी के मार्ग से हट जायें, कल तक इन्दिरा के दुश्मन आज चरणसिंह के दुश्मन और इन्दिरा जी के मित्र बन गये। एक अन्य कारण यह भी रहा कि चरणसिह आदर्श व उसूलों की गाड़ी से नीचे उतरने से कतराये किन्तु इन्दिरा जी आदर्श उसूलों को बलाए ताक रखकर नाटकीयता का प्रदर्शन भी कर पाने में सफल रहीं।

वह हाथी पर चढ़कर बेलछी हो आयीं, पीड़ितों के साथ सहानुभूति जताने के लिए। उन्होंने सारा दोष जनता सरकार और गृहमन्त्री चरणसिंह के माथे मढ़कर आत्मसन्तोष तो कर लिया पर क्षण भर के लिये भी उन्हें लज्जा नहीं आयी। उन्होंने यह सोचने का कष्ट नहीं किया कि हरिजनों को ज़िदा

भूनने के पीछे कुछ महीनों के शासन का हाथ था या स्वयं उन देवी जी और उनकी कांग्रेस द्वारा पाली पोषी व्यवस्था की उपज थी। 2 जनवरी 1964 को उनके पिता पण्डित जवाहर लाल नेहरु दिल्ली नगर निगम के हरिजनों की सभा में आये थे तो वेदनापूर्ण स्वर में कहा था–''मुझे आपके सामने आने में शर्म आती है क्योंकि आपके साथ मेरी सरकार न्याय नहीं कर सकी।'' न्याय तो श्रीमती गाँधी ने भी नहीं किया किन्तु बेलछी में उनको शर्म नहीं आई, उनकी आवाज़ में कसक भी नहीं थी वरन् अहम् और ढिठाई थी।

जब वाराणसी में डॉ. सम्पूर्णानन्द की मूर्ति का उद्घाटन करते समय प्राचीन संस्कृति के वंशजों ने मूर्ति को गंगाजल से धोकर बाबू जगजीवनराम के स्पर्श दोष को दूर किया तो भी हरिजनों की हिमायती इन्दिरा गाँधी के मुँह से एक शब्द न निकला। यद्यपि उससे न तो संस्कृति, साहित्य दूषित हुआ न गंगाजल बल्कि दूषित उन संस्कृति के पाठक और गंगाजल चढ़ाने वालों की भावना है जिसको राजनीति से पोषण मिला है। क्या यह घटना राजनैतिक उत्तेजना के भावों से प्रेरित नहीं थी? और क्या इससे इन्दिरा कांग्रेस का हरिजन प्रेम बेनक़ाब नहीं हो जाता?

वास्तविकता तो यह है कि चाहे इन्दिरा जी कितना भी दिखावा करें मगर इस असलियत को नकारा नहीं जा सकता कि वह मनोमस्तिष्क से कट्टर मनुवादी हैं और स्वभावतः हरिजनों को समाज में शोषण के गर्त में डाले रखने के लिये ज़िम्मेदार हैं अतः इन्दिरा जी इस ज़िम्मेदारी से बच नहीं सकतीं। वस्तुतः वह हरिजन तो क्या जातिवाद को ही मिटा सकती थीं यदि अपने 11 वर्ष के एकछत्र शासन में ऐसा चाहती जब हर असम्भव कार्य भी सम्भव बनाया गया।

मैंने श्रीमती गाँधी को मनुवादी इसलिये कहा कि उनके दल में (कांग्रेस) जब वह सत्ता में रहीं तो लगभग सभी महत्वपूर्ण पदों पर उनके चहेते मनुवादी ही रहे चाहे केन्द्रीय मत्रिमण्डल रहा हो, चाहे कांग्रेस कार्यकारिणी रही हो, चाहे प्रदेश के मुख्यमंत्री हों। पार्टी के नेताओं की गिनती भी कर बैठें तो यह तथ्य अकाट्य ही ठहरेगा। पुनश्चः आज देश के 80 प्रतिशत से भी अधिक मनुवादी मतदाता इन्दिरा के साथ हैं। अन्यथा उनकी सहानुभूति कांग्रेस के ही साथ रही होती तो दक्षिण भारत के सन् 1978 के चुनावों में इन्दिरा कांग्रेस न जीतती।

हमारी राजनीति के अन्दर जातीय द्वेष और भेदभाव का गन्दा नाला बहता रहा है। हमारे सामाजिक जीवन का राजनीति ने जैसा शोषण किया है उसके फलस्वरूप हमारा राजनीतिक जीवन स्वच्छ नहीं हो पाया, प्रशासन में भी यह रोग घर करता गया और इन्दिरा शासन में जातिवाद का नग्न नृत्य हुआ जब देश के हर कोने में हर विभाग के वरिष्ठ अधिकारी अधिकांशतः एक वर्ण के ही दिखाई देने लगे। जिसकी शिकायतें विभिन्न समुदायों द्वारा अधिकारों की माँग करते हुए की गयी। जैसा मैं पहले भी कह चुका हूँ हमारे देश में वर्ग–संघर्ष कभी आर्थिक आधार प्राप्त नहीं कर सका जो कि राजनीति की एक विचारधारा है उसमें आर्थिक और सामाजिक दशा को प्रतीक बनाया जाता है, लेकिन उसका मण्डप जाति, बिरादरी, सम्प्रदाय की ध्वजा पताकाओं से सजाया जाता रहा है।

मनुवाद से तंग आकर और हरिजनों के प्रति उनकी सर्वथा, हेयदृष्टि एवं शोषणपूर्ण नीति को देखकर ही डॉ. अम्बेडकर ने जीवन के अन्तिम दिनों में दलित वर्ग को बौद्ध धर्म की दीक्षा ग्रहण करने को इसीलिये कहा था क्योंकि उसके अन्दर यह भावना नहीं थी। हिन्दू वर्ण व्यवस्था में जो दुराचार, अनाचार पैदा हो गया था, उसके विरुद्ध भगवान बुद्ध ने समानता का उपदेश दिया। इसीलिये वेद और ईश्वरीय सत्ता से भी उदासीन रहने वाले गौतम बुद्ध को हिन्दू अवतारों में माना गया है। सत्य व धर्म किसी जाति विशेष की बपौती नहीं है। मंच से कहे गये बोल बड़े सुहावने होते हैं लेकिन उनका प्रभाव जन–जीवन में क्या होता है, यही आजकल हमारे सामने आ रहा है। राजनीति का बँटवारा जाति, सम्प्रदाय और विशेष हित व स्वार्थों में हो रहा है। यह ताण्डव होता रहेगा, जब तक कि धर्म–निरपेक्षता को समाज और सम्प्रदाय निरपेक्ष नहीं बनाया जाता।

आज देश में हरिजनों के बड़े तबके द्वारा जिन बाबू जगजीवन राम को अपना नेता स्वीकारा गया उन्होंने भी समय–समय पर अपनी भड़ास निकालते हुए इस तथ्य को ही स्वीकारा कि ''इन्दिराजी ने ब्राह्मणवाद को प्रोत्साहन दिया है और ब्राह्मणों ने ही हरिजनों का शोषण किया है। अतः इनका सामाजिक बहिष्कार होना चाहिये।'' चाहे जो भी हो बाबूजी की इस बात में सच्चाई है फिर उन जैसे सुविज्ञ और संयत विचारवान नेता के बारे में जातीय द्वेषभाव फैलाने का आरोप नहीं लगाया जा सकता। डॉ. सम्पूर्णानन्द के भी ''ब्राह्मण सावधान'' में यही भाव था, और राजा राममोहन राय, गुरुनानक, स्वामी दयानन्द तथा विवेकानन्द आदि समाज–सुधारकों ने इसी भाव से समाज में आवाज़ बुलन्द की कि देश के सामाजिक जीवन पर ब्राह्मणवाद ऐसे ही छाया रहा जैसे राजनीतिक जीवन पर साम्राज्यवाद।

बाबू जगजीवनराम के कथन के सन्दर्भ में इतना कहा जा सकता है कि वह एक राजनैतिक नेता के विचार हैं अतः उसका असर राजनीति में जातीय द्वेष भावना को उत्तेजित करेगा। ऐसा सोचना ग़लत भी नहीं है और सही भी नहीं है। ग़लत इसलिए नहीं कि हमारी राजनीति के गमलों में जातीय भावना की फल–फूल प्रदर्शनी सदैव ही सजती रही है। इसलिए पीलिया रोग की आँखों को चन्द्रमा की सफेद रोशनी पीली नज़र आये तो रोगी के लिए सही भी है और वास्तविकता में ग़लत भी। यह हमारे राजनीतिक कलेवर का दोष है।

तो मैं यह कह रहा था कि इन्दिराजी कट्टर ब्राह्मणवादी हैं और आज देश की राजनीति में यदि वह कहीं ज़िन्दा हैं तो मात्र ब्राह्मणों के सवाल पर यद्यपि मुझे राजनीति में और विशेषकर श्री चरणसिंह के बारे में लिखते समय जातिवाद का ज़िक्र करके बहुत बड़ा अनर्थ कर रहा हूँ, क्योंकि श्री सिंह, स्वामी दयानन्द के अनन्य भक्त रहे हैं अतः जातिवाद की बात करते भी कतराते हैं। परन्तु अपने प्रिय पाठकों को हर तथ्य से वाकिफ़ कराना चाहता हूँ अतः दुस्साहस कर रहा हूँ। तो अब क्षणभर भी यह देखें कि चरण सिंह पर जब वह उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री थे तो यह सुनियोजित हमला कराया गया कि वह जाटवादी हैं जबकि वस्तुस्थिति यह थी कि उनके दल में इने–गिने नेता जाट थे और मंत्रिमण्डल में तो श्री वीरेन्द्र वर्मा (1984 में लोकदल राज्यसभा सदस्य) के अतिरिक्त कोई जाट था ही नहीं, और जब केन्द्र में पहुँचे तो अपने अलावा दूसरा नहीं, प्रदेशों से तो बुरी तरह सफाया। कहने का

अभिप्राय यह था कि श्री सिंह के राजनीतिक गगन में बढ़ते रहने का परिणाम यह हुआ कि जाट नेता ही समाप्त प्रायः हो गये और उस पर भी यह आरोप? क्या आरोप लगाने वालों को तनिक भी शर्म है?

जहाँ तक हरिजनों के हित में उनकी सेवाओं का सवाल है छात्र जीवन से ही कसौटी पर कस लीजिये। बीसवीं सदी के तीसरे दशक का प्रारम्भ; जब स्कूलों में जाति के प्रति बड़े भेदभाव थे, बहुत अत्याचार होते थे, अध्यापक भी हरिजन छात्रों को दूर से छड़ी फेंककर मार लगाते थे, पुस्तक दूर से फैंक देते थे। इसी प्रकार का आचरण छात्र भी करते– अर्थात् उनके बस्ते फैंकते, धक्का देते, पुस्तक, कपड़े आदि फाड़कर पढ़ने से रोकने के यत्न भी करते और भंगी, चमार, नीच आदि शब्दों का उच्चारण कर उन्हें (हरिजन छात्रों को) हतोत्साहित करते थे उसी समय चौधरी चरणसिंह आगरा कॉलेज, आगरा के छात्र थे। गाँधीजी के आह्वान पर सारे देश में सहभोज का आयोजन किया गया तो आगरा कॉलेज में इसकी अगुआई आपने की, चमार व भंगी कहे जाने वाले उपेक्षित छात्रों के द्वारा बनाया गया और परोसा गया भोजन आपने किया, प्रतिफल स्वरूप बोर्डिंग के छात्रों ने आपका बहिष्कार कर दिया तथा भोजनालय से आपको खाना पत्तल पर दिया जाने लगा और आपके साथ भी हरिजनों जैसा व्यवहार होने लगा। इस समय की स्थिति वह थी कि हरिजन के छू लेने पर वस्त्रों सहित स्नान करना पड़ता था, उस समय चरणसिंह का सहभोज में शामिल होना चरणसिंह का सर्वाधिक साहसपूर्ण कार्य था। जिसका दण्ड भी उन्हें भोगना पड़ा और आज जो कथित हरिजन नेता हैं या हरिजनों के हिमायती हैं वह उस समय हरिजन बस्तियों में से होकर भी नहीं निकलते थे और स्नान करके घर में प्रवेश होते थे वह श्री सिंह पर हरिजन विरोधी होने का अभियोग लगाते हैं और स्वयं गाँधीवाद का नकाव लगाते हैं। उन्हें तनिक लज्जा नहीं आती यह कहते हुये?

क्षत्रिय परिवार में जन्म लेने वाले स्वाभिमानी व्यक्तिव को हरिजनों के साथ पत्तल पर खाना खाते तथा हरिजन सम्मेलन बुलाते–बुलाते हरिजन नेता की संज्ञा मिली, आर्यसमाज से सम्बन्धित अनके छात्र शनैः शनैः आपके साथ हो लिये। उस समय तक मात्र अधिकांश ब्राह्मण वर्ग तथा वैश्यों का ही समर्थन आपको नहीं मिल सका क्योंकि यही लोग हरिजनों को बराबरी का दर्ज़ा देने के विरुद्ध थे।

आपके साथ सत्य था तथा आपकी विजय हुई। अल्पसंख्यक वर्ग आपके पीछे हो लिया। आपने इसी समय अपनी पुस्तक ''सदाचार'' ''शिष्टाचार'' व ''अछूत'' लिखीं। सम्भवतः श्री सिंह पर जातिवादी होने तथा हरिजनों का विरोधी होने का बचकाना आरोप लगाने वाले इस घटना को नहीं जानते होंगे। यह दूसरी घटना जब चौधरी साहब ग़ाज़ियाबाद में वकालत करते थे और घर का रसोइया हरिजन ही रखते थे, इसको भी नकार जाते हैं। मगर मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि सही अर्थों में संघर्ष झेलकर यदि किसी ने हरिजनोद्धार के लिये कार्य किया है तो डॉ. अम्बेडकर एवं गाँधी के बाद तीसरे व्यक्ति चरण सिंह ही हैं। हिन्दू धर्म में व्याप्त कुरीतियों की जड़ खोदने के लिये ही आपने दयानन्द के विचारों को प्रधानता दी और जातिवाद को समूल नष्ट करने की दिशा में कोई कसर नहीं उठा छोड़ी। अपनी दो लड़कियों की शादी दूसरी जातियों में की। अपने मुख्यमन्त्री काल 1969 में समस्त प्रदेश की शिक्षण संस्थाओं के नामों को परवर्तित करने का आदेश दिया जो जातियों के नाम पर चल रही थीं।

मैं पुनः गुस्ताखी कर रहा हूँ कि अगर नेहरु भी तहे दिल से हरिजनों के उत्थान की बात सोचकर कुछ करते तो निश्चित रूप से सफलता मिलती। किन्तु वह अंग्रेज़ियत के शिकार थे और भारतीय मिट्टी के पाले पोषे शोषित की बात भी नहीं सोच सके इसीलिये उनका कथित प्रगतिशील चिन्तन इसका हामी था कि देश में औद्योगीकरण की रफ़्तार तेज़ होने से सामाजिक बुराईयाँ स्वतः समाप्त हो जायेंगी। शायद वह छुआछूत, जातिप्रथा, सामाजिक अत्याचार आदि को ''सुपरस्ट्रक्चर'' मानते थे, बुनियादी आर्थिक समस्याओं के हल होते ही यह सुपरस्ट्रक्चर अपने आप भरभरा कर गिर पड़ेगा। मगर न तो आर्थिक प्रश्न हल हुए और न हरिजनों का उत्पीड़न रुका। वस्तुतः कांग्रेस का समूचा नेता वर्ग उच्चवर्गीय संस्कारों से जुड़ा रहा है और उसने गरीब व पीड़ित जनता की कठिनाईयों के बारे में कभी संजीदगी से नहीं सोचा। योजनायें बनाई गयीं, कुल कारखाने खड़े हुए, पर ये सारी चीजें अमेरिकी मॉडल को भारत की मिट्टी में रोपने के प्रयत्न स्वरूप सिर्फ कुछ विशिष्ट वर्गों को ही लाभान्वित कर सकी। हरिजनों की यन्त्रणा गाथा वैसे ही बिना किसी विराम के चलती रही अगर उसी समय चौधरी चरणसिंह जैसे प्रशासक रहे होते तो आज हरिजन समस्या का नाम ही मिट गया होता। उनके सोचने का तो स्वरूप ही दूसरा था। उनका कहना था कि लोगों की एक पूरी जमात के साथ गैर इंसानी सलूक का सिलसिला लगातार जारी रहा है। समय–समय पर कांग्रेसी नेताओं द्वारा बहाये गये घड़ियाली आँसू, किये गये झूठे आश्वासनों और बनायी गयी पंगु समितियों के बावजूद दरअसल यह हिन्दू समाज व्यवस्था की एक बुनियादी बीमारी है, कोढ़ है, जिसका इलाज सिर्फ़ मरहम लगाने से और मिजाज़ पुर्सी करने से नहीं होगा, सही अर्थों में स्थायी परिवर्तन करने के लिए सम्पूर्ण क्रांति से कम कोई चीज़ काफ़ी नहीं होगी। उनका कहना है कि वर्ण व्यवस्था और पूँजीवाद में आपसी समता है और जब तक इन दोनों व्यवस्थाओं को नहीं तोड़ा जाता तब तक समाजवाद तथा समता की स्थापना असम्भव है। इसी दृष्टिकोण से चौधरी साहब ने दलित सम्मेलन में बाबू जगजीवन राम के समक्ष 1983 में मावलंकर हॉल, नई दिल्ली में यह स्पष्ट घोषणा की कि ''यदि भविष्य में समस्त अधिकार मेरे हाथ में हुए तो सरकारी नौकरियों में यह नियम बना दिया जायेगा कि जो हरिजनों के साथ अन्तर्जातीय शादी करें मात्र वही दम्पत्ति नौकरी प्राप्त कर सकेंगे। यही ठोस आधार है जिस पर इस समस्या का स्वतः ही अन्त हो सकता है।'' चौधरी चरण सिंह ने गृह मंत्रालय सँभालने के चन्द रोज़ बाद ही सभी प्रदेश के मुख्यमंत्रियों एवं विभागीय अधिकारियों को सख़्त आदेश दिये थे कि हरिजन व निर्बल वर्ग के लोगों को सामाजिक व आर्थिक न्याय दिलाने के कार्यक्रमों की ओर विशेष ध्यान दिया जाये। उनके कल्याण की सब योजनायें सही अर्थों में कार्यान्वित की जायें। विगत तीस वर्षों की कागज़ी खाना पूरी से ऊबे फर्जी घोषणाओं के शिकार हरिजनों को आश्वस्त किया कि ''मात्र कागज़ी कार्यवाही करने वालों को क्षमा नहीं किया जायेगा। हरिजनों को मकान और खेतों के लिये दी गयी भूमि पर वास्तविक कब्ज़ा दिलाया जाये और बाधक तत्वों के विरुद्ध सख़्त कार्यवाही की जाये। इसी क़दम के क्रियान्वयन के प्रतिफलस्वरूप स्वयं चौधरी साहब के गृह प्रदेश में जहाँ हरिजनों पर अत्याचार की सर्वाधिक शिकायत की जा रही थीं इन अपराधों की संख्या जो जुलाई 1976 में 667 थी जुलाई 1977 में घटकर 380 रह गयी।

आपकी इस घोषणा के साथ ही सरकार ने हरिजनों को सामाजिक न्याय दिलाने की दिशा में ठोस कदम उठाये। सभी पुलिस महानिरीक्षकों को यह आदेश दिये गये कि उनके अधीनस्थ कर्मचारी यह भलीभाँति सुनिश्चित कर लें कि उनके कार्यक्षेत्र में कोई प्रभावशाली व्यक्ति हरिजनों को दी गई ज़मीन पर अपना कब्ज़ा न ज़माने पाये आदि–आदि। यदि ऐसा किया गया है तो उनके विरुद्ध सी.आर. पी.सी. की धारा 107 तथा भारतीय दण्ड विधान की धारा 441/447 के अन्तर्गत सख़्त कार्यवाही की जाये तथा उनका कब्ज़ा दिलाया जाये। इसी आशय के आदेश राजस्व अधिकारियों को भी दिये गये तथा स्पष्ट किया गया कि यदि कोई ज़ोर जबरदस्ती हिंसा, संघर्ष या अत्याचार की घटना घटती है तो उसकी ज़िम्मेदारी ज़िलाधिकारी तथा पुलिस अधीक्षक पर होगी।

श्री चरण सिंह ने स्पष्ट कहा कि वगत 30 वर्षों में नागरिक अधिकार संरक्षण कानून महज़ खिलवाड़ बनकर रह गया है अतः अब उसका दृढ़ता से पालन होना चाहिये न तो कोई छुआछूत बरती जाये न किसी हरिजन को किसी कार्य के लिए बाध्य किया जाये। यदि छुआछूत बरती गयी तो उस क्षेत्र में सामूहिक जुर्माना कराया जाये इसमें दण्डित व्यक्ति चुनाव में भाग लेने से भी रोके जा सकेंगे। इस ठोस और सुनियोजित प्रयासों के साथ ही हरिजन तथा निर्बल वर्ग की आर्थिक दशा और उनका जीवन स्तर उठाने के लिए कई सुझाव चौधरी चरण सिंह ने जनता पार्टी सरकार को दिये थे। उनका लघु कुटीर उद्योग धन्धों का सुझाव भी इस वर्ग की समस्याओं को मद्दे नज़र रखते हुए दिया ताकि वह लोग अपने घर पर ही उद्योग धन्धे लगाकर कुछ कमाई कर सकें। यदि चौधरी साहब के विचारों को अधिक महत्व दिया गया तो निश्चित ही नज़दीक भविष्य में हरिजनों का उद्धार हो सकता है। चौधरी साहब को केन्द्र में अधिक समय नहीं हुआ था, फिर भी संकल्प की दृढ़ता, प्रयत्न की ईमानदारी और इरादों के प्रतिनिष्ठा के फलस्वरूप हरिजनों पर होने वाले अत्याचारों की संख्या में अभूतपूर्व कमी हुयी। उनकी स्थिति में उत्तरोत्तर सुधार हुआ और अधिकाधिक सामाजिक स्थान प्राप्त हो सका। यदि चौधरी चरण सिंह की नीतियाँ चलायी जायें तो मेरा दावा है कि आगामी पाँच वर्षों में देश में दुआछूत का नामो निशान मिट जायेगा और हरिजन समाज के अन्य वर्गों से आगे होंगे, पीछे नहीं।

चरण सिंह जी की जन्मजात जाति भावनाओं के उन्मूलन के लिये हर सम्भव प्रयास करने पर आमादा हैं। उत्तर प्रदेश की तरह देश भर की शिक्षण संस्थाओं के आगे से जातिगत नाम हटाये जायें, व्यक्तिगत नामों के आगे पीछे से जाति सूचक वाक्य लिखने बन्द हों और अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन दिया जाये, इस कार्य में धार्मिक व सामाजिक संस्थायें हाथ बँटायें, ऐसी चौधरी साहब की तमन्ना है।

उत्तर प्रदेश मन्त्रिमण्डल में रहकर श्री चौधरी ने हरिजनों के लिये अनके महत्वपूर्ण कार्य किये। प्रथम पंचवर्षीय योजना के बाद पुनर्ग्रहण सिद्धान्त के प्रतिफलस्वरूप जब बड़े पैमाने पर काश्तकारों को भूमि से बेदखल किया जा रहा था तो चौधरी चरणसिंह ने योजना आयोग की सिफ़ारिश को अस्वीकार करते हुए उत्तर प्रदेश के काश्तकारों को बेदखली से बचाया। इसके विपरीत राज्य में कांग्रेस के कुछ प्रमुख सदस्यों के कड़े विरोध के बावजूद 1954 में कानून में संशोधन कर उन सभी वर्गों को सीरदारी

का स्थायी अधिकार प्रदान कर दिया जिन्हें मालगुजारी के दस्तावेज़ों में उप काश्तकार के सीर के काश्तकार, खुदकाश्त तथा अतिचारी भी माना गया और इनको ज़मीदारी उन्मूलन भूमि सुधार अधिनियम के अन्तर्गत अधिकारियों का दर्ज़ा दिया गया था। 1947–48 में जारी किये गये सरकारी आदेश के अनुसार इन लोगों की बेदखली पर ही पहले से रोक लगा दी गयी थी। इस संशोधन से हरिजनों को बहुत लाभ हुआ क्योंकि राज्य के लगभग 30 लाख आदिवासियों में उनका अनुपात एक तिहाई से अधिक था।

सीर के काश्तकारों एवं उपकाश्तकारों को काश्त का अधिकार की सुरक्षा प्रदान किये जाने हेतु पूर्वी उत्तर प्रदेश के हरिजन व दलित वर्ग की सशक्त संस्था प्रान्तीय शोषित संघ उग्र प्रदर्शन व तीव्र आन्दोलन चला रहा था। इसी दौरान अप्रेल 1950 में इलाहाबाद जनपद में चौ. चरणसिंह ने एक आम सभा में सरकार द्वारा अतिचारियों सहित सभी अधिवासियों को सीरदारी का दर्ज़ा देने की घोषणा की, प्रतिफलस्वरूप वह आन्दोलन और संगठन बिखर कर समाप्त हो गया तथा इस संगठन के कार्यकत्तर्ता कांग्रेस में शामिल हो गये।

जमींदारी उन्मूलन भूमि सुधार अधिनियम की धारा 198 में यह प्राविधान किया गया था कि भूमि प्रबन्ध समिति द्वारा खेती के लिये पट्टे पर दी जाने वाली भूमि को प्राप्त करने का शिक्षण संस्थाओं के बाद भूमिहीनों को ही अधिकार होगा। साथ ही जब अन्य उम्मीदवारी तथा भूमि प्राप्त करने वालों को इस भूमि के लिये पुश्तैनी दर पर निर्धारित लगान के दस गुने के बराबर के रकम की अदायगी करनी थी, लेकिन चरणसिंह ने अनुसूचित जाति के लोगों को इस राशि से मुक्त कर दिया। इसी धारा के नियमों में भूमि प्रबन्ध–समिति की पड़ती भूमि के बँटवारे में भूमिहीन कृषि श्रमिकों को प्राथमिकता देने की भी व्यवस्था की गयी।

जब भी चौधरी चरणसिंह मुख्यमंत्री बने उनके साथ दलित वर्ग के चार केबिनेट मंत्री बनाये गये। 1937 से जबकि काँग्रेस ने सत्ता संभाली पिछड़े वर्ग को मंत्री परिषद् में कोई स्थान नहीं दिया गया जबकि इस वर्ग की संख्या प्रदेश 55 प्रतिशत है। श्री चरणसिंह ने ही हरिजन को राज्य लोकसेवा आयोग का सदस्य बनाया जो कि आयोग के इतिहास में नई घटना थी।

राजस्व मंत्री के रूप में आपने हरिजनों को काफी लाभ पहुँचाया है वर्ष 1954 से 1959 के दौरान ज़िला प्रशासनों, लेखपालों तथा अमीनों के कार्यालयों में कर्मचारियों विशेषकर चपरासियों के पदों में हरिजनों का प्रतिशत 18 बनाने के लिये राजस्व मंत्रालय एवं सरकार से अनेक परिपत्र, आदेश आदि भेजकर अमली जामा पहनाने का प्रयास किया किन्तु राजनैतिक विरोध के कारण इस प्रयास में आंशिक रूप से सफल हो सके। दिसम्बर 1953 में आपने एक सरकारी आदेश जारी किया ताकि अधीनस्थ विभागों कृषि पशुपालन तथा वन में चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के रिक्त स्थानों में अनुसूचित जाति के लोग तब तक भर्ती किये जायें जब तक उनका कोटा 18 प्रतिशत पूरा न हो जाय किन्तु कुछ समय बाद इस आदेश को नियुक्ति विभाग द्वारा संविधान विरोधी करार देकर रद्द कर दिया गया। कम वेतन पाने वाले सरकारी कर्मचारियों को अधिक महँगाई भत्ता दिया जाय, यह बात देश में चौधरी साहब ने ही सर्वप्रथम

उठायी थी। 1967 में जब चौधरी मुख्यमंत्री बने तो प्रदेश के इतिहास में प्रथम बार लोकसेवा आयोग में दौलतराम निम नामक हरिजन को सदस्य मनोनित किया तभी से लगातार एक हरिजन सदस्य इस आयोग में रहता आ रहा है। पिछड़ी जाति से भी श्री राम लाल यादव की नियुक्ति हुयी जो 1974 में अध्यक्ष बने।

चरणसिंह जी से जब यह पूछा गया कि आपको हरिजन विरोधी बताया जा रहा है क्या सच है? उनका उत्तर था कि ''कॉंग्रेस व कुछ कथित प्रगतिशील जब मेरे खिलाफ और कुछ नहीं पाते तो हरिजन विरोधी होने का आरोप लगाकर व्यक्तिगत आक्रमण का सुनियोजित षड़यन्त्र रचते हैं, मुझे आश्चर्य इस बात पर होता है कि मैंने जीवन पर्यन्त हरिजनों के उत्थान के लिये रचनात्मक कार्य किया, जाति–प्रथा के विरूद्ध अभियान चलाया, प्रदेश की शिक्षण संस्थाओं को जातिगत नाम से मुक्ति दिलाई, आज से 40 वर्ष पूर्व हरिजन रसोइया रखकर जन्मगत जाति प्रथा की भावना पर प्रहार किया; फिर भी मुझे हरिजन विरोधी कहने वाले शर्म महसूस नहीं करते।''

इन शब्दों में एक अजीब ही वेदना का स्वर छुपा हुआ है कि जिस आदमी ने हरिजनों के बीच रहकर उनके दिल की धड़कनों को सुना हो उनकी व्यथा कथा नजदीक से परखा, और उनके निवारण के लिये सारे जीवन संघर्ष किया हो, उस व्यक्ति के सारे कार्य कलापों पर ''हरिजन विरोधी'' कहकर इसलिये कुठाराघात कर दिया जाय, कि उसका राजनैतिक लाभ उनको मिल सकता है तो वह लोग या पार्टियाँ अधिक शक्ति भले ही प्राप्त करलें किन्तु इतिहास उन्हें क्षमा नहीं करेगा और सम्भवतः यदि इतिहासकार भविष्य में किसी राजनीतिज्ञ के हाथ की कठपुतली न रहे, तो हरिजनों के लिये संघर्ष करने वाले सवर्ण वर्ग से सम्बन्धित नेताओं में चौधरी चरणसिंह को गाँधी के बाद दूसरी सीढ़ी पर खड़ा करने से भी हिचकेंगे नहीं ऐसी मुझे उम्मीद है, यह अपने आप में अकाट्य सत्य भी है।

दलित आन्दोलन

बुद्धिजीवियों में एक बहस छिड़ी क्या भारत में दलित आंदोन के नायक मनीषी डॉ. भीमराव अम्बेडकर के बाद दूसरा महानायक उभर सकता है? विश्व के इस सबसे बड़े लोकतांत्रिक मुल्क में कोई दलित देश की बागडोर संभाले तो यह हैरानी की बात नहीं है, क्योंकि यहाँ दलित वर्ग की आबादी एक चौथाई है। किन्तु आजादी के 30 वर्ष बाद भी राष्ट्र नायक का खिताब कोई दलित प्राप्त नहीं कर सका। बल्कि कांग्रेस ने डॉ. अम्बेडकर के विकल्प के रूप में बावू जगजीवन राम को स्थापित किया और नेहरु मंत्रिमण्डल में महिमा मंडित कर डॉ. अम्बेडकर की योग्यता कार्यशीलता और दलित आंदोलन की गतिशीलता पर विराम लगाने का प्रपंच रचा। हालांकि डॉ. अम्बेडकर का यह दलित आन्दोलन जन सामान्य से खाद पानी लेकर आगे बढ़ता चला गया, वहीं कांग्रेस सेंधमारी करते हुए अपना आधार दलितों में बरकरार रखते हुए अपने वोट बैंक की राजनीति में जुटी रही।

अक्सर देखा गया है कि बहुसंख्यक वर्ग अलग–थलग पड़े समूह के किसी व्यक्ति की सोच के साथ सहभागी बन जाता है जबकि ऐसा करते समय वह राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक ढांचे में कोई परिवर्तन नहीं करता इस प्रकार वह व्यवस्था के नाम मात्र के साथ ही बदलाव लाकर मूल

शोषणकारी ढांचा बनाये रखता है। इस कदम से वह विश्व के समक्ष प्रगतिशील भी बना रहता है, किन्तुजमीनी हकीकत कुछ और होती है। आश्चर्यजनक रूप से यह प्रक्रिया किसी व्यक्ति विशेष को ही गतिशीलता प्रदान करती है। इस प्रकार की सहभागिता की प्रक्रिया वंचित और शोषित वर्ग के स्वतंत्र, मौलिक सामाजिक आंदोलन के उभार पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

इसीलिए डॉ. अम्बेडकर ने कांग्रेस से अलग हटकर दलित आंदोलन को जुझारू रूप प्रदान करने हेतु रिपब्लिकन पार्टी का गठन किया था। पुनः कांग्रेस के दलित मुखौटे की असलियत पहचानने के बाद बड़े विलम्ब से ही सही बाबू जगजीवन राम ने भी कांग्रेस छोड़कर सी.एफ.डी. गठित करके जे. पी. आंदोलन और अंततः जनता पार्टी में सहभागिता स्वीकार कर ली थी तथा जनता सरकार में उप–प्रधानमन्त्री बन गए। 1982 में केन्द्रीय सरकार की सेवा ठुकराकर मा. काशीराम ने भी वामसेफ एवं डी.एस.–4 के नाम से नया दलित संगठन शुरू किया था। भविष्य में यह क्या दशा लेगा यह नहीं कहा जा सकता यद्यपि इसकी दिशा–दशा डॉ. अम्बेडकर के सपनों से मेल खाती है। क्योंकि भारत में ऐसा दलित नेतृत्व ही मंजूर हो सकता है जो डॉ. अम्बेडकर, ज्योतिबा फूले और स्वामी पेरियार जैसे महापुरुषों के पदचिन्हों पर चल सके अथवा जय भम का उद्घोष कर सके। भारत के शोषितों को प्रायोजित दलित नेताओं का खासा अनुभव है, जिन्होंने शोषणकर्त्ताओं को ही मजबूत किया है। बाबू जगजीवन राम की आड़ में कांग्रेस ने ऐसा ही तंत्र विकसित किया था, उन्हें डॉ. अम्बेडकर के दलित आंदोलन की प्रतिक्रिया स्वरूप उसको ठंडा करने हेतु गोद लिया गया था। इसके बाद 1980 में रिपब्लिकन पार्टी ऑफ इण्डिया और दलित पेंथर पार्टी नेताओं को भी पिछलग्गू बना लिया। इसी प्रकार कुछ प्रदेशों में जनाधार विहीन दलित नेताओं को प्रभावशाली पदों पर प्रदेशाध्यक्ष, राज्यपाल, उपराज्यपाल आदि बनाकर दलित वोटरों को गुमराह करने का ही कार्य किया क्योंकि यह सब दलितों का नाम मात्र का प्रतिनिधित्व भर था। जिसके कारण शोषणकारी व्यवस्था में कोई बदलाव नहीं आ सका है न ही कुलीन वर्ग का सत्ता पर अधिवत्य कमजोर हुआ है। अतः अब दलितों को यह अहसास हो चुका है कि उनका सांकेतिक प्रतिनिधित्व दलित आबादी के दर्ज़े और भूमिका में कोई बदलाव नहीं ला सकेगा।

अंतर्राष्ट्रीय मानचित्र पर भी ऐसी घटनाऐं साक्षी हैं। अमेरिका में अलिखित नियम ही है कि वहां राष्ट्र प्रमुख सफेद मूल का एंग्लो सेक्सन प्रोटेस्टेंट ही होता है। जान् केनेडी जैसे एकाध अपवाद हैं, जो कैथोलिक थे लेकिन वह भी अश्वेत नहीं थे। अमेरिकी अश्वेतों की स्थिति भारतीय दलितों जैसी ही है वह समाज के निचले पायदान पर हैं। वहाँ आरक्षण जैसी व्यवस्था भी नहीं है हालांकि एफर्मेटिव एक्शन जैसी व्यवस्था है।

अमेरिका में 1965 में मताधिकार अधिनियम पारित होने के बाद 1972 में एस.चिस्लोम डेमोक्रेटिक राष्ट्रपति पद के पहले अफ्रीकी मूल के प्रत्याशी बने। पुनः 1984 एवं 1988 में जे.सी. जैक्शन ने भी दो राष्ट्रपति पद पाने का असफल प्रयास किया। 1865–1877 के पुनः निर्माण के दौर के बाद से कुछ अफ्रीकी मूल के लोग सीनेटर अवश्य बन गए। मार्टिन लूथर किंग ने गरीबी उन्मूलन के लिए युद्ध से

दूर रहने को अमेरिकी नेतृत्व को बार–बार चेताया। उनका सपना था कि अमेरिका को विश्वभर में कामगारों –शोषित, अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा के लिए आगे बढ़ना चाहिए, युद्ध के लिये नहीं, किन्तु ऐसा नेतृत्व अमेरिकी दलितों को भी नहीं मिला। अतः दुनिया भर के दलित ऐसा नेता चाहते हैं जो स्वंतत्र दलित आंदोलन की उपज हो जिसका नेतृत्व खुद दलितों के हाथ में हो और जिसकी स्वतंत्र विचारधारा व कार्य योजना हो। इस अलग पार्टी में दलित न केवल मुख्य धारा में हो, बल्कि अग्रणी भूमिका में भी हो तथा उनकी मांगों को प्रमुखता से उभारा जाये।

निःसंदेह बाबू जगजीवन राम का भारतीय राजनीति में पाला बदलने की घटना अभूतपूर्व है। उनमें नेतृत्व की क्षमता एवं योग्यता थी किन्तु कांग्रेस के प्रायोजित नेता रहने के कारण अब वह उनके इस पड़ाव पर दलित आंदोलन को नई धारा में प्रवाहित कर पायेंगे इसमें संदेह भी है, क्योंकि उन्होंने कभी दलित आंदोलन की अगुआई नहीं की है, न ही उनके विकास की कोई योजना पेश की है। यद्यपि देश की सामाजिक आर्थिक, राजनैतिक सुरक्षा को लेकर उनके पास विज़न अवश्य है।

हाँ, श्री कांशराम के उभरते दलित आंदोलन से नये नेतृत्व की आहट जरूर प्रतीत होती है। काशः वह सशक्त दलित आंदोलन में परिवर्तित होकर डॉ. अम्बेडकर का दृष्टांत पेश कर सकें!

9. भ्रष्टाचार

''जान पड़ता है कि चरण सिंह को पार्टी के और कांग्रेस तथा कम्युनिस्ट पार्टियों के निहित प्रतिक्रियावादी तत्वों, धन्ना सेठों और उद्योगों के नेताओं के एक गन्दे षडयन्त्र का शक है। ये षडयन्त्रकारी ऐसे नेता को उखाड़ना चाहते हैं, जो भारत के विशाल कृषक वर्ग का और उनके इन शीर्षकों के खिलाफ उस वर्ग के संघर्ष का प्रतीक है।''

(आर. के करंजिया– ब्लिट्ज 5 नवम्बर 1977)

चौधरी चरण सिंह के गृहमंत्री बनने के बाद देश के हर राजनैतिक दल के कुछ वर्ग विशेष में हलचल थी। यहाँ तक कि स्वयं उनके दल 'जनता पार्टी' का एक बड़ा वर्ग भी अन्यमनस्कता की स्थिति में था और उनको इस पद से हटाने के लिए आन्तरिक साँठ गाँठ मोरारजी के साथ बनाये था। यह बात करंजिया के वक्तव्य से स्पष्ट उभरती है। समय–समय पर अपने कर्त्तव्य पालन स्वरूप जब भी चौधरी ने भ्रष्टाचार, अकुशलता, झूठ फ़रेब, कर्त्तव्य विमुखता और कर्त्तव्यहीनता के वातायन को बदलने की पेशकश की और किसी प्रभावी क़दम को उठाने का दुस्साहस किया तो यह सारी बेईमान और पूँजीवाद की गिरफ्त में राजनीति का धन्धा करने वाली शक्तियाँ एकजुट होकर चरण सिंह को शिकस्त देने आगे आयीं और चौधरी को मुँह की खाने की स्थिति पैदा की तथा उनके राष्ट्रीय मानसिकता और राष्ट्रीय चरित्र में क्रांतिकारी परिवर्तन के संकल्प को धराशायी करने का हर प्रयास इन लोगों द्वारा किया गया। जब लोकपाल विधेयक द्वारा सांसदों–मंत्रियों के आचरण की जाँच की बात चरण सिंह ने शुरू की तो मानो उनके विरोध में एक भूचाल उठा खड़ा हुआ। स्वयं प्रधानमी मोरारजी देसाई इस साँठ गाँठ में शामिल होकर चरणसिंह के विरोधी बन गये और प्रतिफल स्वरूप जुलाई 1978 में चरण सिंह को मत्रिमण्डल से पृथक होन को बाध्य होना पड़ा। इससे यह कटु सत्य प्रदर्शित होता है कि चौधरी साहब को भ्रष्टाचार मिटाने और बेईमानों से लड़ने के कारण कितनी बड़ी कीमत अदा करनी पड़ी। यद्यपि उनका समूचा जीवन इन्हीं संघर्षों की लम्बी कहानी है किन्तु यह एक ताजा उदाहरण देश की जनता के समक्ष प्रस्तुत हुआ है जिसका पूर्वानुमान स्वयं चौधरी साहब को था– ''अगर मेरी चली तो लोकपाल बिल से राजनीतिक भ्रष्टाचार से निपटा जायेगा किन्तु यह 'अगर' ही अहम है। क्योंकि भ्रष्टाचार को जड़ से खत्म करने में मुझे कइयों की दुखती रग पर हाथ रखना पड़ेगा। लोकपाल बिल में संसद सदस्यों को भी शामिल करने पर सभी पार्टियों के सभी सदस्यों में मेरे प्रति विरोध है। अगर वह सबके सब मिलकर मेरे खिलाफ हो जायें तो मैं क्या करूँगा?

(ब्लिट्ज– 5 नवम्बर 1977)

तीस वर्ष तक एक ही दल के हाथ में शासन–सूत्र बने रहने के कारण सम्पूर्ण राष्ट्र के जीवन में एक गतिरोध व्याप्त हो गया और विकास के सभी मार्ग बन्द हो गये। इस कालान्तर में जो सरकार रही उसके निर्णयों एवं कार्य प्रणाली के कारण भ्रष्टाचार को बहुत बढ़ावा मिला प्रतिफलस्वरूप इस रोग

ने समाज को जर्ज़र बनाकर छोड़ दिया है। भ्रष्टाचार की व्यापकता के कारण प्रशासन–तन्त्र एकदम शिथिल हो गया और लोक सेवाऐं उपयुक्त नहीं रह गईं, सरकारी तन्त्र में जो ईमानदार एवं कर्त्तव्यपरायण कर्मचारी थे उनकी उपेक्षा होने लगी, इस प्रकार शनैः–शनैः भ्रष्टाचार रूपी विशाल वृक्ष ने हमारे राष्ट्रीय जीवन रूपी धरातल में गहरी जड़ें बना ली हैं और आज वह राष्ट्र के पैमाने पर सबसे बड़ी प्रशासनिक बाधा के रूप में हमारे सामने है। यहाँ यह बात भी कम उल्लेखनीय नहीं है कि आपात्काल में भ्रष्टाचार अपनी चरम सीमा पर था नौकरशाही शासन पर हावी थी और प्रजातंत्र मखौल बनकर रह गया था इस प्रकार पापों का घड़ा भरने पर ही 1977 में जनता सरकार का प्रादुर्भाव जनमानस के आक्रोश की अभिव्यक्ति थी, जैसा कि चौधरी साहब स्वयं मानते थे। किन्तु जिन्दा रहने की क्षमता और साख का सबूत देने का संकट ही जनता पार्टी और उसकी सरकार का अहम् सवाल बना रहा। इस दल में मुसीबत उसकी दोहरी रचना के पारस्परिक टकराव के कारण थी। क्योंकि उसमें अधिकांश नेता स्वाधीनता संग्राम के वह नेता थे जो कांग्रेस संस्कृति के अनुरूप ही नेहरुवाद के शिकार थे, इस प्रकार यदि दल से चरणसिंह के प्रभुत्व को नकारे जाने के बाद तो जनता पार्टी एक ऐसी प्रणाली के लिए प्रतिबद्ध थी जो गांधीवादी सजावट के साथ उस व्यवस्था से लेशमात्र भी भिन्न नहीं थी जिसे बनाने के लिए कांग्रेस ने 30 वर्ष तक परिश्रम किया और उसे बनाने का कार्य पूरा नहीं हुआ किन्तु वह स्वयं टुकड़े–टुकड़े हो गई। फिर बिखराव वाले टुकड़ों से बनी जनता सरकार उन भीषण सामाजिक आर्थिक चुनौतियों का मुकाबला कैसे कर सकती थी जो राष्ट्र के सामने मुंहबाए खड़ी थी, जबकि उसके पास भ्रष्ट नौकर शाही से लड़ने के लिए पर्याप्त कार्यकर्त्ता तक नहीं था। एक ओर भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए एक मजबूत प्रशासक के रूप में मात्र चरणसिंह थे तो दूसरी ओर अकेले चरणसिंह से लड़ने केलिए जनता पार्टी का बहुमत तैयार खड़ा था। अस्तुः जब भी चौधरी ने भ्रष्टाचार के पालन पर हमला बोलने का साहस जुटाया वैसे ही दल के अन्दर बैठे भ्रष्टाचारियों और पूँजीपतियों के रहनुमाओं द्वारा चौधरी पर हमले तेज किए गए, प्रतिफलस्वरूप चरणसिंह को मंत्रिमण्डल से पृथक होना पड़ा और अस्थिरता के दौर से गुजरते जनता सरकार तीन वर्ष भी पूरे नहीं कर सकी और पुनः वहीं कांग्रेस अपने पुराने चरित्र से भी बदतर चरित्र के साथ शासन में आयी। यहाँ **लार्ड एम्टन** के यह शब्द बड़े सटीक प्रतीत होते हैं कि ''सत्ता भ्रष्ट बनाती है।'' कांग्रेस के शासन में भ्रष्टाचार अपनी चरम सीमा पर कैसे पहुँचा इस संदर्भ में चौधरी साहब ने बहुत व्यवहारिक तथ्य प्रस्तुत किया है– **''कांग्रेस शासन में भ्रष्टाचार को पहले नज़र अन्दाज किया गया फिर बर्दाश्त किया गया और अन्ततः प्रोत्साहित किया जाने लगा और फिर स्थिति यहाँ तक जा पहुँची कि शासन में महत्वपूर्ण ज़िम्मेदारी पाने के लिए कांग्रेस में अपने को बड़ा बेईमान साबित करना अपरिहार्य था। लेकिन यह स्थिति तुरन्त ही पैदा नहीं हुई स्वयं पंडित नेहरु इस गलती के लिए ज़िम्मेदार रहे हैं।''**

एक बार डा. राजेन्द्र प्रसाद (राष्ट्रपति– भारत सरकार) ने पंडितजी को सुझाव दिया था कि राजनैतिक भ्रष्टाचार की जाँच करने के लिए एक उच्चस्तरीय सरकारी कमीशन बना दिया जाय ताकि यह बीमारी अधिक न फैल सके किन्तु नेहरु जी ने नहीं माना। क्योंकि उनकी मान्यता यह थी कि अगर

किसी मंत्री पर भ्रष्टाचार के आरोप सिद्ध हो गए तो मेरी बदनामी होगी। नेहरु की हठवादिता के कारण डॉ. राजेन्द्र प्रसाद से मतभेद की खाई बन गई जो आगे चौड़ी होती रही। नेहरु जी के इस रवैये के कारण ही 1947 के बाद सार्वजनिक जीवन में नैतिक मूल्यों का निरन्तर ह्रास होता गया। यहाँ चौधरी साहब का कहना था कि जिस व्यक्ति (नेहरु जी) ने भारत में संसदीय लोकतन्त्र की जड़ें जमाने में इतना परिश्रम किया, उसी की गफ़लत से भ्रष्टाचार की लानत इस तरह फैली कि अंततः लोकतन्त्र ही खतरे में पड़ गया और केन्द्रीय सरकार भ्रष्टाचार के आरोपों की जाँच के लिए कोई संहिता बनाने तक में नाक़ामयाब रही और नेहरु जी का रवैया केवल पक्षपात का रहा। जिसमें जाँच बिठाने को एक राजनैतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जाने लगा या फिर इसे पार्टी का आन्तरिक मामला मानकर टालने का प्रयास किया जाता रहा जैसा कि अप्रैल 1948 में मद्रास के कांग्रेस मंत्रिमण्डल के भ्रष्टाचार की जाँच करने के लिए पार्टी के महासचिव श्री शंकर राव देव को नियुक्त कर उदाहरण प्रस्तुत किया गया। इस प्रकार देश में एक ऐसी परम्परा डाली गई जहाँ चरित्र और ईमानदारी की राजनैतिक जीवन में कोई कद्र नहीं रह गई। सत्ता पर कब्ज़ा करने की अनन्त आकांक्षा और फिर उस पर हर कीमत पर जमे रहने की ललक ने हमारे राजनैतिक मूल्य, मान्यताओं को पूर्णतः ध्वस्त कर दिया, जिन्हें महात्मा जी के नेतृत्व में तमाम नेताओं ने बड़े परिश्रम से स्थापित किया था और सारी राजनैतिक शक्ति का मुख्य स्रोत भ्रष्टाचार की कालिख से दूषित होता चला गया। चौधरी साहब की उक्त मान्यता नेहरु शासनकाल के अन्तिम दिनों में प्रस्तुत इस रिपोर्ट से प्रमाणित होती है–

''आम धारणा है कि मंत्रियों में भी ईमानदारी से हटने की बात असाधारण नहीं है, और यह कि कुछ मंत्रीगणों ने जो विगत 16 वर्षों से पदों पर रहे हैं, गैर–कानूनी सम्पत्ति अर्जित की है, कुनबा–परस्ती से अपने बेटों और रिश्तेदारों को अच्छी नौकरियों पर लगवाया है और सार्वजनिक जीवन में पवित्रता के किसी भी मापदण्ड के खिलाफ दूसरे फ़ायदे उठाये हैं। मंत्रियों में ईमानदारी के ह्रास की आम धारणा उतनी ही नुकसानदेह है, जितना कि असली ह्रास।''

(भ्रष्टाचार निरोधक संथानम समिति, 1964)

यद्यपि इस रिपोर्ट के बाद शायद पंडित नेहरु अपने रवैये में परिवर्तन करते किन्तु उन्हें दुनिया से विदा लेनी पड़ी। किन्तु उसके डेढ़ वर्ष बाद उनकी पुत्री शासन में आई तो उनका तौर–तरीका पिता की विरासत के रूप में यथावत् रहा या कुछ अधिक ऊपर उठा। चौधरी साहब की मान्यता तो यह है कि इन्दिरा गाँधी ने कांग्रेस के अन्दर के तथा बाहर के प्रतिद्वन्द्वियों को नीचा दिखाने के लिए, स्थानीय तथा राजनीतिक मानदण्डों का जो उल्लंघन किया तथा इस उद्देश्य के लिए उन्होंने सरकारी तंत्र का जिस पैमाने पर उपयोग किया उससे राजनीतिक क्षेत्र में निचले स्तरों पर विद्यमान लोगों तथा प्रशासन का कार्य देखने वाले लोगों का विश्वास गम्भीर रूप से खोखला हो गया। इसी भावना से विख्यात राजनीतिक विचारक श्री एच. बी. कामथ ने कहा था– **''स्वतन्त्रता की सुगन्ध भ्रष्टाचार की दुर्गन्ध से पूर्णतया नष्ट कर दी गई थी।''**

चौधरी चरणसिंह के अनुसार आज़ाद भारत में भ्रष्टाचार मूलतः राजनीतिक कलेवर में मुखरित हुआ। क्योंकि राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने के लिये और उसे स्थायित्व प्रदान करने के लिये सत्ता लोलुप नेताओं को हर पाँच वर्ष बाद चुनाव जीतना होता है जिसके लिऐ बड़ी रकम चाहिए। अतः वह बेईमान व्यापारियों के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है। एक व्यापारी जितना अधिक धन देता है उतने ही सत्ता के करीब आ जाता है। इस चन्दे के धन के लिए व्यापारी कालाबाज़ारी करेगा और काला धन पैदा करेगा, जिसका बचाव सम्बन्धित राजनीतिज्ञ करता रहेगा ताकि उसे निश्चित रूप से धन मिलता रहे। इस प्रकार यह चुनावी चन्दा राजनीतिज्ञ और व्यापारी के बीच सम्बन्धों की मधुरता कायम कर देता है तथा यहबुराई धीरे–धीरे तब तक अपरिहार्य रूप से फैलती जाती है जब तक कि यह सम्पूर्ण राजनीतिक संगठन को ग्रस नहीं लेती। चौधरी साहब का कहना था कि भ्रष्ट नेताओं, भ्रष्ट अफसरों और बेईमान धन्ना–सेठों के बीच गहरी साझेदारी क़ायम होती चली गई जिससे देश की नैतिक व वित्तीय लूट इस बेशर्मी से चली कि कोई किसी को रोक–टोक करने वाला तक नहीं रह गया। भ्रष्टाचार रूपी संक्रमण रोग से अब जन–जीवन का कोई हिस्सा अछूता नहीं रह गया। चौधरी साहब ने भ्रष्टाचार के विविध राजनैतिक स्वरूपों का अध्ययन कर बताया कि मंत्रीगण अपने रिश्तेदारों को उन व्यापारिक व औद्योगिक फर्मों में लगा देते हैं जो लाइसेंस परमिट, मांगने आते हैं। कंपनियों के आय–व्यय और व्यवस्था सूची पर नज़र डालने से ज्ञात होता है कि जनहित की कीमत पर मंत्रियों और व्यापारियों के बीच कैसी–कैसी सौदेबाज़ी होती है। इसी प्रकार सरकारी परियोजनाओं और सुविधाओं को अपने समर्थक व्यक्तियों और क्षेत्रों के अनुरूप लाना भी भ्रष्टाचार का तरीका है। एक ओर समाज कल्याण परियोजनाओं को और दूसरी ओर सिंचाई, सड़क, उद्योगों को राजनीतिक भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देने में प्रयोग किया जाता रहा है। सरकारी ऋण, अनुदान व सहायता राशि, बाढ़, सूखा, ओलावृष्टि के नाम पर बड़े पैमाने पर राजनैतिक बेईमानी की जाती रही है जिससे उनकी निरर्थकता तो साबित हुई ही किन्तु उसकी वसूली भी रुक गई जो अब बड़ी मात्रा तक पहुँच गई है। चौधरी साहब ने भ्रष्टाचार का एक अन्य कपटपूर्ण स्वरूप बताया सामान्य नियमों तथा क़ानूनों को जानबूझकर लागू न करना। जो पूँजीपति दल के लिए चंदा देते हैं वह आयकर न देने के कारण जुर्माने तथा अन्य क़ानूनों से बच निकलते हैं। सभी स्तरों पर अधिकारीगण मंत्रियों के समर्थकों द्वारा क़ानून की ऐसी अवहेलनाओं के प्रति आँख बन्द कर लेते हैं। तरह–तरह के प्रलोभनों के साथ अक्षरशः लाखों किस्म की सहायताएं बाँटी जाती हैं जो बाँटने वालों की इच्छा पर निर्भर होती हैं।

सुविधाओं, प्रोत्साहनों और अवसरों की ऐसी शक्तिशाली और सर्वव्यापी प्रणाली ने, जो कुछ व्यक्तियों व गुटों को खुले लोभ के तहत असीमित संरक्षण प्रदान करती है, हमारे निर्बल तथा जर्ज़र प्रशासन को पूर्णतः जकड़ लिया है। इसके परिणाम स्वरूप राजनीतिज्ञों व अधिकारियों के लिए भ्रष्टाचार के अनेक अवसर बन गए हैं जो उपयुक्त स्थिति की स्वाभाविक परिणति है।

प्रतिफलस्वरूप आज जनता का विश्वास प्रशासन पर से उठ गया है सुधार की कोई संभावना न होने के कारण सर्वत्र निराशा और तिरस्कार की भावना व्याप्त हो गई है। राजनीतिक नेताओं के लम्बे

ओजस्वी भाषणों और उपदेशों का कोई प्रभाव जनता पर नहीं पड़ता और इस अंधकारमय देश से सत्य सदैव के लिए खदेड़ दिया गया है।

इतना सब कुछ होते हुए भी चौधरी साहब निराशावादी नहीं हैं उनका कहना था कि हमारे लोग भी दुनिया के दूसरे लोगों के समान ईमानदार हो सकते हैं बशर्ते नेता ईमानदार हों और समूचा वातावरण बदला जाये। भ्रष्टाचार का खात्मा ऊपर से किया जाना चाहिए क्योंकि यह चोटी से शुरू होता है और फिर रिसता हुआ ऐड़ी तक पहुँचता है अतः आपने सदैव चोटी पर हमला करने की बात कही है। इस दिशा में गृहमंत्री के रूप में चौधरी चरणसिंह ने भी 'पिंपुटकर' को निगरानी कमिश्नर बनाकर प्रशासनिक भ्रष्टाचार की निगरानी कराने और लोकपाल विधेयक लाकर राजनीतिक भ्रष्टाचार से लड़ाई लड़ने का संकल्प किया था किन्तु उनका सपना अधूरा रह गया क्योंकि सरकार से वह हटा दिए गए।

चौधरी साहब व्यंग्य में कहा करते थे कि अमुक व्यक्ति ईमानदार है इस बात के लिए वह विख्यात हो जाता है जबकि विदेशों में उस आदमी की ओर उंगली उठती है जो बेईमान या भ्रष्ट माना जाता है। अर्थात् इस देश में जहाँ भ्रष्टाचारी होना आम बात हो गई है अतः ईमानदार आदमी विरला ही मिलता है फिर राजनीतिक क्षेत्र में तो लगभग नगण्य। स्वयं चौधरी चरणसिंह को आज देश की जनता मात्र एक रूप में जानती है कि वह ईमानदार नेता थे। यही कारण है कि बहुसंख्यकों के बीच चरणसिंह ऐसे राजनीतिज्ञ थे जिसके कारण उन्हें बार–बार पीछे धकेलने का प्रयास किया जाता रहा जबकि वह अपनी बिरादरी (नेताओं) पर भी हमला करने की दलील देते थे उनका इस दिशा में एक ही मूल मंत्र था कि समाज के बड़े नेता और बड़े अधिकारी भ्रष्ट आचरण का परित्याग और नीचे के स्तर का कार्यकर्ता या अधिकारी कभी भ्रष्ट बनने की बात भी नहीं सोचेगा। लेकिन इसके लिए सर्वाधिक ज़िम्मेदारी शासन में बैठे राजनीतिज्ञों की है। अगर उनका स्वयं का आचरण भ्रष्ट है तो वह आम जनता से क्या उम्मीद कर सकते हैं? यदि वह स्वयं ईमानदार हैं तो जनता से सहयोग की अपेक्षा कर सकते हैं अब चूँकि यह रोग कैंसर की तरह फैल चुका है अतः आशावादी बनकर योजनाबद्ध तरीके से अनवरत कार्य किया जाय तो वह इसे मिटा सकते हैं। इसके लिए एक सबल क्रांति की आवश्यकता है जो उत्पादन आदानों या मानवमात्र के आर्थिक व सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन करके ही लायी जा सकती है। लेकिन सवाल यह है कि भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष को सर्वोच्च प्राथमिकता देने वाली बात कैसे प्रभावी हो? क्या नैतिकता और सदाचार के उपदेश देने मात्र से? या ग्रंथ और पुस्तक पढ़ लेने से? **प्रो. गुन्नार मिर्डाल** की विवेचना यहाँ सटीक प्रतीत होती है–

''यदि इस बीमारी पर इसी स्तर पर आक्रमण नहीं किया गया तो इससे निचले स्तरों पर व्याप्त भ्रष्टाचार को संरक्षण मिलेगा। यदि उच्च स्तर पर श्रेष्ठ–निष्ठा का अभाव है तो भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष करना निरर्थक है।''

(दी एशियन ड्रामा)

अतः चौधरी चरणसिंह की यह मान्यता कि नेतृत्व का नैतिक स्तर नीचा है तथा उसे राजनीति में नैतिकता का महत्व स्वीकार्य नहीं है तो भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष करके उसका उपचार करना सम्भव ही नहीं है। उनका कहना है कि हमारी आधी से अधिक औद्योगिक क्षमता सार्वजनिक क्षेत्र में लगी है और यह लगातार बढ़ती जा रही है। जिसका यह दुर्गुण है कि ओवर टाइम और बोनस जैसी बीमारी पैदा हो रही हैं और निकम्मापन बढ़ता जा रहा है तथा उत्पादन वृद्धि घट रही है। अतः या तो विदेशों की तरह से मेहनत करने की आदत डाली जाय और मनोवैज्ञानिक परिवर्तन दिमाग में किया जाये या फिर सार्वजनिक क्षेत्र में सिर्फ बुनियादी ढाँचे वाले प्रयोग ही रहने दिए जायें बाकी घाटे की अर्थव्यवस्था को मुनाफा में बदलने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग निजी क्षेत्र वालों को बेच दिए जायें जैसा कि जापान में किया जाता है, अन्यथा यह कोढ़ बढ़ता ही जायेगा।

10. राष्ट्रभाषा

इतिहास के गर्भ में यह सत्य अंतर्निहित है कि अशोक, विक्रमादित्य और हर्ष के शासनकाल में संस्कृत भाषा ने राष्ट्रीयता का दर्ज़ा पाया था। कालिदास, व्यास और वाल्मीकि के ग्रन्थों में यह राष्ट्रीयता आज भी चित्रित है। अनेक क्षेत्रीय भाषाएं तेलगू, तमिल, मलयालम, बंगाली उसी मातृभाषा की सन्तान हैं और स्वयं हिन्दी भी उसी की देन है, तब फिर आज फिर से भाषा की समस्या क्यों कर खड़ी हो गई? इतिहास की गति को बदल कर एक विदेशी भाषा को थोपने की गलत परम्परा डालते हुए एक ही मातृभाषा भाषियों के बीच इस सवाल पर द्वन्द्व उठाने की साज़िश क्यों हुई और किसके द्वारा हुई?

चौधरी चरण सिंह ने इस सवाल पर बेबाक जवाबदेही की–

''आज़ादी के बाद भारत की भाग्य नौका को खेने का कार्य जिस नाविक के पास था, दुर्भाग्यवश उसके पास भारतीय मस्तिष्क और मानसिकता नहीं थी। बारह वर्ष की अल्पायु से जो पूर्ण युवावस्था हो जाने तक इंग्लैंड में पढ़े, घूमे, रहे, किसी भी भारतीय भाषा की शिक्षा जिसे नहीं दी गई, उसका मन और चिन्तन कैसे भारतीय हो सकता है? यह सर्वविदित है कि पं. नेहरु को गरीब भारतीय जो गाँवों में बसते हैं, की भाषा तो दूर वेशभूषा तक से चिढ़ थी। वह उन्हें गँवार कहकर सम्बोधित किया करते थे। यही कारण है कि आज भारत की भाषायी अक्षमता उसकी सामूहिक प्रगति में, उसकी समग्र जनशक्ति के आगे बढ़ने में दानवीय आकार लेकर बाधक बन गई है, जो उसे एक मन से काम करने व सोचने तक नहीं देती।''

इससे यह बात साफ हो जाती है कि जिस अंग्रेज़ियत ने इस देश की संस्कृति, विचार और भाषा का हश्र किया उसे अपनी पूर्व सीमाओं में बनाए रखने का कार्य देश के तत्कालीन शासक ने किया अन्यथा यह मुल्क आज भाषा विहीन न होता।

महात्मा गाँधी ने कहा था कि देश की राष्ट्रभाषा वह बनेगी जिसे देश के 75 प्रतिशत नागरिकों की भाषा कहलाने का गौरव प्राप्त होगा। फिर आज तक इसप्रश्न पर विवाद क्यों खड़ा किया जाता रहा?

आज इस गरीब मुल्क में भाषा के सवाल पर दो बड़े वर्ग बन गये हैं। एक वर्ग तथाकथित सभ्य लोगों का है जिनकी संख्या आठ–दस प्रतिशत है और जो घरों पर बच्चों को अंग्रेज़ी स्कूलों में पढ़ाने, अंग्रेज़ी में बात–चीत करने और व्यवहार में भी अंग्रेज़ियत को अपनाने में विश्वास करता है। दूसरा वर्ग 80 प्रतिशत लोगों का है जिन्हें राष्ट्रीयता की धारा से जोड़ने का कार्य आज तक नहीं किया गया है। वह अंग्रेज़ियत से नफ़रत करता है और इस भाषाविहीन राज्य का बहुसंख्यक वर्ग का दर्ज़ा प्राप्त किये है। शेष 10 प्रतिशत लोग वह हैं जो अंग्रेज़ियत के टुकड़ों पर पल रहे हैं और स्वयं को अंग्रेज़ों का करीबी और सभ्य समाज का बहुमूल्य अंग साबित करने का दम भरते हैं। शायद यही लोग भाषा के सवाल पर सदैव विवाद पैदा करते हैं।

जहाँ तक चौधरी साहब का सवाल है उनकी बहुत स्पष्ट मान्यतायें थीं। कि आज की स्थिति में तमाम राजनीतिज्ञों से भिन्न भाषा के सवाल पर अपने खुले विचार रखते थे जिनमें उनके प्रारम्भिक जीवन की घटनाओं का अभूतपूर्व योगदान है।

''छात्र जीवन में, लगभग 19–20 वर्ष की आयु में सत्यानन्द द्वारा लिखित महर्षि दयानन्द सरस्वती की जीवनी पढ़ी तथा 'सत्यार्थ प्रकाश' भी पढ़ी मुझे लगा कि बहुत समय बाद भारत में सम्पूर्ण मानव गुणों से युक्त एक तेजस्वी विभूति महर्षि के रूप में प्रकट हुई है। उनके जीवन की एक–एक घटना ने मुझे प्रभावित किया, प्रेरणा दी। स्वधर्म, स्वभाषा, स्वदेशी, स्वराष्ट्र, सादगी सभी भावनाओं से ओत–प्रोत था महर्षि का जीवन। राष्ट्रीयता की भावनायें तो जैसे उनकी रग–रग में ही समायी थीं।

महर्षि की एक विशेषता यह थी कि वह किसी के कन्धे पर चढ़ कर आगे नहीं बढ़े थे। अंग्रेज़ी का एक शब्द भी न जानने के बावजूद हीन भावना ने, आजकल के नेताओं की तरह उन्हें ग्रसित नहीं किया। अपनी हिन्दी भाषा सरल व आम जनता की भाषा में उन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' जैसा महान ग्रन्थ लिखा और समाज की सड़ी गली मान्यताओं पर बड़े जोरदार ढंग से प्रहार किया।

स्वामी जी ने स्वदेशी स्वभाषा पर अभिमान करने की भी प्रेरणा देशवासियों को दी। अंग्रेज़ी को वह विदेश भाषा मानते थे तथा संस्कृत व हिन्दी के प्रबल समर्थक थे। वह प्रायः अपने प्रवचनों में स्वदेशी, अपनी भाषा तथा अपनी वेशभूषा पर बल देते थे। जिन परिवारों में ठहरते थे उनके बच्चों की वेशभूषा पर ध्यान देते थे कि हमें विदेशों की नकल छोड़कर, अपने देश के कपड़े पहनने चाहिये, अपना काम–काज संस्कृत व हिन्दी में ही करना चाहिये।''

यह बात अलग है कि अंतराष्ट्रीय जमात से सम्पर्क साधने की जहाँ आवश्यकता है वहाँ अंग्रेजी पढ़ी जाये किन्तु अंग्रेजियत की गुलामी करना ठीक नहीं।

(स्वामी दयानन्द का मेरे जीवन पर प्रभाव–चरणसिंह धर्मयुग 6 नवम्बर 1977)

उर्दू का सवालः

कांग्रेस ने देश में वोट की राजनीति को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से समय–समय पर हिन्दी–उर्दू का विवाद भी खड़ा किया, जबकि यह दोनों भाषायें एक ही सिक्के के दो पहलू हैं अर्थात् एक ही साहित्य की दो शैलियाँ हैं जो एक दूसरे के बिना अधूरी ही प्रतीत होती हैं और दोनों का संगम भाषा में आकर्षण पैदा करना है और वह पाठक के हृदय को छूता और उद्वेलित करता है। आज तो इसका प्रचलन बहुत बढ़ गया है कि किसी भी क्षेत्र में लिखित पत्र–पत्रिकाओं में उर्दू व फारसी के शब्द देख सकते हैं, जो भाषा के माधुर्य को बढ़ाते हैं। स्वयं चौधरी चरण सिंह की वक्तृता में एक चौथाई शब्द उर्दू के पाये जाते थे। लेकिन उनकी स्वयं की मान्यता भी यही थी कि झगड़ा शब्दों का न होकर लिपी का है, जो कि बाहर से आयी है। जब मुगल और पठान आये तो अरबी, फारसी और अंग्रेज़ आये तो अंग्रेज़ी भाषा और लिपि यहाँ के नागरिकों पर थोप दी गई। यदि लिपि का झगड़ा न रहा होता तो आज देश में दो लिपी नहीं होती और तब सरकारी कार्य में बड़ी दिक्कत आती। चूँकि सारे देश में बोली

जाने वाली प्रदेशीय भाषायें संस्कृत से निकली हैं अतः हिन्दी के काफ़ी क़रीब हैं अतः हिन्दी को समझना आसान है अस्तु देश को एक सूत्र में बाँधने के लिए हिन्दी संस्कृत ही काम आ सकती है।

चौधरी साहब ने इसीलिए त्रिभाषा फार्मूला पर सख़्ती से अमल कराने की पेशकश सदैव की थी जिसमें दक्षिण भारतीय भाषाओं के साथ उर्दू भी आती है। उनका कहना था कि उर्दू को पूरा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये ताकि साहित्य का एक अमूल्य अंश हमसे अछूता न रह जाये क्योंकि इस भाषा की लज़्ज़त और नज़ाकत की अपनी शान है उसे हर हाल में बरकरार रहना ही चाहिये। लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि कांग्रेस की वोट की गन्दी राजनीति और कुछ साम्प्रदायिक तत्वों की साज़िश से हिन्दी–उर्दू का व्यर्थ का विवाद उत्तर भारत में खड़ा हो गया। इसी प्रकार तमिलनाडु में तमिल और हिन्दी के मध्य शत्रुता बना दी गयी है और नेताओं ने इसका भरपूर लाभ उठाया। कुछ नेता तो केवल इसी भाषा के आधार पर विजयी हुये। किन्तु चौधरी चरण सिंह इस स्थान पर अधिक सैद्धान्तिक व व्यावहारिक तरीके से सोचते रहे तथा वोट की खातिर व्यावहारिकता को छुपाकर नाटकीयता का प्रदर्शन कभी नहीं किया। 1969 में जब भारतीय क्रांतिदल चुनाव मैदान में उतरा तो बिजनौर की एक आम सभा में कुछ मुस्लिमश्रोताओं ने चौधरी साहब से खड़े होकर सवाल किया– ''आपका उर्दू के बारे में क्या विचार है!'' चौधरी साहब का उत्तर था– ''अगर आप 85 प्रतिशत हिन्दुओं को राजी कर सकें तो मुझे उर्दू को दूसरी भाषा बनाने में कोई आपत्ति नहीं है। मगर बहुमत की इच्छा के विरुद्ध उर्दू को उन पर थोपना मेरे उसूलों के खिलाफ है। दूसरे हम लोकतंत्र में रह रहे हैं जहाँ निरंकुशता के लिये कोई स्थान नहीं है। यह कार्य मंगोलों, तुर्कों और अंग्रेज़ों ने किया था, मैं नहीं कर सकता और न ही मैं कोई झूठा वादा कर सकता हूँ जैसा कम्यूनिस्ट और सोशलिस्ट करते रहते हैं।'' चौधरी साहब के उत्तर से सभी सन्तुष्ट हो गये और उन प्रश्नकर्ताओं ने सभा के बाद चौधरी साहब की स्पष्टवादिता की भूरि–भूरि प्रशंसा की।

चौधरी साहब का कहना है कि उर्दू भारत के विभाजन के प्रमुख कारणों में से एक थी। यह सवाल बिहार और उ. प्र. के मुसलमानों ने उठाया था और जहाँ मुसलमान बहुमत में थे वहाँ विभाजन का सवाल नहीं उठा, न करॉंची में जहाँ लीग विरोधियों का बहुमत था, न सीमा प्रान्त पंजाब में न बंगाल में। उर्दू के नाम पर ही पाकिस्तान का बँटवारा हुआ क्योंकि जब यह पाकिस्तान की राजभाषा घोषित हुई तो 15 वर्ष के अन्दर ही इसके विरुद्ध असन्तोष भड़क गया और बंगलाभाषा ने यह मनमानी तोड़ दी। पंजाबी और सिंधी लोगों ने भी विरोध का स्वर बुलन्द किया और आज यदि पाकिस्तान में सैनिक तानाशाही न रहे तो सभी अपने सहभाषियों के गले लगने को तैयार हैं। दूसरे देश के विभाजन के समय जिन्ना ने जो स्वयं मात्र अंग्रेज़ी बोलते थे, उर्दू को कौमी भाषा बताकर इसके साथ बड़ा अन्याय किया। उन्हीं के अनुसार यदि फारसी लिपि में लिखित अरबी बहुल उर्दू पाकिस्तान की भाषा है तो भारतीय मुसलमानों की भाषा कैसे हो सकती है? यदि धर्म की समानता के कारण यह उर्दू है तो भारतीय मुसलमानों पर तुर्की, अरबी, उज्बेकी, चीनी आदि अनेक भाषायें विभिन्न विधियों से थोपी जा सकती हैं जो विश्व के अनके देशों के मुसलमानों की भाषायें हैं। वस्तुतः उर्दू का पृथक अस्तित्व या

राजभाषा का दर्ज़ा दिलाने की बात एक राजनीतिक चालबाज़ी थी जिससे इन राजनीतिज्ञों की वोट की राजनीति कारगर होती है। दूसरे मुसलमानों का राष्ट्रीय धारा में जुड़कर पिछड़ेपन से उबरने का मौक़ा हाथ से निकलता है जिससे सत्ताधारी कांग्रेस की पीड़ितों पर शासन करने की मनमानी बरकरार रहती है।

चौधरी साहब की स्पष्ट मान्यता थी कि ''आज़ाद भारत के अनेक मुस्लिम नौजवान हिन्दुओं से अच्छी अंग्रेजी एवं हिन्दी बोलते हैं। उर्दू लेखक फारसी से अधिक देवनागरी लिपि में छपते हैं। तब हिन्दी–उर्दू का विवाद खड़ा करना एक ख़तरनाक साज़िश ही है। जिसमें कांग्रेस का हाथ है जो वस्तुपरक ढंग से विचार करने का अवसर जनता को न देकर भोले–भाले नागरिकों की आँखों में धूल झोंक कर राजनीतिक उल्लू सीधा करने का प्रपंच रचती रहती है और कभी जाति, धर्म, वर्ग और कभी भाषा के नाम पर स्वयं विवाद खड़े करके जनमानस में नफरत भरती है।''

(नई दुनियाँ 14 अगस्त 1982)

हम आज अंग्रेज़ी से आम जन को शिक्षित नहीं कर सकते अतः राष्ट्र निर्माण में राष्ट्रभाषा की भूमिका पर गम्भीरता से विचार कर उसके लिए शिक्षा तथा जनजीवन में अपेक्षित परिवर्तन और सुधार करने पड़ेंगे जिसके लिए राजनीतिक धरातल से अलग हटकर वस्तुपरक ढंग से सोचकर ठोस निर्णय लेना होगा। साथ ही हर क्षेत्रीय भाषा उर्दू भी उसी में आती है को पूर्ण सम्मान दिया जाये तथा अंग्रेजी का तिरस्कार भी न किया जाये सामान्य बोल–चाल के हर शब्द का समावेश भी हिन्दी शब्दकोष में किया जाये।

11॰ जातीय एवं क्षेत्रीयता से दूर सादगीपूर्ण व्यक्तित्व

चौ0 चरण सिंह सादगी पूर्ण जीवन जीते थे इसका अहसास सामान्यजन को हमेशा रहा। किन्तु फिर भी उनके घर पर जाकर बड़े राजनेता आश्चर्य चकित रह जाते थे। पूरे घर में 50 हजार रूपये का सामान भी अपना नहीं था। तुगलक रोड की कोठी उनको दिल्ली की राजनीति में पहुंचने पर मिली थी तथा जीवन की अंतिम सांसों तक वह वहीं बने रहे।

एक बडा हाल जिसमें सरकारी लकडीं के फर्नीचर (सोफा) के अतिरिक्त अपना कुछ नहीं। पलंग के नाम पर सादा लकड़ी की चारपाई सूत/निवाड़ से बनी हुई जिस पर मेरठ के बुनकरों के हाथ से बने हुए दतई, गद्दे, चादर कहीं लगता ही नहीं था कि यह देश के पूर्व प्रधानमंत्री का घर है। एक कमरा (12 ग 12 फीट) का एसी था जिसमें जमीन पर बैठकर पढ़ने लिखने को लकडी की छोटी मेज/तिखटी लकडी की दो छोटी अलमारी जिसमें किताब और पुराने अखबार, पत्रिकाऐं भरी हुई थीं। मिलने वाले कार्यकर्ता इसी कमरे में नीचे जमीन पर अपने चौधरी के सामने बैठकर संक्षेप में अपने अंतःमन से बात करते और संतुष्ट होकर बाहर आ जाते। चौधरी की नीली आंखों में झलकती रोशनी कार्यकर्ता के चेहरे पर नया जोश आत्म विश्वास पैदा कर देती थी। कोठी पर कोई सरकारी गार्ड, सी0आर0पी0, केन्द्रीय पुलिस का पहरा नहीं, कोई रोक–टोक नहीं। अपना घर मानकर यू0पी0, बिहार, उड़ीसा, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, म0प्र0, तमिलनाडू तक के किसान जत्थों में आते तो खुलेपन से मिलकर बतियाते।

जब चौ0 चरण सिंह वित्तमन्त्री बने तो दियासलाई को कुटीर उद्योग का दर्जा देकर बड़े उद्योगों पर टैक्स लगा दिया। इसी तरह तम्बाकू पैदा करने पर टैक्स घटाकर तमिलनाडु और आन्ध्रप्रदेश के किसानों का दिल जीत लिया। तब चौधरी के घर उन किसानों का तांता लगा रहता था, वह बेहिचक मिलते थे।

चौ0 चरण सिंह की राजनैतिक सोच में क्षेत्रीयता एवं जिला प्रेम जैसी आधुनिकता पास नहीं फटकती थी। वह अपने चुनाव क्षेत्र को विधायक या सांसद के रूप में विशेष कृपा–पात्र क्षेत्र बनाने की नीति से दूर थे। छपरौली तहसीलों की ओर से एक प्रतिनिधि मण्डल लगभग 5000 किसानों का आया, बातों–बातों में किसानों ने मांग रख दी कि ''म्हारे क्षेत्र की सड़के बहुत खराब हैं, चौधरी तू अबकी इनको ठीक करा दे वरना राय (वोट) का कमी हो सके।'' इतना सुनते ही चौधरी चरण सिंह आग बबूला हो गए बोले – ''तुमने मुझे जिले की पंचायत के लिए चुनकर भेजा है या प्रदेश और देश की राजनीति के लिए चुना है इसका फैसला कर दो। सारे देश की समस्या आज मेरी समस्या है। मैं क्षेत्रियता कि हिसाब से फैसले लेकर विकास कराउँ यह तुम्हारा सोचना है, तो मैं लोकसभा छोड़ देता हूँ फिर चुनाव भी नहीं लडूंगा। मैं संकीर्ण सोच से काम नहीं कर सकता।'' सभी किसान हतप्रभ से हाथ जोड़कर खड़े हो गए – ना ताउ ना, तू अपणों काम कर हम आगे ये बात ना कहण के।''

ऐसा था यह राष्ट्रीय सोच का व्यक्तित्व ओर उससे प्रंम करने वाली निस्वार्थ जनता। चौ0 चरण सिंह अपने जीवन भर अपनी विधानसभा या लोकसभा में चुनाव प्रचार करने हेतु कभी नहीं जाते थे केवल दो जनसभा करते और किसानों से विदा लेते ''मुझे प्रदेश/देश में दूसरी जगह प्रचार करना है तुम लोग खुद क्षेत्र की राय बना लो।''

जब वह उ0प्र0 की राजनीति में थे तो उनके कद को कम करने एवं चुनाव हटवाने हेतु कांग्रेस का एक धड़ा चंद्रभान गुप्ता के नेतृत्व में सारे हथकंडे अपनाता किन्तु जो भी कांग्रेस प्रत्याशी उतरता वह कभी विधान सभा क्षेत्र में चुनाव प्रचार करने की हिम्मत भी नहीं जुटा पाता, फुर्सत में सोता था। क्षेत्र की जनता खुद अपने को प्रत्याशी मानकर प्रचार करती और रिकार्ड मतों से अपने चौधरी को चुनती, सदा विपक्षी प्रत्याशी की जमानत जब्त होती।

जब चुनाव शुरू होते तो उ0प्र0 के किसान चौधरी की सभाओं में मंच पर चद्दर फैलाकर खुद चंदा करके देते थे। चौ0 साहब ने कभी पूंजीपतियों से चंदा नहीं लिया, यही कारण था कि चुनाव में फंड की कमी के कारण कई प्रत्याशी हार जाते थे, क्योंकि पार्टी की ओर से गरीब किन्तु मेहनती जनप्रिय प्रत्याशी धनाभावमें साक्षात्कार में स्वीकार किया था ''चौधरी के प्रतिनीधि (विधायक) बढ़ जाते यदि धनाभाव नहीं होता।''

चुनाव में जातीयता तक पर रखी :

चौ0 चरण सिंह जब अपने जब अपने उत्कर्ष पर थे तब भी उन्होंने कभी जातिवाद को प्रश्रय नहीं दिया, टिकट बंटवारे में भी नहीं। एक जाति विशेष के बाहुल्य वाले विधान सभा/लोकसभा क्षेत्रों में कम संख्यावल के प्रत्याशी को चुनाव जिता पाना चौ0 साहब का ही करिश्मा था।

आगरा के दयालबाग विधानसभा क्षेत्र में 40 प्रतिशत मतदाता केवल जाट होते हुए भी चौ0 मुल्तान सिंह यादव को 6 प्रतिशत यादव मतदाता होते हुए चनाव जिताया (1974) में, तो प्रो0 श्यामदत्त पालीवाल को (ब्राह्मण 4 प्रतिशत होते हुए) 1977 में जिताया।

इसी प्रकार सादाबाद, जनपद मथुरा में हुकमचंद तिवारी (ब्राह्मण 15 प्रतिशत) तथा श्री रामप्रकाश यादव (यादव दो प्रतिशत) को चुनाव जिताया जबकि जाट 45 प्रतिशत था। वहीं शिकोहाबाद में लोकदल के डॉ0 माथुर (02 प्रतिशत मतदाता) को यादव बाहुल्य (45 प्रतिशत) सीट से कांग्रेस के प्रभावशाली यादव प्रत्याशी को ही हराकर विधायक बनाया था। गाजीपुर जनपथ की सभी 9 सीट लोकदल को दिलाने का रिकार्ड बनाया जबकि वहां जाट नाम की चिड़िया भी नहीं थी।

जनता पार्टी के केन्द्र में सरकार बनने के बाद श्री कर्पूरी ठाकुर (सांसद) को विधायक दल का नेता चौ0 साहब ने बनवाया था। ताकि वह बिहार की सम्पूर्ण पिछड़ी जातियों का प्रतिनिधित्व करते हुए समाजवादी चिंतक के रूप में ईमानदार सरकार बना सकें। किन्तु मुख्यमंत्री बनने के छः माह के अन्दर विधानसभा में पहुँचना आवश्यक था, अतः मधुवनी सीट से कर्पूरी जी विधान सभा चुनाव लड़े तो उनके समक्ष राम जयपात सिंह यादव (कांग्रेस प्रदेश अध्यक्ष) लड़ रहे थे। श्री यादव विहार में यादवों के बड़े लोकप्रिय नेता थे उन्होंने कर्पूरी जी के छक्के छुड़ा दिए, मधुवनी यादव बाहुल्य क्षेत्र था। मजबूरन श्री

कर्पूरी ठाकुर को चौ0 चरण सिंह (तत्कालीन गुहमंत्री – भारत सरकार) के पास आकर दुखड़ा रोना पड़ा कि आपको प्रचार में चलना होगा वरना चुनाव निकालना मुश्किल होगा।

चौ0 चरण सिंह ने चुटकी ली – **''कर्पूरी जी आप तो बिहार के पिछडों के एकछत्र नेता हैं वहां भी मेरी जरूरत है।** '' कर्पूरी जी ने विनम्रता से आग्रह किया चौ0 साहब मुझे शर्मिन्दा ना करें मीटिंग की तारीख बता दें। चुनाव से तीन दिन पूर्व मधुवनी में चौ0 चरण सिंह ने दो लाख की रैली को 1 घण्टे तक सम्बोधित करने के बाद वाक्य बोला – ''**मधुवनी के भाईयों मैंने सुना है कि यहां नया ओजस्वी लड़का कांग्रेस से चुनाव लड़ रहा है, काफी लोग उसके साथ हो लिए हैं, पर मुझे ईमानदारी से बता दो कि वह तुम्हारा लड़का है, मैं तुम्हारा बुजुर्ग हूँ। अब भारतीय संस्कृति में लड़के का हक पहला है या फिर बुजुर्ग का?**'' इतना कहते ही करतल ध्वनि गूंज गई **''चौ0 चरण सिंह हमारा है, हमको दिल से प्यारा है''** बस! जनसभा का संदेश पूरे मधुवनी में फैल गया और कर्पूरी ठाकुर 68000 वोटों से विजयी होकर आये। यह था करिश्मा जातीय सीमाऐं तोड़ने का आज किसी राजनेता में इतना करिश्मा करने की क्षमता है।

12. राजनैतिक उत्तराधिकार

चौ0 चरणसिंह भारतीय राजनीति के ऐसे महारथी रहे हैं जो केवल सत्य पर आधारित बयानवाजी के पक्षधर थे चाहें वह सत्य कितना ही कड़वा क्यों न हो उनकी राजनीति के आधार स्तम्भ बापू एवं सरदार पटेल थे तथा पण्डित नेहरू की राजनैतिक सोच उनसे कहीं मेल नहीं खाती थी यद्यपि वह उनके व्यक्तिगत विरोधी कभी नहीं रहे।

राजनीति में परिवारवाद के वह घोर विरोधी रहे इसी लिए पं0 नेहरू के प्रति वह कभी–कभी अति मुखर विरोध पर उतर आते थे, उनके बाद बेटी या फिर उनके बेटे को राजनैतिक विरासत सौंपा जाना कौन सा जनहितकारी कदम है, जबकि देश तथा कांग्रेस पार्टी में राष्ट्रीय आन्दोलन के अगुआई करने वाले नेताओं की लम्बी फेहरिस्त थी।

चौ0 साहब अपने व्यक्तिगत जीवन में भी इस अवधारणा को मानते रहे। कुछ उनके आलोचक कहते हैं कि आखिर माताजी (उनकी धर्मपत्नी) गायत्री देवी सांसद एवं विधायक बनी तो क्यों? मैंने घुमाफिराकर चौ0 चरण सिंह जी से प्रश्न की गहराई से छानने की कोशिश की तो चौ0 साहब का सधा हुआ उत्तर मिला था **''मैंने कभी अपने परिजनों को राजनीति में उतरने को प्रेरित नहीं किया, न कभी उनको संवल दिया। हाँ कभी विषम परिस्थितियों में जब पार्टी नेताओं में विवाद गहराया और उसका सर्वमान्य समाधान स्थानीय/जिला स्तरीय नेताओं द्वारा निकालकर किसी परिजन को विठाया गया तो पार्टीहित में स्वीकार कर लिया गया।''** जैसे–इगलाश – विधानसभा अलीगढ़ जनपद में पुराने नेता श्री शिवदान सिंह जो पुराने साथी रहे थे, उनकी सीट पर स्थानीय लोगों के दबाव में श्रीमती गायत्री देवी को लड़ाया गया तथा कालांतर में सीट को श्री शिवदान सिंह के बेटे श्री राजेन्द्र सिंह जो सक्रिय राजनीति में थे को सौंप दिया, जो बाद में उ0प्र0 में सिंचाई एवं कृषि मंत्री भी बने। **ऐसी ही स्थिति मथुरा की गोकुल विधानसभा एवं मुजफ्फरनगर की केराना लोकसभा क्षेत्र पर भी पैदा हुई थी जहाँ से कार्यकर्ताओं के दबाव में उनको चुनाव लड़ाया गया तथा कालांतर में वह सीट वापिस स्थानीय कार्यकर्ताओं को ही सौंप दी गयी। एक बार मेरठ की छपरौली सीट जो मेरा विधानसभा क्षेत्र रहा उस पर भी विवाद के चलते बेटी सरोज को चुनाव लड़ना पड़ा था। ''लेकिन इन दोनों माँ, बेटी को मैंने राजनैतिक दखलंदाजी का हक कभी नहीं दिया।''**

''यह भी सत्य है कि मेरे साथ रहने के कारण घर पर पार्टी कार्यकर्ताओं का मन बांटने के लिए तथा उनकी समस्याओं को सुनकर कभी–कभी मुझ तक या मेरे उ0प्र0 के प्रतिनिधियों तक बात पहुंचाने का कार्य गायत्री देवी करती थी; जिससे पार्टी के कार्यकर्ताओं की आत्मीयता बनी रहे। लेकिन शासन में रहते हुए मेरे कामकाज में या पार्टी के संगठन में मेरे किसी परिजन को दखलंदाजी करने का हक नहीं था। इस बावत पार्टीजनों को मेरे स्पष्ट दिशा निर्देश भी थे कि मेरे किसी परिजन के प्रभाव में कोई कार्य नहीं किया जायेगा।''

चौ0 साहब इस बिन्दु पर थोड़े मुखर होकर बोलते थे कि किसान का बेटा किसानी करेगा, सिविल सर्वेन्ट का बेटा भी उसी तालीम को लेना चाहेगा। व्यापारी का बेटा व्यापार करेगा तो **राजनैतिक परिवार का बेटा या बेटी भी राजनीति में जाने का प्रयास करेगा, यह कटु सत्य है। किन्तु ऐसी राजनैतिक फसल नहीं खड़ी की जानी चाहिए कि राजनैतिक विरासत के रूप में नेता बनते हुए उनका जनता से सीधा संवाद नहीं हो बल्कि अपने परिवारिक प्रभाव में वह सीधे उत्तराधिकार प्राप्त कर लेते हैं तो उनका आचरण, व्यवहार एवं सब कुछ सामान्य जनता को ग्राह्य नहीं होता ऐसी राजनैतिक विरासत देश के लिए दुर्भाग्य मात्र होती है। दूसरी ओर राजनैतिक परिवार से निकाला गया नेतृत्य अच्छे संस्कार एवं आचरण लेकर जनता के बीच छोटे तबके तक दीक्षा लेकर उतरता है तो भविष्य में जनहितकारी भी हो सकता है।**

चौ0 चरण सिंह ने नेहरू जी के कार्यालय में (1957) इन्दिरा गांधी को पार्टी अध्यक्ष के रूप में राजनीति की मुख्यधारा में आ जाने के बाद श्री लालबहादुर शास्त्री की केविनेट में इन्दिरा जी को सूचना प्रसारण मंत्री बनाये जाने पर विरोध के स्वर कम कर दिये थे। 1975 में जब देश में आपातकाल लागू किया गया तो इन्दिरा जी के उत्तराधिकार के रूप में श्री संजय गांधी के प्रादुर्भाव का उन्होंने घोर विरोध जनमंच से लेकर विधानसभा तक किया जिसका उल्लेख उनकी विधानसभा गर्जना में किया गया है। दूसरी ओर इन्दिरा जी की हत्या के बाद श्री राजीव गांधी को प्रधानमंत्री बनाये जाने पर चौ0 साहब आहत हुए कि यह कैसी लोकतांत्रिक व्यवस्था है? यह तो राजतंत्र का व्यवहार है।

चौ0 साहब ने 1983 में मथुरा शहर के डैम्पियर नगर में एक जनसभा में बड़ी सहजता से कहा था कि – **''बहिन इन्दिरा जी का बेटा हो, चाहे मेरा बेटा जो जब चह भारत में रहे नहीं विदेश में पले–बढे एवं संस्कारित हुए हैं तो उनको भारतीय संस्कृति एवं आदर्शो का बोध नहीं हो सकता। वह काली गाय और भैंस में अंतर नहीं कर सकते, तो इस ग्रामीण भारत की सियासत को कैसे चला सकते हैं? पहले उन्हें सीखने दो।''**

किन्तु कालांतर में राजीव गांधी अपनी कार्यशैली के दम पर दुबारा प्रधानमंत्री बने वो कुछ सुलझे हुए राजनैतिक तेवर के साथ आये। तभी एक घटना का विवरण श्री शरद यादव ने मुझे बताया – विपक्षी दलों का एक प्रतिनिधि मंडल चौ0 चरण सिंह के नेतृत्व में जन समस्याओं को लेकर श्री राजीव गांधी के प्रधानमंत्री कार्यालय में मिलने गया जिसमें श्री अटल बिहारी वाजपेयी, श्री चन्द्रशेखर, जार्ज फर्नाडीज, श्री रविराय, हेमवती नंदन बहुगुणा, रामकुष्ण हेगड़े एवं शरद यादव शामिल थे। श्री राजीव गांधी ऑफिस में से प्रतिनिधि मंडल की अगुआई करने स्वयं कुर्सी से उठकर गेट तक आये और चौ0 चरण सिंह के चरण स्पर्श कर आशीर्वाद मांगा और प्रतिनिधि मंडल के वरिष्ठ नेताओं से एक घण्टे के वार्तालाप में अपनी मृदुलता एवं सहजता से श्री राजीव गांधी ने चौ0 चरण साहब को द्रवित कर दिया। वापिसी में गेट तक छोड़ने एवं चरण स्पर्श कर आशीर्वाद प्राप्त करने की परम्परा का पुनः निर्वाह किया, तो चौ0 साहब कहने लगे – **''इस लड़के (राजीव) से तो मैं पहली बार मिला हूँ। यह तो बहुत**

शालीन एवं शिष्ट है। जैसा मैंने स्व0 संजय गांधी के बारे में सुना था यह तो उसके ठीक विपरीत स्वभाव एवं आचरण वाला है।''

इस घटना से यह स्पष्ट हो जाता है कि चौ0 चरण सिंह सही बात कहने में अपने–पराये का भेद नहीं करते थे तथा किसी पूर्वाग्रह से ग्रस्त होकर किसी राजनेता के बारे में अपनी राय कभी नहीं बनाते थे।

चौ0 चरण सिंह के इकलौते पुत्र श्री अजीत सिंह 1984 में श्री राम कम्पनी ग्रुप में निदेशक कम्प्यूटर के पद पर पैनसिलवेनिया, अमेरिका से भारत लौट आये थे। उम्र के इस पड़ाव पर एक पिता की इच्छा होती है कि बेटा पास में हो किन्तु उनका राजनैतिक हस्तक्षेप नहीं चाहते थे, इसीलिए श्रीमति गायत्री देवी, उस समय कैराना से सांसद थीं के नाम से मीनावाग, नई दिल्ली में कोठी आवंटित कराने श्री सतपाल मलिक को लगाया तब श्री अजित सिंह को वहीं रहने को कहा तथा तुगलक रोड के अपने सरकारी निवास में अजित सिंह (बेटे) को रखना उचित नहीं समझा। ठीक इसी प्रकार नीलम संजीव रेड्डी ने राष्ट्रपति भवन में अपने डॉक्टर बेटे को रहने से इन्कार कर दिया था। यह उस समय गिने–चुने लोगों के आदर्श थे। उसी कालांतर में (1984) लोक–सभा चुनाव के लिए उ0प्र0 लोकदल एवं संसदीय बोर्ड जिसके अध्यक्ष श्री मुलायम सिंह यादव थे, मथुरा संसदीय सीट के लिए श्री अजित सिंह का नाम प्रस्तावित किया गया तो केन्द्रीय संसदीय बोर्ड की बैठक (जो 16 विंडसरप्लेस स्थित कार्यालय में हो रही थी) में आग बबूला होकर चौ0 चरण सिंह ने कहा–

''जिस व्यक्ति को कोई राजनैतिक अनुभव नहीं देश के किसान एवं गरीबी की जानकारी नहीं उसको राजनीति में उतारकर आप देश में मेरा मजाक बनाना चाहते हैं?'' पहले उसे जनता में जाकर राजनीति सीखने दो। मुलायम सिंह, मैं तुमसे यह उम्मीद नहीं करता था, मैंने सोच–समझकर इतने बडे सूबे का उत्तराधिकार तुम्हें सौंपा है, तुम मेरे सानिध्य में रहकर ट्रेंड हुए हो, ऐसी गलती तुमने क्यों की? मैं तुमसे यह उम्मीद नहीं करता था। मैंने कांग्रेस के परिवारवाद के विरूद्ध लड़ाई लडी आप मेरे उसूलों की मेरे जीवित रहते ही हत्या करना चाहते हैं?'' बोर्ड की बैठक में स्तब्धता छा गयी बडी मुश्किल से श्री बीजू पटनायक, चौ0 देवीलाल, कपूरी ठाकुर एवं जार्ज फर्नाडीज ने चौ0 साहब को सम्भाला – यहाँ तक कि बैठक स्थगित करनी पड़ी।?

जीवन भर उसूलों की राजनीति करने वाले चौ0 चरण सिंह परिवारवाद को राजनीति का घुन करार दिया करते थे। यद्यपि ऐसे नौजवानों जो किसी राजनैतिक परिवार से निकलकर जनता के बीच उतरकर जनसेवा को अपना उद्देश्य बनाकर निचले तबके से राजनीति की मुख्यधारा में आना चाहिए। ऐसे नौजवानों को संरक्षण भी देते थे और पार्टी में स्थान भी दिया करते थे।

जहाँ तक श्री अजित सिंह का प्रश्न है वह चौ0 चरण सिंह की ढलती उम्र की जिज्ञासाओं के आधार पर 1984 में भारत आये तथा राजनीति में उतरने की कोई अभिलाषा अजित सिंह ने अपने जीवन में नहीं पाली थी। चौ0 चरण सिंह के निधन के बाद पश्चिमी उ0प्र0 के विभिन्न जिलों के लगभग एक दर्जन विधायक श्री राजेन्द्र सिंह (अलीगढ) जो उ0प्र0 में मंत्री भी रहे के नेतृत्व में एकजुट होकर श्री

मुलायम सिंह के विरोध में लाविंग करके अजित सिंह को उनके विरोध में राजनीति में उतारने पर आमादा हो गए। यही लोकदल के विखराव का कारण बना और चौ0 चरण सिंह की खून पसीने से सींची गई राजनैतिक विरासत बिखरनी शुरू हो गई। काश! अजित मुलायम मिलकर राजनीति करते। कालांतर में श्री अजित सिंह एवं श्री मुलायम सिंह में वार्तालाप हुआ तो संकट के बादल छट गये थे। दिल्ली की विरासत अजित सिंह को सौंपने की बातकहकर उ0प्र0 में अपनी जड़े मजबूत करने का निर्णय श्री मुलायम सिंह ने कर लिया था। किन्तु इन दो भावी कर्णधारों का समझौता उ0प्र0 के कुछ स्वार्थी जाट नेताओं (विद्यायकों) को पसंद नहीं आया। जो अति महत्वाकांक्षी सोच रखते हुए श्री मुलायम सिंह यादव से अपना हिसाब बराबर करना चाहते थे, उन्होंने महान आत्मा की इस विरासत को बिखेरेने में ऐड़ी–चोटी का जोर लगाकर अंततः इन दोनों को आमने–सामने खड़ा कर दिया और देश की मजबूत ताकत (लोकदल) के बिखराव का बीजा रोपड़ कर दिया। अंततः यह बिखराव भारत की नई राजनैतिक धारा को ले डूबा, जिसे चौ0 चरण सिंह ने 20 वर्षों की तपस्या के द्वारा खड़ा किया था। उड़ीसा, बिहार, राजस्थान, पंजाब, हरियाण, म0प्र0 में छोटी–छोटी पार्टियों से मोती की मालाओं की तरह पिरोकर एक ताना–बाना चौ0 चरण सिंह ने बुना था वह चन्द अति महत्वकांक्षी नेताओं के घृणित कारनामें से जमींदोज हो गया उत्तर भारत तो दूर उ0प्र0 में भी एक बार पूरी किस्ती डूब गयी। पुनः अपने अपने तरीके से श्री मुलायम सिंह एवं श्री अजित सिंह भटकते चले गए और राजनीति के अलग ध्रुव बन गये।

13॰ छात्र एवं युवा राजनीति में सदाचार नैतिकता के पक्षधर

युवाशक्ति को देश के भावी निर्माण की आधारशिला माना जाता है किन्तु जब यह ताकत विध्वंसक हो जाय अथवा पथभ्रष्ट हो जाय तो विनाश का कारण भी बन जाती है। अतः इस को नियंत्रण में रखकर चलाना आवश्यक है। यही मूल मंत्र चौ0 चरण सिंह की राजनैतिक सोच में निहित था।

जब 1969 में चौ0 चरण सिंह दूसरी बार मुख्यमंत्री बने तो उन्होंने विश्वविद्यालय एवं कॉलेजों में छात्र संघों के गठन पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इस कदम का उनकी सरकार में शामिल श्री राजनारायण के सोसलिस्ट साथियों ने विरोध भी किया किन्तु अपनी बेबाकी एवं स्पष्टवादिता से चौ0 चरण साहब ने सभी को संतुष्ट कर दिया। उनका कहना था – ''शिक्षण संस्थाऐं पवित्र स्थ्ल हैं; शिक्षा के मन्दिर हैं, जहाँ छात्र अपने भविष्य का निर्माण करने आते हैं किन्तु देखा जा रहा है कि विगत कुछ वर्षों से चन्द छात्रों के गुट–कबीले बनकर इन संस्थाओं की गरिमा का ह्रास कर रहे हैं।

गांव के गरीबों के बच्चे यहां आकर कुछ पाना चाहते हैं। अपना भविष्य सुधारना चाहते हैं किन्तु कुछ उच्छंखल एवं उद्दण्ड प्रवृत्ति के तथाकथित छात्र दन परिसरों को गंदा कर रहे हैं, वह छात्र राजनीति की आड़ में 10–12–15 वर्ष तक डिग्री कॉलेजों, यूनिवर्सिटी में जमे रहते हैं उनका पढने–लिखने से कोई सरोकार नहीं और ना ही शिक्षा संस्थाओं को चलने देते हैं रोज कुछ न कुछ बहाना लेकर हड़ताल, भूख हड़ताल, आमरण अनशन, धरना, घिराव तोड़फोड़ आदि हथकण्डे अपनाकर शिक्षा व्यवस्था को बिगाड़ रहे हैं। उसमें गरीब घरों के तथा अन्य मेधावी छात्रों का उत्पीड़न होता है। वह मन मसोजकर रोज घर वापिस चले जाते हैं। यह स्थिति अति भयानक है पुलिस एवं प्रशासन भी इन तथकथित छात्रों के आगे नतमस्तक हो जाती है। यदि प्रशासन कुछ छात्रों के विरूद्ध कदम उठाता है तो राजनीतिक संरक्षणदाता आगे आ जाते हैं इससे सभी शहरों का जनजीवन भी प्रभावित हो रहा है तथा गुण्डागर्दी सड़कों पर उतर आयी है। अतः इसको रोकान गया तो हमारे सामाजिक जीवनी का ताना–बाना बिखर जायेगा तथा अघोषितगुण्डाराज प्रदेश की कानून–व्यवस्था को तहस–नहस कर देगा। ऐसी परिस्थितियों में शिक्षण संस्थाओं में कानून व्यवस्था बनानी है तथा उन्हें शिक्षा का मन्दिर बनाना है तो छात्रसंघों पर प्रतिबन्ध लगाकर उनके स्वरूप को बदलना होगा। यह सोच चौ0 चरण सिंह के मनोमस्तिष्क पर छा गयी।

युवा उर्जावान होता है, उसमें अदभ्य क्षमता होती है, कार्य करने और समाज को बदलने की। लेकिन जब चह दिशाहीन या पथ से विमुख होता है विनाश का कारण बन सकता है ठीक उसी तरह जैसे पानी जीवन की बहुमुल्य धरोहर है, जब वह बाढ़ की विभीषिका बनता है तो प्राकृतिक सम्पदा की विनाशलीला बनता है, और जब इसको संजोकर रखा जाये तो यह प्राकृतिक संरक्षण के रचनात्म पहलू में समाहित हो जाता है। अतः नौजवानों की क्षमता को भी बाढ के पानी के तरह सहेजकर रखना होगा

जिससे वह ठीक तरह देश के विकास की नींव का पत्थर बन सके। पानी की बाढ़ की तरह खुला छोड़कर उच्छंखलता और बर्बादी की ओर न बढने दें। इस धारणा से चौ0 चरण सिंह की सोच बनी कि जो मेधावी छात्रों की प्रतिभा यदि निकल सके और समाज के प्रति बेहतर कार्य करने की सोच हो तो छात्र संघ कारगर हैं, अन्यथा शिक्षण संस्थाओं के माहौल को बिगाडने और प्रोफेसनल छात्र राजनीति के वह प्रबल विरोधी थे। अतः छात्र संघों के लिए न्यूनतम मानक बनाकर चुनाव कराये जाने की दृष्टि से छात्र संगठनों पर तात्कालिक प्रतिबंध लगाकर प्रदेश की कानून व्यवस्था को ठीक करने का कार्य भी चौ0 साहब ने किया।

युवा राजनीति के बारे में भी चौ0 साहब की स्पष्ट मान्यता थी कि शिक्षा ग्रहण करने के बाद पारिवारिक जीवन में उतरने तक अर्थात 30–35 वर्ष की आयु तक नौजवानों को राजनीतिक दलों में नहीं जाना चाहिए। क्योंकि जब नौजवान बेरोजगारी की स्थिति में राजनीति करेगा, उसके पास अपने खर्चे चलाने के साधन भी नहीं होंगे वो वह राजनीति करने के लिए चंदा, धंधा, दलाली आदि व्यसनों से जुड जायेगा और अपने गलत कार्यो को संरक्षण पाने हेतु राजनीतिक संरक्षण लेगा और अंततः राजनीतिक स्वरूप बिगडता चला जायेगा। नौजवान पथभ्रष्टता की ओर उन्मुख होंगे, तब राजनीति पवित्रता एवं वैचारिकता समाप्त होकर वह भ्रष्टाचार की ओर मुड़ जायेंगी जिसको अंततः रोक पाना भी संभव नहीं होगा तब की स्थिति इतनी वीभत्स होगी कि सोचने मात्र से ही रूह कांप उठेगी।

इन्हीं विचारों के चलते चौ0 चरण सिंह ने जब 1967 में कांग्रेस से अपने को अलग कर अपनी नयी पार्टी वी0के0डी0 बनायी। पुनः भारतीय लोकदल के गठन तक युवा संगठन गठित नहीं किया था, कालांतर में तब लोकदल का गठन 1974 में किया तो बागपत के युवा विधायक एवं मेरठ कॉलेज छात्रसंघ के जुझारू अध्यक्ष रहे श्री सत्यपाल मलिक एवं अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के अध्यक्ष रहे आरिफ मौहम्मद जो बाद में केन्द्र सरकार में मन्त्री भी बने को युवा संगठन खड़ा करने की जिम्मेदारी सौंपी थी। जनता पार्टी के गठन के बाद श्री शरद यादव को युवा शाखा का अध्यक्ष बनाया जो लम्बे अर्से तक युवा शक्ति को एकजुट करते रहे और केन्द्र में मन्त्री भी बने श्री नीतिश कुमार, श्री लालू प्रसाद यादव, श्री रामविलास पासवान (बिहार), श्री रसीद मसूद, मोहन सिंह, श्री के.सी. त्यागी, श्री राजेन्द्र चौधरी, श्री अशोक वाजपेयी, श्री त्रिलोक त्यागी, श्री उद्यन शर्मा, डॉ0 के0एस0 राना, श्री लालजी वर्मा, प्रो0 रामगोपाल यादव, श्री किरन पाल सिंह, श्री माता प्रसाद पांडे, श्री जगत सिंह, श्री ओमवीर तोमर (उ0प्र0), श्री मोहन प्रकाश, डॉ0 चन्द्रभान, कुँ0 यदुनाथ सिंह (राजस्थान), श्री रमाशंकर सिंह (म0प्र0), श्री ओमप्रकाश चौटाला (हरियाणा), श्री नवीन पटनायक (उड़ीसा), लोकदल के युवासंगठनों की देन थे। जिनको चौ0 चरणसिंह का संरक्षण मिला। कालान्तर में यही नौजवान देश की राजनीति में विभिन्न पार्टियों में स्थापित होते चले गए।

चौ0 चरण सिंह अपने समकालीन गिने–चुने नेताओं में से एक थे जो राजनीति में नैतिकता, शिष्टाचार एवं सदाचार का पाठ भी पढाते थे। एक दिन अपने आवास पर देश के युवा नेताओं से मंत्रणाकर रहे थे। सामने श्री शरद यादव, के.सी. त्यागी, मोहन प्रकाश राजेन्द्र चौधरी रामविलास पासवान बैठे थे तभी

अचानक बेनी प्रसाद वर्मा आ गए वह प्रणाम करते हुए कुर्सियों के बीच से निकले और जल्दी में पीछे खाली पड़ी कुर्सी खींचकर बैठने लगे। चौ0 साहब ने उन्हें रोका बोले दोनों कान पकड़ों तथा वापिस लौटो, जिधर से आये थे। सभी सकते में आ गए। जब वर्मा लौटकर पुनः मांफी मांगने लगे, तो सबसे पूछा बताओ इसने क्या गलती की है? जवाब आया सर बात करते समय बीच में बिना पूछे नहीं आना चाहिए। वर्मा बात को समझ गए थे बोले – सर मुझे बीच में से नहीं निकलना चाहिए था थोड़ा विलम्ब से आने के कारण जल्दबाजी में ऐसा कर बैठा। भविष्य में ऐसी गलती कभी नहीं होगी। चौ0 साहब ने कहा – ''किसी भी बैठक में ऐसा नहीं करोंगे, पीछे होकर जाओ, तब बैठो।'' तब सदाचार एवं नैतिकता पर चौधरी साहब का संदेश शुरू हुआ।

14॰ कांग्रेस ने समर्थन वापिस क्यों लिया?

चाय की चुस्कियों के बीच कोसी रेस्टोरेंट में ही बड़े गूढ़ रहस्य का पर्दा उठा, ऐतिहासिक पृष्ठ तैयार हुआ। बडे विनोदी स्वर में चौ0 साहब ने मीरा के दो भजन सुनाए। तभी मैंने मौके का फायदा उठाते हुए बड़े तरीके से उस राज को जानना चाहा कि आखिर आपको प्रधानमंत्री पद के लिए बिना शर्त समर्थन देने वाली इंदिरा कांग्रेस ने समर्थन वापिस क्यों लिया?

प्रश्नः (लेखक) चौ0 साहब आपने गृहमंत्री एवं वित्तमंत्री के रूप में अल्प समय में ही देश में धाक जमा ली थी यदि आप एक–दो वर्ष पूर्ण कालिक प्रधानमंत्री कांग्रेस समर्थन से बने रहते तो देश के लिए बहुत कुछ कर देते, फिर आपने कांग्रेस समर्थन बनाये रखने का प्रयास क्यों नहीं किया?

उत्तरः (चौ0 चरण सिंह): के0एस0 तुम ठीक कह रहे हो, मैं दो साल भी स्थाई प्रधानमंत्री रहता तो देश के किसान मजदूरों का बहुत भला कर पाता। वित्तमंत्री के रूप में मैंने तम्बाकू किसानों का टैक्स घटाकर दक्षिण भारत के किसानों को राहत दी तथा दिया सलाई बनाने वाली बड़ी फैक्ट्री पर टैक्स लगाकर कुटीर उद्योगों को बढ़ावा दिया, ऐसी ही कई योजना मेरे जहन में थी; किन्तु मैं उसूलों से समझौता करके सत्ता में नहीं रहना चाहता था।

उन्होंने विस्तार से बताया कि इंदिरा जी डरी हुई थीं, शाह कमीशन की जांच से; जो मैंने उनके कार्यकलापों के विरूद्ध गृहमंत्री के रूप में बिठाई थी। अतः मुझे सरकार बनवाकर वह अंदरखाते उस जांच को खत्म कराने का वायदा चाहती थीं, ऐसा मैंने मित्रों से सुना था। यद्यपि मुझसे समर्थन देने हेतु वार्ता करने कांग्रेस के कार्य0अध्यक्ष पं0 कमलापति त्रिपाठी (मेरे पुराने मित्र) एवं लोकसभा में कांग्रेस नेता प्रतिपक्ष – सी0एम0 स्टीफन आये थे तो उन्होंने कोई शर्त नहीं रखी थी। किन्तु श्री राजनारायण जी ने श्री कपित मोहन एवं श्री संजय गांधी के साथ बैठकर कुछ समझौता कर लिया है ऐसी बात मीडिया में उछाली गई। मेरे प्रधानमंत्री पद कीशपथ लेने के बाद सांय 9:00 बजे कमलापति जी ने मुझसे फोन पर अनुरोध किया कि मैं इंदिरा जी का शुक्रिया अदा कर दूँ। मैंने कहा वह हमारे नेता पंडित नेहरू की बेटी हैं तथा लम्बे समय तक प्रधानमंत्री रही हैं उनको धन्यवाद मैं फोन पर नहीं घर पर जाकर ही दूँगा। उसी दिन मैंने निजी सचिव से प्रातःकाल पूर्व प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई एवं इंदिरा जी के यहाँ प्रातः 8:00 एवं 9:00 बजे पहुँचने की सूचना करा दी। किन्तु जब प्रातःकाल मोरारजी के पास पहुँचा तो वह जानबूझकर अहमदाबाद चले गए। तब इंदिरा जी के गेट पर पहुँचते ही मेरी अंतरात्मा कांप उठी कि मीडिया खबर बना लेगा कि चरण सिंह ने इंदिरा के घर पर दस्तक देकर गोपनीय समझौता कर लिया है तथा पहिले उड़ी खबर की पुष्टि करके मेरी चरित्र हत्या की जायेगी। बस इस डर से मैंने इंदिरा जी के गेट से गाड़ी मुड़वा ली और घर वापिस आ गया। जब इंदिरा जी को यह मालूम हुआ तो उन्होंने अपमानित अनुभव किया, बस इतनी सी बात थी जो अंततः समर्थन वापिसी के स्तर तक पहुँच गई। मैंने

उसूलों से समझौता नहीं किया और काफी सोच–समझकर अंतरात्मा की आवाज पर मंत्रिमण्डल का त्यागपत्र देना ही उचित समझा।

हम लोग स्तब्ध रह गए इतनी बड़ी शख्सियत ने जरा सी बात पर यह क्या कर दिया? काशः चौ0 साहब ने थोड़ा नरम रूख एवं समझौतावादी दृष्टिकोण अपनाया होता तो देश की तकदीर बदल सकती थी। बात खत्म हुई, गाड़ी दिल्ली की ओर कूच करने लगी। डेढ़ घण्टे में तुगलक रोड पर पहुँचते ही माताजी गायत्री देवी, श्री के0सी0 त्यागी एवं दूसरे साथी पुलिस सहायक श्री करतार सिंह आदि इंतजार की घड़ी समाप्त कर आगे आये। हमको बड़े कमरे में बुलाकर बिठाया और चौ0 साहब ने श्रीमती गायत्री देवी से नीबू की शिकंजी पिलाने को कहा।

माताजी ने बड़े निराश भाव से कहा कि पता नहीं चीनी होगी कि नहीं, कल तो थी नहीं, खैर हम लोगों ने हल्की मीठी शिंकजी पीकर आगरा की ओर कूच करने हेतु चौ0 साहब से स्वीकृति ली। किन्तु रास्ते भर हम अपने उस अद्वितीय नेता की सादगी पर गर्व करते रहे कि देश के पूर्व प्रधानमंत्री के घर चीनी नहीं रहती, दूसरी ओर तमाम मंत्री, सांसद विधायक तक करोड़ो के मालिक बन जाते हैं और एशोआराम की जिंदगी जीते हैं।

15. श्री मुलायम सिंह यादव को नेता प्रतिपक्ष बनाया

उ0प्र0 में श्री बलराम सिंह यादव प्रभावषाली मिनिष्टर, नगर विकासंमत्री एवं कांग्रेस प्रदेष अध्यक्ष भी रहे थे। पूर्व में इटावा के के.के. कॉलेज में छात्र जीवन में वह श्री मुलायम सिंह यादव के अभिन्न मित्रों में रहे। छात्रावास में भी साथ रहे तथा छात्र संघ चुनावों में एक दूसरे के हमसफर बने रहे। कालांतर में पार्टीगत राजनीति में अलग होते गए। श्री मुलायम सिंह यादव डॉ0 राममनोहर लोहिया की विचारधारा की ओर मुड़ गए और मैनपुरी में चौ0 नत्थूसिंह नेताजी के आषीर्वाद से तथा प्रदेष स्तर पर श्री राजनारायण जी के झंडावरदार बन गए। तथा बहुत छोटी उम्र में 1967 में विधानसभा में पहुँच गए। राजनैतिक महत्वाकांक्षा के टकराव ने इन दोनों दोस्तों को खूनी जंग के मुहाने पर खड़ा कर दिया। 1974 के विधानसभा चुनावों के बाद चौ0 चरणसिंह के नेतृत्व में राष्ट्रीय स्तर पर लोकदल का गठन हुआ तो श्री राजनारायण की संसोपा, उड़ीसा के वीजू पटनायक की उत्कल कांग्रेस, स्वतंत्र पार्टी कुंआराम आर्य मदेरणा की किसान यूनियन (राजस्थान), चौ0 चांदराम, देवीलाल (हरियाणा) आदि को विलय किया गया था।

कालांतर में श्री मुलायम सिंह यादव चौ0 साहब के बहुत करीब आ गए। 1980 में जब मुलायम सिंह यादव विधानसभा चुनाव हार गए तो श्री बलराम सिंह ने अनेक अपराधिक मुकद्में उनके विरूद्ध आरोपित कर दिए। इन परिस्थितियों में चौ0 साहब ने श्री मुलायम सिंह यादव को विधान परिषद में भेज दिया। फिर शुरू हुआ यादवी गैंगवार जिसकी गूंज दिल्ली–लखनऊ तक पहुंचती रही। किन्तु इन घटनाक्रमों से चरणसिंह जी आहत हो गए तो उन्होंने श्री शिवप्रसाद गुप्त जो उस समय कार्यवाहक विधानपरिषद अध्यक्ष थे, को अपने पास दिल्ली बुलाया। उनसे कहा कि इस लड़के (मुलायम सिंह) की जान को खतरा है मुझे इसकी सुरक्षा चाहिए। यदि आप कोई युक्ति निकालकर इसे सदन में नेता प्रतिपक्ष बनवा दें तो इसका जीवन सुरक्षित हो सकता है। श्री गुप्त ने सुझाव दिया कि इस समय सदन की संख्या आधी से भी कम है। केवल दो विधान परिषद सदस्य पार्टी में जुड़ जायें तो मैं निर्णय कर दूँगा। बात चौधरी साहब की समझ में आ गई। उस समय चौधरी के दामाद श्री गुरुदत्त सोलंकी (खेरागढ़, आगरा) उच्च सदन में निर्दलीय रूप में थे। क्योंकि उनसे नाराजगी के चलते स्वयं चौ0 चरण सिंह ने उन्हें पार्टी से निकाल दिया था। पार्टी के वरिष्ठ नेताओं ने प्रयास करके पुनः श्री सोलंकी को पार्टी में शामिल कराया। दूसरे श्री बलवीर सिंह दवधुआ मेरठ से शिक्षक सीट से एम.एल.सी. थे।

चौ0 साहब एक कार्यक्रम में मंसूरी गये तो लौटते समय श्री दवधुआ के घर चल पड़े। श्री करतार सिंह (सुरक्षा कर्मी) एवं मा. ओमपाल सिंह साथ थे। रात के 11:00 बजे थे, श्री करतार सिंह ने दवथुआ के घर की घण्टी बजाई तो जाड़े में नंगे पैर वह उठकर गेट पर आये। जब ज्ञात हुआ कि चौ0 चरण सिंह दरवाजे पर खड़े हैं, तो श्री दवथुआ पानी–पानी हो गए उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा; राष्ट्रपुरुष दरवाजे पर खड़ा है, बिना किसी सूचना के! दवथुआ को गले से लगाते हुए चौ0 साहब ने स्पष्ट कहा– **"भैया तुमको मैंने रात में परेशान किया मैं बड़े कष्ट में हूँ, इसका निदान तुम कर सकते**

हो, मुझे बचन दो, मेरी बात मानोगे? श्री दवथुआ के आश्चर्य का ठिकाना न रहा– बोले मैं अदना सा आदमी भला आपके किसी काम आ सकूँ इससे बड़ा मेरा अहोभाग्य क्या होगा? चौ0 साहब घर के अंदर पहुँचे और गाड़ी में से लोकदल सदस्यता का फार्म मंगाकर बिना घुमाऐ–फिराए सीधे बोले–**''तुम एक महीने को सदन में लोकदल के एसोसिएट मैम्बर बन जाओ। नेता प्रतिपक्ष का चुनाव हो जाये तो भले वापिस लौट जाना। मैं दबाव नहीं दे रहा। आज हमारे लड़के (मुलायम सिंह) की जान खतरे में है अतः मैं उसे नेता प्रतिपक्ष बनवाकर सुरक्षित करना चाहता हूँ।''** श्री दवथुआ ने तुरंत लोकदल सदस्यता फार्म पर हस्ताक्षर कर दिए। कालांतर में वह पुनः शिक्षक विधायक के मूलरूप में सदन में लौट आये। इस प्रकार चौ0 साहब ने श्री मुलायम सिंह को उत्तर प्रदेश में अपना उत्तराधिकार निर्विघ्न रूप से सौंपने की ओर एक कदम बढ़ा दिया था।

अंततः अस्सी के दषक में ही चौ0 चरणसिंह ने उ0प्र0 में अपना उत्तराधिकार श्री मुलायम सिंह यादव को सौंपते हुए प्रदेष अध्यक्ष बना दिया तथा कालांतर में (1985) में श्री राजेन्द्र सिंह (अलीगढ़) को हटाकर विधानसभा में नेता प्रतिपक्ष भी बनाया था ताकि प्रदेश के यादवों में सही संकेत जाये। क्योंकि मुलायम सिंह उनके भरोसे के सारथी एवं मेहनती थे। दूसरी ओर रामनरेश यादव की कार्यप्रणाली से वह खुश नहीं थे। उन्हें मुख्यमंत्री से भी हटाना पड़ा था (1979) उसका विकल्प मुलायम सिंह ही बन सकते थे। श्री राजेन्द्र सिंह को जाट होने के नाते तथा कुछ वित्तीय आरोपों के कारण भी चौधरी प्रदेश नेतृत्व सौंपना नहीं चाहते थे। यह थी चौ0 चरण सिंह की दूरदृष्टिता थी कि दूसरी श्रेणी में कहां कौन नेतृत्वकर्त्ता होगा।

16॰ श्री उदयन शर्मा को लोकसभा लड़ाकर रिस्ता निभाया

पं0 श्रीराम शर्मा स्वाधीनता सेनानी के साथ चौ0 साहब के छात्र जीवन से ही निकट सम्बन्धों में रहे थे। 1925 में चौ0 साहब को गाँधीजी के आव्हान पर दलितों के साथ सहभोज करने के आरोप में आगरा कॉलेज के छात्रावास से (छठी कोठी – अब जे0पी0 हॉस्टल) निकाल दिया गया, तो चौ0 चरण सिंह पण्डित जी के घर पर ही दो माह तक खाना खाते रहे थे। इन सम्बन्धों में प्रगाड़ता उनके दोनों पुत्रों प्रो0 रमेश कुमार षर्मा (कश्मीर यूनिवर्सिटी) एवं श्री उदयन शर्मा (सम्पादक– रविवार, आनन्द बाजार पत्रिका) ने भी बना रखी थी।

चौ0 चरणसिंह जब केन्द्र की राजनीति में पहुँचे तो श्री उदयन शर्मा ने चौधरी साहब को मीडिया से पूरा सहयोग किया। वह चौधरी साहब की ईमानदारी से इतने प्रभावित थे कि उनके लिए गोपनीय तरीके से चौधरी साहब के लेफ्टिनेंट श्री सत्यपाल मलिक एवं श्री के0 सी0 त्यागी के सानिध्य में तथा पत्रकार जगत उनका सम्मान करता था। राजनैतिक लाविंग का कार्य भी करते रहते थे। क्योंकि उदयन शर्मा की गिनती देश के जाने–माने पत्रकारों में थी अतः सभी दलों के शीर्ष नेताओं से उनके निकटतम सम्पर्क बने रहते थे।

उधर 1984 के चुनावों के द्वारा राजनीति की नई पारी की शुरूआत करने हेतु चौ0 चरण सिंह के नेतृत्व में देश में एक नई टीम तैयार हो रही थी। इसमें सर्वश्री शरद यादव, लालू यादव, रामविलास पासवान, नीतिश कुमार, (बिहार), कु0 यदुनाथ सिंह, श्री मोहन प्रकाश, डॉ0 चन्द्रभान (राजस्थान), श्री मुलायम सिंह, के0सी0 त्यागी, बेनी प्रसाद वर्मा, सतपाल मलिक, मोहन सिंह, आरिफ मौहम्मद, रसीद मंसूर, राजेन्द्र चौधरी, हरेन्द्र मलिक, किरनपाल सिंह, आजम खान आदि उ0प्र0 से थे। यह सभी लोग किसी न किसी रूप में श्री उदयन शर्मा से जुड़े रहते थे।

लोकसभा चुनावों में प्रत्याशियों के चयन हेतु लोकदल संसदीय बोर्ड की बैठक भिन्न प्रदेशों में चल रही थीं। उ0प्र0 में आगरा की लोकसभा सीट महत्वपूर्ण होने के नाते लोकदल प्रदेश अध्यक्ष श्री मुलायम सिंह यादव एवं नेता प्रतिपक्ष श्री राजेन्द्र सिंह (पूर्व कृषि एवं सिंचाई मंत्री उ0प्र0) को विशेष निर्देष चौधरी चरण सिंह जी ने जारी किए थे कि आगरा का संदेश पूरे देश में जायेगा अतः अच्छा जिताऊ प्रत्याशी खोजो। आगरा शहर लोकसभा सीट पर वैश्य, पिछड़े एवं मुस्लिम समुदाय की सर्वाधिक संख्या होने के कारण इन दोनों नेताओं ने प्रदेश में सहमति बनाते हुए श्री शिवप्रसाद गुप्ता (उप सभापति विधान परिषद) श्री आनंद प्रकाश जैन (नगर अध्यक्ष–लोकदल) तथा हाजी इस्लाम कुरैशी के नाम बोर्ड की प्रस्तावित सूची में रखे थे।

लेखक (डॉ0 के0एस0राना) जो उस समय युवा लोकदल उ0प्र0 के कार्यकारी अध्यक्ष थे, ने वक्त की नजाकत को समझकर आगरा में लोकदल को प्रभावी बनाने की रणनीति पर सभी साथियों से विचार किया। श्री उदयन शर्मा के आवास बल्कावस्ती, आगरा पर दो घण्टे की मशक्कत के बाद पत्रकार मित्र श्री राजीव शुक्ला, श्री हर्षदेव, राजीव सक्सैना, अनुराग शुक्ला आदि से मिलकर उदयन जी को आगरा

से लोकसभा लड़ने को तैयार किया गया। किन्तु उदयन इस शर्त के साथ तैयार हुए कि वह स्वयं अपनी ओर से चौधरी से कुछ नहीं कहेंगे पार्टी की ओर से ऑफर दिया जाये, इस बात को केवल डॉ0 राना, राजेन्द्र चौधरी को साथ लेकर अपने स्तर से सुनियोजित तरीके से सीधे चौधरी साहब के सामने रखेंगे।

बस! मुझे अच्छा मौका मिल गया, एक तो अपने मित्र के काम आने का, दूसरे लोकदल की जड़े आगरा में जमाने का। मैंने यू0पी0 भवन में जाकर श्री राजेन्द्र सिंह (नेता प्रतिपक्ष) को समझाने का प्रयास करते हुए अपना प्रस्ताव रखा। राजेन्द्र सिंह उखड़ गये, बोले– ''आगरा वैश्यों की राजधानी है, वहाँ उदयन का क्या मतलब?'' अंततः वह इस बात पर आ गए कि या तो श्री मुलायम सिंह को तैयार करलो, जिसकी संभावना कम है या फिर सीधे चौधरी साहब से बात करो, अपनी पूरी यूथ मण्डली को लेकर, अन्यथा मैं इसमें सहयोग नहीं कर सकता।'' मैंने तुरन्त कमरा नं0 208 में श्री मुलायम सिंह यादव से भेंट की। मेरा प्रस्ताव सुनकर एक सधे राजनीतिज्ञ की तरह वह प्रभावित हुए तथा कहा के0एस0 तुमसे मैं तो सहमत हूँ, राजेन्द्र चौधरी और शरद जी को लेकर चौधरी साहब की कोठी पर पहुंचो, मैंवहीं आ रहा हूँ जो भी होगा वहीं फैसला हो जायेगा।

चौधरी साहब के समक्ष मैंने बड़े अलंकृत तरीके से पार्टी के व्यापक हित तथा दूरगामी परिणामों की ओर संकेत देते हुए बात रखते हुए कहा– **''चौ0 साहब उदयन शर्मा को आगरा से लड़ा दो, हो सकता है हम सीट न जीत सकें किन्तु संदेश पूरे देश में बहुत अच्छा जायेगा। बुद्धिजीवी पार्टी से जुड़ेगा, दूसरे आगरा में एक नया वर्ग पार्टी से जुड़ेगा। उदयन शर्मा की छवि देशभर में अल्प संख्यकों में भी बहुत अच्छे पत्रकार की है। अन्य पहलू यह है कि भाजपा, कांग्रेस के रहते वैश्य समुदाय पार्टी प्रत्याशी को वोट नहीं देगा, चाहे प्रत्याशी कोई भी हो, यदि आपका आदेश होगा तो उदयन लड़ सकता है। हम जी तोड़ मेहनत करेंगे, निकालेंगे।''**

चौधरी साहब को बात समझने में देर नहीं लगी, बोले यह तो बहुत अच्छी बात है, मैं एक अहसान चुका पाऊँगा वह लड़का (उदयन) बहुत अच्छा है। तुम लोग जाकर उसे तैयार करो, नहीं माने तो मेरे पास लाओ। बात बन गई; उदयन जैसा चाहते थे, ठीक उसी तरह। सायंकाल उदयन को लेकर मैं, के0सी0 त्यागी और राजेन्द्र चौधरी– चौधरी साहब के पास पुनः पहुँचे। बात सीधे चौधरी साहब ने शुरू की, उदयन इन लड़कों की बात तुमने मान ली? उदयन नाटकीय तरीके से कहने लगे ''चौ0 साहब राजनीति में उतरने का पाप मुझसे न कराओ, मैं तो ऐसे ही आपकी सेवा करने में ही खुश हूँ।''

चौधरी साहब ने मुस्कराते हुए कहा– **''भईया मैं दयानंद जी का अनुयायी हूँ अतः जाति धर्म में विष्वास नहीं करता, किन्तु इस देश की सामाजिक व्यवस्था के यथार्थ को समझता हूँ। मैंने सदैव अपनी पार्टी का महासचिव ब्राह्मण ही बनाया, क्योंकि योग्यता उनके जीन में है। तुझे मैं पार्टी से लड़ाकर तो दोहरा कार्य करूँगा। एक तो इस वर्ग में पार्टी की पैठ बढ़ेगी, दूसरे तुम्हारे परिवार से वचपन के सम्बन्धों के अहसान कुछ हद तक चुका पाऊँगा। मैं तुम पर कोई अहसान नहीं कर रहा।''**

इतना कहते ही उदयन शर्मा की आँखे भर आयीं, वह चौधरी साहब के पैरों में नतमस्तक होकर बोले। मुझे शर्मिन्दा न करें, जो भी आपका आदेश होगा मैं पालन करूँगा। आपकी तरह ही मैंने कभी जाति, धर्म में विश्वास नहीं किया, इसी समरूपी गुण के कारण मैं आपका असीम सम्मान करता हूँ।

बस फैसला हो ही गया। श्री मुलायम सिंह जी को यू0पी0 भवन में फोन पर सूचना दी, 12 तुगलक रोड आ जायें, प्रत्याशियों के चयन का रजिस्टर लेकर। वह तुरंत पहुंचे, बात सुनकर वह खुशी से उछल पड़े, संसदीय बोर्ड के पैनल में उदयन का नाम जोड़ा गया अंततः बोर्ड की बैठक में फाइनल हो गया, शिव प्रसाद गुप्त पिछड़ गए। चुनाव की डुगडुगी बजी। तो संतुष्ट करने के लिए चुनाव संचालन समिति का संयोजक शिवप्रसाद गुप्त को बना दिया गया तथा सह संयोजक डॉ0 के. एस. राना एवं हाजी इस्लाम बने। मैं उदयन के साथ पुनः दोन दिन बाद चौधरी साहब से मिला। पार्टी फण्ड से कुछ मदद करा देने की बात भी स्वीकार हो गई। किन्तु– उदयन की प्रतिभा इतनी थी कि अपने आप फण्ड आता रहा।

चुनाव के बीच प्रातः 9 बजे किरावली मीटिंग करके नदवई डीग (भरतपुर), अलवर जनसभाओं में चौ0 साहब को जाना था वह दिल्ली से मथुरा मीटिंग करके आ गए तथा सर्किट हाउस पर रूके। उदयन के चुनाव के कर्ता धर्ता बुलाए गए श्री मुलायम सिंह यादव (प्रदेश दमकिपा अध्यक्ष) इटावा से कार द्वारा आ गए थे। सर्किट हाउस में गोपनीय बैठक करके हालात की जानकारी ली। प्रो0 रमेश कुमार शर्मा (उदयन के बड़े भाई) ने पार्टी के एक स्थानीय विधायक की कार्यशैली की शिकायतें की तथा चुनाव में व्यवस्था बिगाड़ने का भी आरोप लगाया। सभी लोगों की ओर मुखातित होते हुए चौ0 साहब ने पुष्टि करानी चाही तो सभी ने सिर हिलाकर मौन स्वीकृति दी। चौ0 साहब ने श्री मुलायम सिंह से कहा – ''मैं कल राजस्थान जा रहा हूँ तुम पूरी रिपोर्ट लेकर उसे पार्टी से निष्कासित कर दो, मुझे भी रिपोर्ट देना, मुझे हर हाल में उदयन लोकसभा में चाहिए, उसके चुनाव में कोई कमी न रहें तुम खुद नजर रखना। जरूरत समझो तो अकोला ब्लॉक पर दूसरी सभा करा लेना।''

इससे चुनाव के प्रति उनकी गंभीरता को सभी ने समझ लिया। समां बंध गया, देहात एकजुट हो गया। उन दिनों अल्पसंख्यकों के मसीहा श्री हेमवती नंदन बहुगुणा लोकदल (दमकिपा) में उपाध्यक्ष थे, फारूख अब्दुल्ला (मुख्यमन्त्री कश्मीर) थे, दोनों आगरा दौरे पर आये। आगरा कॉलेज के हण्टले हाउस पर दोनों की जोरदार सभा करायी गई। अभूतपूर्व उत्साह मुस्लिमों में था। मुस्लिम नौजवान दोनों नेताओं को कंधे पर बिठा मोहल्लों में घूमे। लेकिन शहर का वोटिंग प्रतिशत गिरा, किन्तु देहात में चौधरी की दो सभाऐं हुईं; उनकी अपील पर भयंकर कोहरे के मौसममें भी 80 प्रतिशत वोट पड़ा। उदयन को अंत तक अफसोस रहा कि अपने (सजातीय) ही धोखा दे गए। श्री निहाल सिंह जैन कांग्रेस (इ.)सत्रह हजार वोट से विजयी हो गए। देहात में चुनाव परिणाम सुनकर सन्नाटा छा गया। कुछ घरों में तो खाना नहीं पका। किन्तु चुनाव हारकर भी उदयन हीरो बन गए। जनता उनको हाथों–हाथ लेती रही। वह आजीवन चौ0 साहब के प्रशंसक बने रहे।

चौ0 साहब के निधन के बाद श्री उदयन शर्मा श्री राजीव गाँधी के अभिन्न मित्र बन गए। म0प्र0 (भिण्ड) से दो बार लोकसभा चुनाव कांग्रेस के टिकट पर भी लड़े, यद्यपि चुनाव वहाँ भी नहीं जीते किन्तु देशभर में उनकी पहिचान बढ़ती रही। परिवार की पृष्ठभूमि से बहुत ऊँचाई तक राष्ट्रीय राजनीति में; किन्तु पत्रकारिता के मिशन को उन्होंने कभी नहीं छोड़ा। सहारा समाचार पत्र समूह फिर अमर उजाला पत्र समूह के सलाहकार सम्पादक बने। ईश्वर को मंजूर न था उदयन को लम्बा जीवन देना, उनका ब्रेन की समस्या में असामयिक निधन हो गया। मेरे जैसे देशभर के तमाम मित्र ठगे से रह गए।

17॰ भिंडरवाला की आतंकी धमकी से भी नहीं घबराये चौधरी

पंजाब के आतंकवाद की ज्वाला अपने चरम पर थी। भिंडरवाला के नाम से राजनेता कांपते थे। भिंडरवाला की आतंकी धमकी की घटना की बात सुनकर एक सप्ताह तक पंजाब, हरियाणा, उ0प्र0 के किसानों ने चौ0 साहब के घर पर डेरा जमा लिया कि आपकी सुरक्षा हम करेंगे। तब बड़ी मुश्किल से चौ0 साहब ने किसानों को समझाकर वापिस लौटाया। फिर भी कोई सरकारी सुरक्षा स्वीकार नहीं की। यह था उनका आत्मविश्वास कि कोई आतंकवादी मेरे पर हाथ नहीं उठा सकता।

चौ0 साहब ने लोकदल केन्द्रीय कार्यालय पर प्रेस वार्ता, करके भिंडरवाला को चेतावनी दे दी कि– वह हिंसा का रास्ता छोड़े तथा राष्ट्र विरोधी हरकतों से बाज आयें। पंजाब भारत का अभिन्न अंग है तथा सिख धर्म मूलतः हिन्दू धर्म से उपजा है। आजादी के आंदोलन में सिखों का अभूतपूर्व योगदान रहा है। कोई सिख भाई भिंडरवाला जैसे आतंकवादी के बहकावे में न आये। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि सिखों से बड़ा राष्ट्रभक्त हिन्दुस्तानी आज भी दूसरा कोई नहीं हैं। भिंडरवाला को तो स्वयं बहिन इंदिरा ने ही हीरो बनाया था क्योंकि अकाली दल जो हमारे साथ था, उसे वह नीचा दिखाना चाहती थीं। किन्तु असामाजिक/आतंकवादी व्यक्ति किसी का सगा नहीं होता वह पंजाब में नौजवानों को गुमराह करके खून खराबा करा रहा है। यह आगे इंदिरा जी एवं उनकी कांग्रेस को ही खा जायेगा। चौधरी साहब की बात सही सिद्ध हुई। इंदिरा जी की हत्या और उत्तर भारत में खून खराबा होता गया, तथा दिल्ली एवं पंजाब से कांग्रेस साफ हो गई थी।

इसी कालांतर में आगरा में जून 1983 में आगरा के **दैनिक अमर उजाला** के मालिक एवं प्रधान सम्पादक श्री डोरीलाल अग्रवाल की बेटी की शादीक्लार्क्स सिराज होटल में थी। वह चौ0 चरण सिंह जी के प्रिय मित्र थे अतः ताज एक्सप्रेस ट्रेन से आगरा आये तथा सर्किट हाउस में ठहरे थे। उक्त शादी में बाबू जगजीवन राम, हेमवती नंदन बहुगुणा, नारायण दत्त तिवारी, फिजी में उच्चायुक्त रहे कै0 भगवान सिंह भी आये थे। तभी जिले के कार्यकर्त्ता बड़ी संख्या में सर्किट हाउस पहुँच गए; यद्यपि चौ0 साहब के आने की सूचना गोपनीय थी। चौ0 साहब सर्किट हाउस में खुले में लॉन की घास में नीचे आकर बैठ गए आधे घण्टे कार्यकर्त्ताओं के हालचाल पूँछते हुए गप–शप करते रहे, फिर खड़े होकर सभी को हिदायत दी कि मेरे साथ बिना निमंत्रण वाला कोई व्यक्ति शादी में नहीं जायेगा। सभी यहीं बैठेंगे या घर चले जायें मैं लौटकर आधा घण्टे में आता हूँ।

चौ0 साहब सर्किट हाउस से स्थानीय लोकदल नगर अध्यक्ष श्री आनंद प्रकाश जैन की गाड़ी में लेखक– डॉ0 के0एस0 राना जो उस समय युवा लोकदल के प्रांतीय कार्य0 अध्यक्ष थे, को साथ लेकर होटल में शादी में शामिल होने गए तथा एक गिलास जूस पीकर, हल्का नास्ता लेकर सर्किट हाउस में वापिस लौट आये, खाना नहीं खाया। लौटकर हम दोनों ने कहा चौ0 साहब यहाँ खाने के लिए दाल, सब्जी बनवा देते हैं, तो तपाक से कहा – ''नहीं कर्मचारी को परेशान मत करो एक गिलास दूध एवं

एक आम ले आयो बस कैलोरी पूरी हो जायेगी।'' हमारे दूसरी बार कहने के बाद भी अंततः वह अडिग रहे। आम तथा दूध लेकर सोने चलने लगे तभी डी0एम0 का प्रतिनिधि फैक्स लेकर आया।

दिल्ली गुप्तचर विभाग के हवाले से सूचना थी कि चौ0 साहब ट्रेन से न लौटें आतंकवादी खतरा है। चौ0 साहब ने बड़ी सहजता से लिया। सुरक्षा सहायक बाबूराम यादव जो चौ0 साहब के साथ आये थे को घवराहट हुई उसने हमसे कहा – आप समझायें, तब मैंने आनंद जैन एवं ए0डी0एम0(प्रो0) के साथ बहुत अनुरोध किया चौ0 साहब शासन की सूचना की अनदेखी न करें कैसी भी घटना घटित हो सकती है ट्रेन विस्फोट, डिरेलमेंट आदि। चौ0 साहब बड़ी सादगी से बोले, ''भैया मेरे पास तो टैक्सी के पैसे नहीं होंगे तब कैसे पहुँचुँगा।'' मैंने हंसते हुए कहा चौ0 साहब आपके कार्यकर्त्ता, पदाधिकारी इतने सक्षम हैं कि प्रातः इसी गाड़ी (अम्बेसडर) से दिल्ली पहुँचा देंगे। अंततः बड़ी मुश्किल से वह मान गए तथा हम दोनों को हिदायत दी कि प्रातः पाँच बजे यहाँ दूध, पकौड़े बनवाकर लाना मैं लॉन में घूमता मिलूँगा।

प्रातःकाल जब हम पहुँचे तो वह निश्चिंत भाव से नंगे पैर सर्किट हाउस की घास पर घूम रहे थे। वेसन के पकौड़े एवं वोर्नवीटा वाला दूध पीकर हमारे साथ गाड़ी से चल दिए। गाड़ी की स्पीड 100 से नीचे आते ही वह झल्लाने लगते – ''भईया कब तक पहुँचाओगे।'' मैंने अनुरोध किया चौ0 साहब पीछे पुलिस की सुरक्षा जीप चल रही है वह अम्बेसडर कार के साथ तेजी से नहीं चल सकती। सिपाही, दरोगा की नौकरी का सवाल है, वह पीछे छूट जाती है अतः उनके इशारे पर ही स्पीड कम करनी होती है। अंततः मथुरा जिले की पुलिस पिकेट कोसी में बदलकर हरयाणा की पुलिस आनी थी अतः हमने कोसी रेस्टोरेंट (यू.पी. टूरिज्म) में गाड़ी मोड़ ली और चौ0 साहब तथा स्टाफ/पुलिस को चाय पीने का अनुरोध किया। कुछ इधर–उधर की गपशप चलने लगीं।

18. जनसभा स्थल पर जिलाधिकारी का निलम्बन किया

1977 के लोकसभा चुनाव में उत्तर भारत में नौ प्रदेशों से कांग्रेस का पूर्णतः सफाया हो गया था। एकमात्र कांग्रेस सांसद श्री नाथूराम मिर्धा नागौड़ (राजस्थान) से जीत सके थे। इन प्रदेषों में टिकट वितरण से लेकर चुनाव अभियान तक की कमान पूरी तरह चौ0 साहब के हाथों में रही थी; वह उत्तर भारत के प्रभारी एवं जनता पार्टी के अकेले राष्ट्रीय उपाध्यक्ष थे। अतः उनकी राष्ट्रीय स्तर पर पहिचान एक नम्बर के नेता के रूप में थी यद्यपि समझौते के आधार पर आचार्य कृपलानी एवं श्री जय प्रकाश जी ने मोरारजी भाई को प्रधानमंत्री बनाया था। चौ0 साहब को सरदार पटेल की संज्ञा देते हुए गृहमंत्री बनाया गया था। उसके छः माह बाद उत्तर भारत की सभी विधान सभा भंग कर राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया तथा नये चुनाव कराकर जनभावनाओं का सम्मान किया गया। यह कार्य क्योंकि गृहमंत्री के रूप में पहल करते हुए चौ0 साहब ने ही कराया था अतः विधानसभा चुनाव अभियान में भी गुरुत्तर भार (चुनाव अभियान समिति संयोजक विगत लोकसभा की तरह) चौ0 चरण सिंह के कंधों पर ही था। उन्होंने बड़े तार्किक ढंग से पार्टी को पुनः विधान सभाओं में विजयश्री दिलाई तथा मुख्यमंत्री पदों का भी बंटबारा कर उ0प्र0 में रामनरेष यादव, हरियाणा में चौ0 देवीलाल, पंजाब में प्रकाष सिंह बादल, उड़ीसा में श्री बीजू पटनायक, बिहार में श्री कर्पूरी ठाकुर को अपने कोटे (लोकदल) से मुख्यमंत्री बनाया तथा राजस्थान, मध्यप्रदेश, हिमाचल, महाराष्ट्र भाजपा खेमें तथा अन्य प्रदेशों में संगठन कांग्रेस (मोरारजी गुट) एवं कम्युनिष्ट पार्टी को सौंप दिया था। समाजवादी पार्टी के दोनों गुट लोकदल में समाहित हो चुके थे अतः वह चौधरी साहब के नेतृत्व एवं निर्देष पर ही साथ थे।

विधानसभा चुनावों के अभियान में तूफानी दौरा करते हुए गृहमंत्री के रूप में जब चौ0 चरण सिंह आगरा के रामलीला मैदान में जनसभा को सम्बोधित करने मंच पर चढ़ रहे थे तो तात्कालीन जिलाधिकारी श्री माता प्रसाद उन्हें गाड़ी से मंच तक पहुँचाने आये। मंच के पास आकर जब जिलाधिकारी ने परिचय दिया तो चौधरी साहब आश्चर्यचकित हो गए। बोले– **''क्या आपातकाल में आप ही डी0एम0 बरेली थे? आपने तो नौजवान कार्यकर्त्ताओं को जेल में जाकर बहुत उत्पीड़ित कराया था। गंगापार ले जाकर बालू डलवायी थी, नाखून नोंचने जैसे वहशीपन के कार्य कराये थे आप अभी तक कलेक्टर कैसे बने हुए हैं? आप यहाँ से लखनऊ सचिवालय जाने की तैयारी कर लीजिए, दो दिन में सूचना आप तक आ जायेगी।** ''श्री माताप्रसाद का पसीना छूट रहा था हाथ–पैर कांप रहे थे। एक राष्ट्रीय नेता को सारा घटनाक्रम याद था। उन्होंने नेता विरोधी दल के रूप में यह बरेली की घटना उ0प्र0 विधानसभा में भी उठाई थी। इस वाकया को मंच के पास खड़े श्री रमेश कांत लवानियाँ, श्री भगवान शंकर रावत, श्री शिवप्रसाद गुप्ता, राजा रिपुदमन सिंह (भदावर), श्री हरिमोहन चतुर्वेदी, श्री अनुराग शुक्ला आदि स्थानीय नेता आश्चर्यचकित होकर देख रहे थे।

पुनः संतुलित होकर चौ0 चरण सिंह मंच पर पहुँचे और एक घण्टा बीस मिनट भाषण दिया। दो लाख की भीड़ को यह कहकर प्रभावित किया कि **''आपातकाल के दुर्दिनों का अपराधी एक सरकारी**

मुलाजिम आपके शहर में डी0एम0 तैनात है। मैं दिल्ली लौटते ही इसको निलम्बित कर दूँगा, आप सहमत हैं?'' इस निर्णय से भीड़ से जबर्दस्त जिंदावाद की आवाजें उठीं। क्योंकि उस जिलाधिकारी के कारनामे सभी को अखबारों के द्वारा जानकारी में आ गये थे। इस जनसभा में जनमत बन गया कि चरणसिंह तो फौलादी नेता हैं। ठीक सरदार पटेल जैसे मजबूत, अडिग, आत्मविश्वास से परिपूर्ण। आगरा में इस तकरीर का इतना प्रभाव पड़ा कि जिले की सभी विधानसभा सीटें जनतापार्टी जीत गई।

फोटो गैलरी

चौ॰ चरण सिंह को प्रधानमंत्री पद की शपथ दिलाते म॰ नीलम संजीव रेड्डी, राष्ट्रपति, भारत सरकार

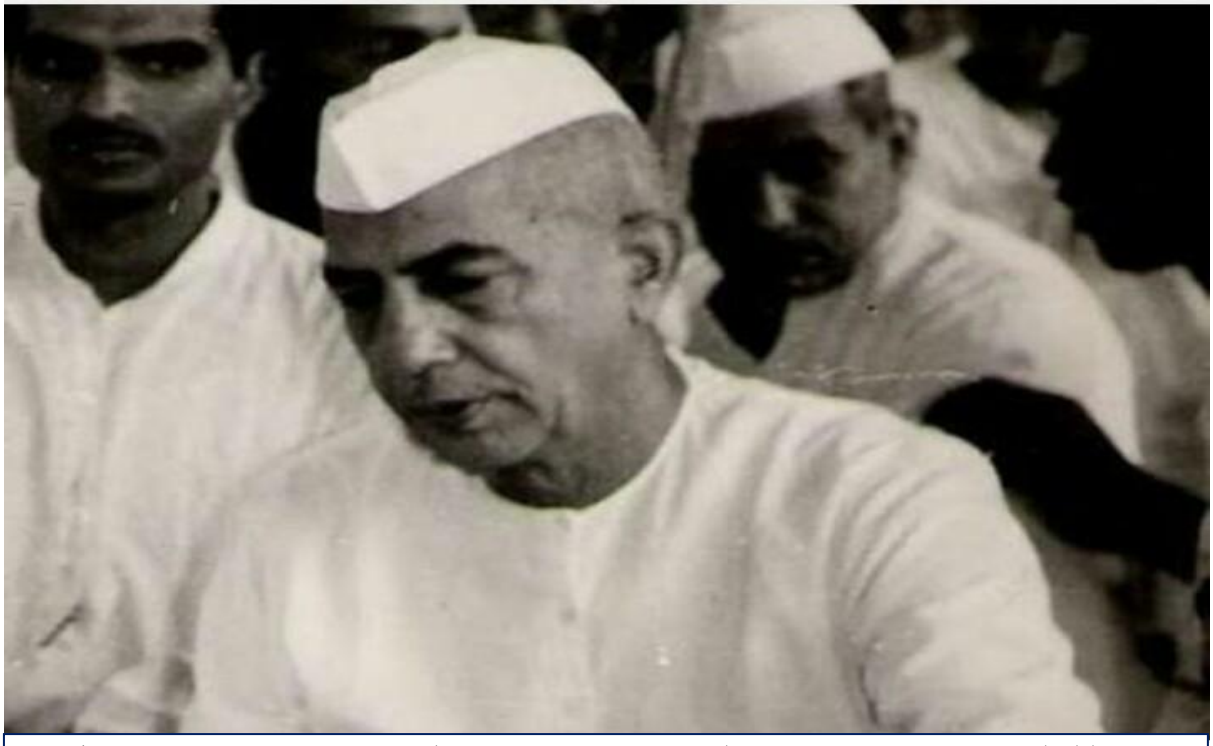

चौ॰ चरण सिंह प्रधानमंत्री पद का मनोनयन पत्र म॰ नीलम संजीव रेड्डी, राष्ट्रपति, भारत सरकार से लेते हुए

राष्ट्रपति नीलम संजीव रेड्डी के साथ मनोनीत प्रधानमंत्री चौ॰ चरण सिंह

चौ॰ चरण सिंह (उपप्रधानमंत्री) वित्तमंत्री पद की शपथ लेते हुए द्वारा–उपराष्ट्रपति बी॰डी॰ जत्ती
(26 जुलाई, 1979)

जनता पार्टी सरकार में दोबारा शपथ लेने के बाद चौ॰ चरण सिंह उपप्रधानमंत्री (वित्तमंत्री) एवं बाबू जगजीवनराम उपप्रधानमंत्री (रक्षामंत्री) गले मिलते हुए

चौ॰ चरण सिंह प्रधानमंत्री लालकिला मैदान में ध्वजारोहण हेतु जाते हुए–साथ हैं श्रीमती गायत्री देवी सांसद एवं श्री के॰ सी॰ त्यागी

चौ॰ चरण सिंह गृहमंत्री भारत सरकार–सलामी लेते हुए

आचार्य कृपलानी को सम्मानित करते गृहमंत्री चौ॰ चरण सिंह गृहमंत्री, भारत सरकार

चौ॰ चरण सिंह प्रधानमंत्री को सम्मानित करते श्री दलाईलामा

चौ॰ चरण सिंह ग्रहमंत्री भारत सरकार सूरज कुण्ड (हरियाणा) में विश्रामकाल में

उ॰पूर्व के विभिन्न क्षेत्रों के आदिवासियों के बीच प्रधानमंत्री चौ॰ चरण सिंह (A)

उ॰पूर्व के विभिन्न क्षेत्रों के आदिवासियों के बीच प्रधानमंत्री चौ॰ चरण सिंह (B)

चौ॰ चरण सिंह (पूर्वप्रधानमंत्री) सर्किट हाउस, आगरा में पत्रकार वार्ता करते हुए साथ हैं श्री मुलायम सिंह यादव प्रदेश अध्यक्ष लोकदल, डा॰ के॰एस॰ राना (कार्य॰ अध्यक्ष युवा लोकदल) अनिल अग्रवाल (सम्पादक अमरउजाला) नेवल स्मिथ (पी॰टी॰आई॰), नरेश माथुर (टाइम्स ग्रुप) आदि वरिष्ठ पत्रकार (फोटो 1985)

चौ॰ चरण सिंह (पूर्वप्रधानमंत्री) पुस्तक के विमोचन समारोह में बोलते हुए मंचासीन दायें से श्री चन्द्रशेखर, श्री अटल बिहारी वाजपेयी, श्री सतपाल मलिक एवं लेखक डा॰ के॰एस॰ राना (बायें)